

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178873

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/K96G Accession No. G.H. 441
Author कुप्रिन, अलेक्जेंडर। Vol. II
Title गाँधीवादी का कहना 1940

This book should be returned on or before the date
last marked below

‘इंस-पुस्तक’ के अंतर्गत चौथी किताब

अलौकजैण्डर कुप्रिन की अमर कृति

“YAMA : THE PIT” का हिन्दी रूपान्तर

गाड़ीवालों का कटरा

भाग दूसरा

अनुवादक : चंद्रभाल जौहरी

—संपादक—

श्रीपतराय



वाराणसी

सरस्वती प्रेस

प्रथम संस्करण

२०००

नवम्बर, १९४०

मूल्य—आठ आना

सरस्वती-प्रेस, बनारस कैण्ट में श्रीपतराय द्वारा मुद्रित

गाड़ीवालों का कटर

[भाग दूसरा]

पहला अध्याय

आज दम बरस बीत जाने के बाद भी, कटरे के पुराने निवासी उस साल की याद करते हैं जिसमें बहुत-सी दुखदायक, गन्दी तथा खँख्वार घटनाएँ हुई थीं जो छोटे-मोटे मामूली टण्टों से बढ़ते-बढ़ते यहाँ तक पहुँची थी कि सरकार को मजबूर होकर वेश्याओं का यह घौमला ही नष्ट कर देना पड़ा था जिसको कानूनी रूप देकर सरकार ने ही कभी बनाया था। कटरे से चकले के हटा देने के बाद यहाँ की बचत-खुचत अस्पतालों, जेलों और शहरों के विभिन्न मुहल्लों में बिखर गई। आज तक बची-खुची चकलों की मालकिने, जो अपाहिज और ज़िन्दा हैं, पुरानी खालाएँ शरीर और कण्ठ की मोटी, बूढ़े बुलडाग की तरह दीखनेवाली, चकलों के इस अचानक विनाश को दुःख, कम्पन और कठिन परेशानी से याद करती हैं।

बोग उलटने पर उसमें से जैसे आलू निकलते हैं उसी तरह चकलों के कारण कटरे में भगड़े, उत्पात, डकैतियाँ, बीमारियाँ और क़त्ल होने लगे। ऐसा लगता था कि दोष उनमें किसी का भी नहीं है। यह घटनाएँ आपसे आप अक्सर होने लगीं और दिन पर दिन अधिक

बढ़ने और पैलने लगीं जैसे बर्फ़ का एक छोटा-सा टुकड़ा किसी शैतान लड़के की लात खाकर लुढ़कना शुरू करता है और लुढ़कते-लुढ़कते अपने साथ और बर्फ़ को लपेटता हुआ बढ़ता जाता है और बढ़ते-बढ़ते आदमी के क्रोध से भी बड़ा हो जाता है और फिर अन्त में ज़रा-सा धक्का खाकर पहाड़ की तरह खाई में लुढ़कता हुआ जा गिरता है। चकलों की मालकिनें और खालाएँ भाग्य क्या होता है, नहीं जानती थीं। मगर अन्दर ही अन्दर अपनी आत्माओं में उन्हें इस भयङ्कर वर्ष की घटनाओं से, भाग्य भी क्या बुरी बला है, इसका आभास होने लगा था। सच तो यह है कि जीवन में हर जगह, जहाँ भी लोग एक हित, खून और नाते-रिश्ते के अथवा एक व्यवसाय के लाभ के बन्धनों से एक छोटा गिरोह बनाकर रहते हैं, वहाँ देखने में आता है ऐसी घटाटोप घटनाएँ एक दिन अवश्य होती हैं। भाग्यचक्र अपना पहिया वहाँ अवश्य घुमाता है; अलग रहनेवालों कुटुम्बों पर भी भाग्य का प्रभाव होता है—यकायक घर का कोई आदमी और स्नेही रोग अथवा मृत्यु का ग्रास हो जाता है और फिर एक के बाद दूसरे घर के स्नेही मरने लगते हैं और सारा कुटुम्ब चौपट हो जाता है, जैसी कि पुरानी कहावत है कि मुसीबत आती है तो अकेली नहीं आती। भाग्यचक्र का यह पहिया धार्मिक विहारों, बैंकों, सरकारी विभागों, फौजी दस्तों, शिक्षालयों और उन सभी संस्थाओं पर भी भूमता है जहाँ वर्षों तक, पीढ़ियों दर पीढ़ियों तक, एक-सा निर्विघ्न जीवन एक उथली नदी के प्रवाह की तरह बहता है और फिर यकायक किसी एक साधारण-सी घटना के बाद, तबादले, तरकियाँ, तनज्जुलियाँ, बरखास्तगी, घाटे, बीमारियाँ आदि शुरू हो जाती हैं। समाज के सदस्य, मानो एक दूसरे से षड़यन्त्र करके, मरने, पागल होने, चोरी करने, कत्ल करने और फाँसियों पर चढ़ने लगते हैं। जगहों पर जगहें खाली होने लगती हैं; तरकियों पर तरकियाँ होती हैं, नये-नये

आदमी भरने लगते हैं, और साल दो साल बाद पुराने आदमियों में से अपनी जगह पर कोई नहीं दीखता जिससे संस्थाएँ यदि बिल्कुल मिट ही नहीं जातीं तो सर्वथा नवीन तो हो ही जातीं हैं। यही भाग्य-चक्र बड़ी-बड़ी सामाजिक और सार्वभौमिक संस्थाओं—शहरों, साम्राज्यों, जातियों, देशों और शायद दूसरी दुनियाओं पर भी घूमता रहता है।

इस भाग्यचक्र ने अचानक कटरे के तमाम चकलों को यकायक नष्ट कर डाला। शोरगुल से पूर्ण चकलों के स्थान में कटरे में अब छोटे किसानों, कसाइयों, तारतारों और सूअर पालनेवाले भङ्गियों की एक शान्तिपूर्ण छोटी बस्ती दीखती है। यहाँ के रहनेवालों की अजीब पर, पुरानी खराब याद को भुला देने के ख्याल से कटरे का नाम तक बदलकर यहाँ के एक बड़े परचूनिया दूकानदार के नाम पर, गोलूबोबका रख दिया गया है।

कटरे की तबाही गर्मियों के उस मेले से शुरू हुई थी जो इस साल और सालों से कहीं अधिक बड़ा और धूमधाम से हुआ था। मेले में इस साल बेहद भीड़ और बहुत विक्री हुई थी। उसके कई कारण थे। एक तो पास में शक्कर के तीन कारखाने खुल गये थे; दूसरे इस साल गेहूँ और चुकन्दर की फ़सलें बहुत अच्छी हुई थीं, तीसरे बिजली की रेल और नहर भी इधर से निकल गई थी; चौथे सात सौ पचास फ़र्लाङ्ग लम्बी सड़कें इस इलाके में बन रहीं थीं जिन पर हजारों मजदूर लग रहे थे और पाँचवाँ सबसे मुख्य कारण यह था कि इस शहर के सभी व्यापारियों और नागरिकों को अपनी-अपनी इमारतें बनाने का बुखार सा चढ़ आया था। शहर के बाहर चारों तरफ़ ईंट और चूने के भट्टे ही भट्टे दीखते थे। सरकार की तरफ़ से एक दिखावटी बड़ी-सी खेतीबाड़ी का फ़ार्म भी खुल गया था। स्टीमर चलानेवाली दो नई कम्पनियाँ और खुल गई थीं और उन दोनों में आपस में और पुरानी तमाम कम्पनियों में माल और यात्री ले जाने में ज़ोरों की

होड़ लग गई थी। होड़ में यहाँ तक नौबत पहुँची कि तीसरे दर्जे का पचहत्तर रुपये का फी आदमी का किराया पाँच रुपये, तीन रुपये और आखिर में एक रुपया तक आ गया। एक कम्पनी ने थककर यह समझते हुए कि दिवाला तो निकलेगा ही, मुसाफ़िरो को मुफ़्त ले जाना शुरू कर दिया। इसके जवाब में एक दूसरी कम्पनी ने मुफ़्त मुसाफ़िरी के साथ-साथ हर आदमी को एक डबल रोटी भी मुफ़्त कर दी, मगर इस शहर का सबसे भारी काम यहाँ के नये बन्दरगाह का बनना था जिस पर असंख्य आदमी काम कर रहे थे और खर्च तो ईश्वर ही जाने कितना हो रहा था।

इस सबके साथ ही, इस साल इस शहर के नज़दीक के रूस के सबसे मशहूर और सम्पन्न धार्मिक विहार की हजारवीं वर्षगाँठ भी मनाई गई थी। रूस देश के सभी कोनों से, साइबेरिया से, बर्फ़ से जमे हुए उत्तरी समुद्र के किनारों से और दक्षिण के आखिरी छोर में काले सागर और कौसियन सागर के किनारों से लाखों यात्रियों की भीड़ विहार में बनी हुई साधु-सन्तों की क़ब्रों और समाधियों के दर्शनों के लिए उमड़ आई थी। विहार में चालीस हजार आदमियों को टिकाने और थोड़ा-बहुत रोज़ खिलाने का प्रबन्ध किया गया था, मगर लाखों आदमी विहार के वृहत् आँगनों और बरामदों में लकड़ी के लट्टों की तरह एक दूसरे से सट-सटकर पड़ रहे थे।

यह ग्रीष्म ऋतु इस शहरवालों के लिए अलिफ़लैला की कहानी बन गई। शहर में जितनी आबादी थी उसके चौगुने बाहर से दर्शक आये थे। मैमार, बढई, रंगसाज़, इन्जीनियर, कारीगर, विदेशी, किसान, दलाल, विचित्र और ख़तरनाक व्यापारी, मस्ज़ाह और कछवाहे, बेकार बदमाश, तमाशाबीन, चोर और गिरहकट—सभी तरह के आदमियों की भीड़ थी। शहर के किसी होटल या सराय का कोई गन्दा से गन्दा कमरा भी खाली नहीं बचा था। रहने के मकानों के इतने भाड़े चढ़ गये थे कि उनको सुनकर सिर

चकराता था। सट्टे का बाज़ार इतना गर्म था जैसा आज तक नहीं हुआ था। हज़ारों के वारे-न्यारे हो गये और लाखों रुपया हाथों-हाथ बहता हुआ एक के पास से दूसरे और दूसरे से तीसरे के पास निकल गया। घण्टे भर में असंख्य धन किसी के हाथ आ गया और बहुत-सी पुरानी पेड़ियों का देखते देखते दिवाला पिट गया। कल जो लखपती थे आज वे भिखारी हो गये। मामूली से मामूली मज़दूर तक ने इस बहती हुई सोने की गंगा में स्नान किया। खिदमतगार, ठेलेवाले, पल्लेदार, कुली और बेलदार आज तक इस ग्रीष्म की रोज़ाना कमाई को याद करते हैं। बन्दरगाह पर नावों से आनेवाले बाबुओं को ढोनेवालों ने चार-चार पाँच-पाँच रुपए रोज़ाना कमाये और यह सारी की सारी बाहर से आनेवाली आदमियों की भीड़, आसानी से कमाया रुपया पाकर और इस पुराने शहर के सौन्दर्य को देखकर, जो ग्रीष्म ऋतु के खिले हुए फूलों से सुगन्धित वायु में और भी बढ़ गया था, यह हज़ारों और लाखों मनुष्य शरीरधारी कामी पशुओं की असन्तुष्ट भीड़, हज़ारों और लाखों बुद्धियों और मतों को एक करके 'स्त्रियाँ' माँगती थीं। अस्तु।

एक महीने में तरह तरह के तमाशे शहर में खड़े हो गये। नाटक, रास, नौटंकी, शराबघर और होटल शहर के कोने-कोने में, और शहर बाहर दूर तक, दिखाई देने लगे। हर सड़क के कोने पर ऐसे शराबघर और दूकाने खुल गईं जिनमें बाहर तो सौदा बिकता था और परदे के पीछे भीतर औरतें मिलती थीं। बहुत से माताओं और पिताओं को अपने पुत्रों के इस अभागी ग्रीष्म ऋतु से भयंकर और शर्मनाक बीमारियाँ लेकर घर लौटने पर आज तक खेद है। हज़ारों गृहस्थों को जो इस मेले में आये थे हज़ारों नौकरानियों की ज़रूरत थी जिसमें अड़ोस-पड़ोस के सैकड़ों गाँवों से हज़ारों छोकरियाँ मेले में आई थीं। वेश्याओं की माँग भी बेहद बढ़ गई थी, अतएव बारसा, लोड्ज, ओडेसा, रीगा, मॉस्को और सेण्टपीटर्सबर्ग, यहाँ

तक कि अड़ोस-पड़ोस के देशों तक से वेश्याएँ इस शहर में आगई थीं । मामूली रूसी वेश्याएँ ही नहीं बल्कि फ्रान्स, वियाना, जर्मनी और हंगरी की छट्टी हुई वेश्याएँ भी आई थीं । मुफ्त की कमाई का खुलकर फाग हो रहा था । ऐसा लगता था मानो भगवान् कुबेर ने एक सोने का दरिया बहा दिया है जिसके भँवर में पड़कर यह शहर नाच उठा है । चोरियाँ और कल्ल भी बहुत से हुए । बहुत-सी पुलिस इकट्ठी हुई थी, मगर वह परेशान होकर बुद्धिहीन हो गई थी । अथवा यह भी कहा जा सकता है कि काफ़ी रिश्तों से अपना अजगर का-सा पेट भर कर वह उसी जन्तु की तरह सन्तुष्ट होकर ऊँघने लगी थी ; कल्ल साधारण बात हो गई थी । दिन-दहाड़े कल्ल होते थे । कोई गुण्डा अचानक आकर सड़क पर पूछता था, 'तुम्हारा क्या नाम है ?' 'फेडरोव ।' 'ओहो, फेडरोव ? अच्छा फेडरोव, यह लो !' और यह कहकर वह चाकू उसके पेट में भोंक देता । इन लोगों का शहर में 'पेटकट' नाम पड़ गया था और इन लोगों के बड़े-बड़े मशहूर आदमी इस मेले में आये हुए थे जिनका नाम शहर के अखबार बड़े अभिमान से छापते थे ।

रात-दिन इस उन्मत्त शहर की सड़कों पर भीड़ खड़ी हुई, चलती हुई और चिल्लाती हुई दीखती थी मानो कहीं आग लग गई हो । कटरे के चकलों में इन दिनों जो हाल था उसका वर्णन करना असम्भव है । बावजूद इसके कि चकलों की मालकिनों ने बहुत-सी नई छोकरियाँ रखली थीं और दाम भी तिगुने कर दिये मगर फिर भी बेचारी इन टूटी छोकरियों को उन्मत्त और शराबखोर जतता की, जो ठिकरियों की तरह रुपया फेंक रही थी, माँगे पूरी करना असम्भव हो गया था । चकलों के भरे हुए बैठकखानों में सात, आठ और कभी-कभी तो दस-दस आदमी तक एक-एक छोकरी के इन्तज़ार में बैठे रहते थे । सचमुच यह मेले का ज़माना बड़ा पागलपन का और प्रलयकारी ज़माना इस शहर के लिए हो गया !

मगर इसी समय से इस शहर के चकलों की अधोगति भी शुरू हुई जिसका परिणाम यह हुआ कि वे अन्त में नष्ट ही हो गये । कटरे के चकलों के नष्ट हो जाने पर हमारी परिचित मोटी और तगड़ी, पीले आँखोंवाली अन्ना मारकोवना का चकला भी नष्ट हो गया ।

दूसरा अध्याय

सवारी गाड़ी मजे से दक्षिण से उत्तर की तरफ, गेहूँ के सुनहले खेतों और बाँस के सुन्दर बगीचों को पार करती हुई और चमकती हुई नदियों के लोहे के पुलों के ऊपर से खड़खड़ करके जाती हुई और अपने पीछे धुँएँ के मँडराते हुए बादल छोड़ती हुई, चली जा रही थी।

दूसरे दरजे के डिब्बे में खिड़कियाँ खुली होने पर भी बड़ी गरमी मालूम होती थी। गन्धक की मँहक वाले धुँएँ की गन्ध से गले में खाँसी उठती थी। गाड़ी के हिलने-जुलने और गरमी से सभी मुसाफिर बिल्कुल थक रहे थे ; केवल एक हँसोड़े, फुर्तीले, चपल यहूदी पर जो बड़ी अच्छी पोशाक में था और बड़ा मिलनसार, बातूनी और सबको सहायता देने के लिए उत्सुक था, सफ़र का कोई असर नहीं दीखता था। उसके साथ एक जवान स्त्री भी सफ़र कर रही थी जिसको देखकर यह स्पष्ट हो जाता था कि वे दोनों नव-विवाहित थे। ज़रा-ज़रा-सी पति की स्नेह-पूर्ण बातों पर उसका चेहरा फूल की तरह खिल उठता था। जब-जब वह अपनी आँखें उठाकर अपने पति की तरफ देखती थी तब उसकी आँखें तारों की तरह चमक उठती थीं और उनमें जल छलक आता

था। उसका चेहरा ऐसा सुन्दर दीखता था जैसा कि प्रेम में डूबी हुई यहूदी लड़कियों ही का होता है—गुलाबी होंठ भोलेपन से गोल-गोल और आँखें इतनी काली कि उनमें पुतली का ढूँढना भी मुश्किल।

डिब्बे के दूसरे तीन मुसाफिरों की ज़रा भी चिन्ता न करते हुए वह बार-बार अपनी प्रेमिका को चूमता था—गोकि बड़े भोंड़े ढङ्ग से। उस मालिक की लापरवाही से जो अपनी चीज़ पर अपना पूरा अधिकार समझता है, उस प्रेमी के विशेष अहंकार से जो मानो दुनिया से कहता है, 'देखो, मैं कैसा खुश हूँ। तुम भी इससे खुश हो न ?'—वह कभी अपनी नव-वधू की टाँगें सहलाता था, कभी उसके गालों की चुटकियाँ लेता था, कभी अपनी कड़ी मूँछों से उसकी गर्दन गुदगुदाता था, मगर इस सब खुशी की चमक-दमक के साथ-साथ ही कोई फ़िक्र भी उसे सता रही थी जो उसके बार-बार आँखें मीँचने, उसके होठों के मुड़ने, उसकी मुड़ी हुई चौखुरी ठुड़ी की कठिन रेखाओं से जो बाहर की तरफ निकली हुई थीं और जिनमें एक छोटा-सा बहुत मुश्किल से दीखनेवाला गड्ढा था, साफ़ जाहिर होती थी।

इस प्रेमी जोड़े के सामने की सीट में तीन दूसरे मुसाफिर बैठे थे। एक तो कोई पतला, स्वच्छ, बूढ़ा पेन्शनयाप्तता जनरल था जिसके बालों में पोमेड लगी थी और अलकें बाहर की तरफ कढ़ी हुई कन-पटियों पर लटक रही थीं। दूसरा एक कोई मोटा-तगड़ा ज़मींदार था जिसने अपना कड़ा कालर गर्दन में से निकालकर अपने पास रख लिया मगर फिर भी गरमी से हाँफ रहा था और बार-बार एक भीगे रूमाल से मुँह पर पँखा झलता था। तीसरा एक जवान फौजी अफसर था। साइमन याकोब्लेविश नामक नौजवान अपना नाम दूसरे मुसाफिरों को बता चुका था—लगातार बातों से यह मुसाफिर थककर चिढ़ उठे थे, जैसे कि गरमी में बन्द कमरे की खिड़कियों के शीशों पर

लगातार भिनभिन् करनेवाली मक्खियों से चिढ़ होने लगती है। मगर वह उन्हें खुश करना जानता था। वह उन्हें जादू के चमत्कार दिखाने लगा और यहूदी चुटकुले सुनाने लगा जिनका अपना मज़ाक ही अलग होता है। जब उसकी स्त्री बाहर प्लेटफार्म पर हवा खाने चली जाती थी तब वह ऐसे-ऐसे चुटकुले सुनाने लगता था कि जनरल के हँसी से दाँत बाहर निकल आते थे, ज़मींदार अपनी तोंद हिलाता हुआ हिनहिना उठता था और जवान पौजी अफ़सर जिसको अपनी पढ़ाई ख़त्म किये एक साल ही हुआ था और जिसका चेहरा छोक़ों की तरह चिकना था, अपनी हँसी न रोक सकने के कारण एक तरफ़ को मुँह फेर लेता था जिससे उमका शर्म से लाल चेहरा कहीं उसके पड़ोसी न देख लें।

साइमन की पत्नी अपने पति से बड़ा भोला और स्नेह-पूर्ण बर्ताव कर रही थी। अपने रूमाल से वह साइमन के मुँह का पसीना पोंछती और हवा झलती थी और उमकी गर्दन में बँधे रूमाल को बारबार ठीक करती थी। उसके ऐसा करने पर साइमन का चेहरा एक वड़प्पन और मूर्खतापूर्ण आत्माभिमान के भाव से ऐसा बन जाता था कि उसको देखकर हँसी आती थी।

‘क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ’ छोटे बदन के जनरल ने नम्रता से ख़खारते हुए साइमन से पूछा, ‘कि जनाब क्या काम करने हैं?’

‘हे भगवान्!’ साइमन ने प्रसन्नता से बड़ी बेतकलुफ़ी से कहना शुरू किया, ‘ग़रीब यहूदियों के लिए आजकल काम ही क्या रह गया है? धूम-फिरकर थोड़ा-बहुत बेचवाच लेता हूँ और कुछ दलाली भी करता हूँ। इस वक्त मैं किसी धन्ये की चिन्ता नहीं कर रहा हूँ क्योंकि मैं अपनी सुहागरात—सरोच्चा, शर्म से लाल मत हुई जाओ, सुहागरात साल में तीन दफ़ा नहीं आती है—मनाने जा रहा हूँ। मगर लौटकर मुझे बहुत-सा सफ़र करना पड़ेगा और माल बेचना होगा। इस वक्त

तो मैं सरोच्का को लेकर अगले शहर जा रहा हूँ। वहाँ इनके नाते-रिश्तेदारों से मिलना-जुलना है और उसके बाद फिर हम लोग सफ़र शुरू कर देंगे। पहले सफ़र पर मैं अपनी स्त्री को लेकर जा रहा हूँ... एक प्रकार की सुहाग यात्रा है। मैं सिदरिस और दूसरी दो अंग्रेज़ी पेड़ियों का माल बेचता हूँ। आपको नमूने दिखाऊँ ? देखिये, मेरे पास ये नमूने...हैं' कहते हुए उसने जल्दी से कपड़े के नमूनों की किताबें अपने बेग में से निकालकर बड़ी होशियारी से जनरल को दिखानी शुरू कर दीं, 'देखिये, कैसे सुन्दर कपड़े हैं ! किसी भी विदेशी माल से यह किसी तरह कम नहीं हैं। देखिये, यह रूसी कपड़ा है और यह अंग्रेज़ी। देखिये, हाथ में लेकर देखिये ! दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं है। रूसी कपड़ा किसी तरह अंग्रेज़ी कपड़े से कम नहीं है। देखिये, इससे हमारा देश की उन्नति का पता भी चलता है। रूस को यूरोपवाले व्यर्थ में असम्य देश समझते हैं।

'अपने नाते-रिश्तेदारों से मिल-मिलाकर हम लोग मेला देखने जायेंगे, इधर-उधर फिरेंगे, ज़रा मज़ा देखेंगे और जहाज़ में बैठकर बौलगा पर यात्रा करते हुए ज़ारेज़ीन जाएँगे और वहाँ से काले-सागर में होते हुए अपने वतन ओडेसा पहुँच जाएँगे।'

'बड़ा अच्छा सफ़र है,' जवान फौजी अफसर ने शर्माते हुए कहा।

'जी हाँ, अच्छा सफ़र है,' साइमन ने उसका समर्थन करते हुए कहा, 'मगर जहाँ गुलाब का फूल होता है वहाँ काँटे भी होते हैं। सौदा बेचने का काम बड़ा कठिन है। बहुत जानकारी की ज़रूरत होती है—अपने माल की ही जानकारी नहीं, बल्कि इसकी जानकारी की भी ज़रूरत होती है कि उसको बेचने के लिए क्या और कैसे कहना चाहिये। अर्थात् आदमी की पहिचान की भी ज़रूरत होती है। ग्राहक को खरीदने की ज़रा भी इच्छा न होने पर भी बेचनेवाले को हाथी की तरह अपने काम पर लगा ही रहना चाहिये और ग्राहक को हर तरह से

अपने माल की विशेषताएँ समझानी चाहिये, जब तक कि वह भी उन्हें मान न ले। मैं सिर्फ ऐसा ही माल बेचता हूँ जिसके बारे में किसी क्रिस्म का शक नहीं होता है। खराब माल के लिए मुझे कोई लाखों रुपया क्यों न दे तो भी मैं नहीं छुड़ूँगा। जहाँ-जहाँ जिस-जिस व्यापारी के यहाँ मेरा माल बिकता है वहाँ उससे मेरा नाम लेकर पूछिये तो वह फौरन आपसे कहेगा, 'साइमन याकोब्लेविश का माल बिल्कुल टकसाली सोना होता है। साइमन याकोब्लेविश हीरा आदमी है। यह कहते हुए साइमन ने कई और बक्स खोलकर पतलून लटकाने के पीते और बटन दिखाते हुए कहा, 'देखिये, यह माल भी मैं बेचता हूँ। हर दूकान पर इस माल की आपको तारीफ़ ही सुनने को मिलेगी।

‘जब किसी शहर में बहुत से माल बेचनेवाले आ चुकते हैं तो खरीदार बड़ी परेशानी में पड़ जाता है। वे बेचारे ग्राहकों की जान ले लेते हैं—उनके पीछे पड़ जाते हैं। ग्राहक हाथ हिला-हिलाकर उन्हें अपने पास से भगाते हैं मगर वे उनकी एक नहीं सुनते। मैं इसको तुच्छता समझता हूँ। मैं ऐसा कभी नहीं करता। मेरा नाम साइमन है! मैं अपने ग्राहक को अपने माल की विशेषताएँ समझा सकता हूँ। हाँ, ऐसी हालत में कठिनाई ज़रूर होती है जब कि एक ही साथ दो आदमी उसी क्रिस्म का माल बेचने एक ही शहर में आ जाते हैं। खासकर ऐसी दशा में जब कि दूसरा माल बेचनेवाला लुच्चा हो और अपना माल भी न बेच सके और दूसरे का काम भी बिगाड़े। वे हर क्रिस्म के तरीकों को इस्तेमाल करते हैं...शराब पिलाते हैं...धोखे में डाल कर माल बेच देते हैं। मगर यह उनका लुच्चापन है...कमीनापन है! सच्चा व्यापार करना बड़ा मुश्किल काम है। देखिये, मैं एक और माल भी बेचता हूँ—यह देखिये, मसनूई दाँत और आँखें। मगर इसमें कुछ मिलता नहीं है। मैं इसे छोड़ दूँगा। मैं यह सारा धन्धा ही छोड़ देने का विचार कर रहा हूँ क्योंकि जब तक आदमी जवान और अकेला

होता है तभी तक ऐसे धन्धे ठीक होते हैं जिनमें तितली की तरह मारा-मारा फिरना होता है। विवाह हो जाने के बाद—घर-गृहस्थी और शायद कई बाल-बच्चे हो जाने के बाद, यह कहते हुए उसने अपनी स्त्री के घुटने थपथपाये जिससे उसका मुँह शर्म से लाल होकर खास तौर पर सुन्दर दीखने लगा—‘ऐसे धन्धे ठीक नहीं होते। भगवान् ने हम यहूदियों को दुर्भाग्य से खासकर बहुत से बच्चे पैदा करने की शक्ति दी है। ऐसी हालत में अपना कोई निजी धन्धा करके एक स्थान पर ही रहना ठीक है—जहाँ अपना एक भोंपड़ा हो, अपना सोने का कमरा हो, अपना फर्नीचर हो, अपना रसोई घर हो...क्यों श्रीमान्, ठीक है न?’

‘हाँ...हाँ...ठीक कहते हैं आप! ज़रूर, ज़रूर!’ जनरल ने हाँ में हाँ मिलाते हुए सिर हिलाया।

‘और सरोच्का के साथ-साथ मुझे थोड़ा-सा धन भी दहेज में मिल गया है। थोड़े-से मेरा मतलब है इतना धन जिसकी तरफ़ कोई करोड़-पति निगाह उठाकर भी देखना पसन्द नहीं करेगा, पर मेरे हाथ में वह थोड़ा-सा धन तो एक बड़ी पूँजी का काम दे रहा है। मेरे पास अपनी कमाई का बचाया हुआ रुपया भी है और जिन पेड़ियों से मेरा परिचय है वे भी मुझे उधार दे देंगी। ईश्वर की कृपा से हमें इससे अपनी साधारण दाल-रोटी मिलती रहेगी और पवित्र इतवार को थोड़ा बहुत हलुआ-पूरी भी।’

‘हाँ, हाँ, यह बड़ा अच्छा रहेगा!’ ज़मींदार ने हाँफते हुए कहा।

‘हम लोग ‘साइमन एण्ड सन्स’ के नाम से अपनी एक निजी पेढ़ी खोल लेंगे। या ‘सिरोच्का एण्ड सन्स’ और मुझे आशा है श्रीमान् हमारे यहाँ से ज़रूर माल खरीदा करेंगे। जब आप साइमन एण्ड सन्स की मेरी दुकान पर तख्ती लगी देखेंगे तब आपको फौरन याद हो आयगी कि आप एक नौजवान से रेल में मिले थे जो प्रेम और खुशी से पागल हो रहा था।’

‘जरूर ! जरूर !’ जमींदार बोला ।

साइमन फौरन उसकी तरफ मुड़कर कहने लगा, ‘मैं जायदाद की दलाली भी करता हूँ—जायदाद खरीदने-बेचने और गिरवी रखने में काफ़ी होशियार हूँ । शायद मैं आपकी कुछ सेवा कर सकूँ । इस धन्वे में मुझसे अधिक होशियार आदमी आपको दूसरा नहीं मिलेगा । कभी ज़रूरत हो तो इस खादिम को याद कीजियेगा ।’ कहते हुए उसने अपना कार्ड ज़िमींदार को दिया और फिर एक-एक कार्ड अपने दूसरे पड़ोसियों को भी दिये ।

ज़मींदार ने अपनी जेब में से निकालकर अपना कार्ड भी उसे दिया ।

‘जोसेफ आईवानीविश वेन्जीनोव्स्की’ साइमन ने कार्ड लेकर ज़ोर से पढ़ते हुए कहा, ‘आपसे मिलकर बड़ी खुशी मुझे हुई है । ज़रूरत पड़ने पर याद रखियेगा...’

‘ज़रूर । शायद जल्द ही ज़रूरत पड़े...’ जमींदार ने सोचते हुए कहा, ‘भाग्य से ही शायद हम दोनों यहाँ मिल गये हैं ! मैं अपना एक मकान बेचने के लिए ही इस वक़्त जा रहा हूँ । अगर आप उसे बेच सकते हों तो आप मुझसे शहर में मिलें । मैं हमेशा ग्राण्ड होटल में ठहरता हूँ । शायद मेरा आपका सौदा पट जाय ।’

‘ज़रूर पट जायगा, मेरा आपका सौदा ज़रूर पट जायगा, मेरे प्यारे दोस्त ! मुझे पूरा विश्वास है ।’ कहते हुए, खुशी से साइमन ने ज़मींदार का घुटना अपनी उङ्गलियों से थपथपाया और बोला, ‘याद रखिये साइमन ने आपका काम हाथ में ले लिया तो आप ज़िन्दगी भर उसे याद करेंगे—उसी तरह जिस तरह आप अपने बाप को याद करते हैं, समझे !’

आध घण्टे के बाद साइमन और नौजवान फ़ौजी अफ़सर प्लेटफ़ार्म पर गाड़ी के डिब्बे के पास खड़े हुए सिगरेट पी रहे थे ।

‘क्या आप अक्सर इस शहर में आया करते हैं, श्रीमान ?’ साहमन ने उससे पूछा ।

‘नहीं, पहली बार ही जा रहा हूँ—देखिये तो ! हमारी फौज का पड़ाव चेरनोबॉब में है । मैं मास्को में पैदा हुआ था ।’

‘अरे ! आप इतनी दूर कैसे आ गये ?’

‘दाना-पानी ले आया ! मैं जब फौज में दाखिल हुआ तो और कहीं जगह खाली नहीं थी ।’

‘मगर चेरनोबॉब तो बड़ी रूखी जगह है—इस प्रान्त की सबसे खराब जगह वही है ।’

‘हाँ, दाना-पानी है ! क्या किया जाय !’

‘तो आप शायद शहर महज़ तफ़रीह के लिए ही जा रहे हैं ?’

‘जी हाँ ! मैं दो तीन दिन शहर में ठहरूँगा । असल में मैं मास्को जा रहा हूँ । मैंने दो महीने की छुट्टी ली है । सोचा, रास्ते में यह शहर देखता चलूँ । सुनते हैं बड़ा सुन्दर शहर है !’

‘ओह, क्या कहने हैं ! गज़ब का शहर है ! बिल्कुल यूरोप के शहरों की तरह है । बिजली, ट्राम, थियेटर, सब कुछ है ! मगर शहर जानने-वाला होना चाहिये । कैसे-कैसे नाच-घर हैं ! देखकर तबियत फड़क उठती है । दो-चार नाच-घरों का मैं आपको नाम दूँगा, आप वहाँ ज़रूर जाइयेगा और द्वीप पर भी जाइयेगा । वह देखने की खास चीज़ है । कैसी-कैसी औरतें वहाँ हैं !’

फ़ौजी अफसर का चेहरा लजा से लाल हो गया । आखें फ़िराकर कम्पित स्वर में उसने कहा, ‘जी हाँ, मैंने सुना है । क्या सचमुच वहाँ बड़ी सुन्दर स्त्रियाँ हैं ?’

‘बापरे बाप ! कौन कहता है वहाँ सुन्दर स्त्रियाँ हैं ?’

‘नहीं तो और क्या...?’

‘वहाँ पागल कर देनेवाली स्त्रियाँ हैं...आदमी को पागल बना

देनेवाली स्त्रियाँ ! पोलिश, रूसी और यहूदी जातियों का मिश्रित रक्त उन स्त्रियों में है जिससे वे बड़ी नमकीन और जिन्दगी से भरी हुई हैं। मुझे तुम पर बड़ी ईर्ष्या हों रही है। तुम आज़ाद और अकेले वहाँ जा रहे हो। अपने जमाने में मैं तो कभी ऐसी हालत में अपने ऊपर काबू न रख सकता। खास बात यह है कि वहाँ की स्त्रियाँ प्रेम करना खूब जानती हैं ! आदमी के दिल में आग लगा देती हैं ! और भी आ...प...को...कुछ पता है ?' उसने अपनी आवाज़ को यकायक बिल्कुल धीमा करके पूछा।

‘क्या ?’ फौजी अफसर ने घबराकर पूछा।

‘पेरिस और लन्दन तक में ऐसा प्रेम नसीब नहीं होता, बल्कि दुनियाँ भर में कहीं नहीं। मुझसे यह उन लोगों ने स्वयं कहा है जो दुनिया में फिरे हैं और जिन्होंने घूम फिरकर अच्छी तरह दुनिया देखी है। यही इस शहर की खास बात है। ऐसे अजीब-अजीब और नये-नये ढङ्गों से इस शहर में प्रेम किया जाता है जैसा दुनिया के पर्दे पर कहीं नहीं होता—आप तो उन तरीकों को कभी सोच भी नहीं सकते ! सचमुच वहाँ ऐसा प्रेम होता है जो आदमी को बिल्कुल पागल बना देता है !’

‘क्या ऐसा भी मुमकिन है ?’ फौजी जवान ने जो इसकी बातें सुनकर दङ्ग रह गया था, धीमे से पूछा।

‘ईश्वर मुझसे झूठ न कहलवाये ! क्षमा कीजियेगा। आप खुद समझते हैं। मेरा उस वक्त तक विवाह नहीं हुआ था। अकेला ही था। ऐसी हालत में सभी आदमियों से थोड़ा-बहुत पाप होता ही है। अब मैं उस दशा में नहीं हूँ, अतएव बदल गया हूँ। मगर उस वक्त का अभी तक मेरे पास एक बड़ा खास तस्वीरों का संग्रह बाकी है। ठहरिये, मैं आपको अभी उसे दिखाता हूँ। मगर उसे बड़ी होशियारी से देखियेगा।’

साइमन ने डरते हुए अपने दायें-बायें देखा और फिर अपनी जेब में से मौरोक्को लैदर की एक ताशों की-सी डिविया निकाली और फौजी जवान के हाथ में देते हुए बोला, 'यह लीजिये, देखिये ! मगर कृपया बड़ी सावधानी से देखियेगा ।'

जवान फौजी अफसर ने डिविया में से कार्ड निकाल-निकालकर देखने शुरू किये । इन कार्डों में सादा और रङ्गीन तरह-तरह की विषय-भोग की दशाओं के बीभत्स कोकशास्त्री चित्र थे जिनका अनुकरण करके कभी-कभी मनुष्य बन्दर और बनमानुस की तरह नीच होने का प्रयत्न करते हैं । साइमन भी उसके कन्धे के ऊपर से चित्रों को देख रहा था और बीच-बीच में कुहनियों से उसे कुरेद कर पूछता था 'कहिये, हैं न यह गजब के तरीके ? बिल्कुल पैरिस और वियाना के तरीके हैं !' फौजी जवान ने शुरू से आखिर तक सारी तस्वीरें देख डालीं । फिर जब वह चित्रों की डिविया साइमन को वापस करने लगा तो उसका हाथ काँप रहा था, कनपटियों और माथे पर पसीना आ गया था, आँखों के आगे धुँधलापन छा गया था और गालों पर लज्जा की लाली चमक आई थी ।

'मगर आप जानते हैं ?' साइमन ने यकायक बड़ी खुशी से कहा, 'अब मेरे लिए सभी एक-सा है । मेरा वक्त गुजर गया...अब मैं इन चीजों से दूर हो गया हूँ । बहुत दिनों से मैं सोचता हूँ कि यह चित्र किसी को दे डालूँ । मुझे इनके कोई खास दाम नियत करने की इच्छा नहीं है । आप चाहें तो इन्हें ले सकते हैं ।'

'मैं...इन्हें...यानी मैं इन्हें खरीद लूँ ? अच्छा...अच्छा... क्या दाम...'

'अच्छी बात है ! मेरी आपकी अब इतनी जान-पहिचान हो गई है अतएव मैं आपसे पचास रुपये ले लूँगा । क्या कहा आपने ? बहुत दाम हैं ? अच्छा, अच्छा, कोई इर्ज की बात नहीं है ! आप मुसाफिरी में

हैं, मैं आपकी जेब कटरना नहीं चाहता हूँ। अच्छा आप तीस रुपये ही दे दीजिये। क्या? यह भी बहुत है? अच्छा आइये, हाथ मिलाइये! आप पच्चीस रुपये ही दीजिये। अरे बाप रे! आप तो बड़े ज़बरदस्त आदमी हैं! चलिये, बीस ही सही! आप भी क्या याद करेंगे कि कोई मिला था! और देखिये एक बात मैं आपको और बता दूँ। जब-जब मैं इस शहर में जाता हूँ तो हमेशा होटल हरमिटेज में ठहरता हूँ। वहाँ आप मुझे बड़ी आसानी से या तो तड़के या शाम को आठ बजे के बाद जब चाहें मिल सकते हैं। मैं बहुत-सी अच्छी-अच्छी स्त्रियों को जानता हूँ। उन सबसे मैं आपका परिचय करा दूँगा। यह न सोचियेगा कि उन स्त्रियों को रुपये की ज़रूरत रहती है। जी नहीं। वे सिर्फ आप जैसे जवान, तन्दुरुस्त, सुन्दर, अच्छे और खुश मिज़ाज आदमियों को पसन्द करती हैं। रुपये की वहाँ ज़रूरत नहीं होती; बल्कि वे अपने खर्च पर बड़े शौक से आपको शैम्पेन पिलायेंगी! देखिये, याद रखियेगा—होटल हरमिटेज! और यदि आप उन स्त्रियों से न मिलना चाहें तो भी मेरा नाम और इस होटल का पता तो याद ही रखियेगा। शायद, आपको मेरी किसी वक्त ज़रूरत पड़ जाय! जहाँ तक इन चित्रों की बात है, ये तो ऐसी नायाब चीज़ हैं कि कभी आपके पास आलमारी में नहीं रक्खे रह सकते। जो लोग इस प्रकार का आनन्द चाहते हैं वे ऐसे एक चित्र के लिए एक मुहर देते हैं। मगर हाँ, यह अमीरों का काम है। शायद आपको यह पता नहीं, साइमन ने बिल्कुल उसके कान में झुककर कहा, 'कि बहुत-सी स्त्रियाँ इन चित्रों को देखकर मोहित हो जाती हैं। आप अभी नौजवान हैं और बड़े सुन्दर भी हैं। न जाने कैसी-कैसी स्त्रियों से अभी आपकी मुलाकात होगी!'

रुपया पाकर साइमन ने अच्छी तरह सँभालकर गिना और फिर निर्लज्जता से हाथ बढ़ाकर फौजी अफ़सर से हाथ भी मिलाया जो

बेचारा शर्म से आखें नीची किये ज़मीन में गड़ा जा रहा था। इसके बाद साइमन फ़ौजी जवान को छोड़कर अपने डिब्बे में इस तरह चला गया मानो कुछ हुआ ही न हो।

साइमन बड़ा बातूनी आदमी था। डिब्बे में जाते हुए रास्ते में उसे तीन वर्ष की एक छोटी-सी सुन्दर लड़की मिली जिसको दूर से ही देखकर वह मुँह बनाने लगा। लड़की के पास आकर वह अपनी एड़ियों पर बैठ गया और बकरी की बोली बोलता हुआ लड़की से पूछने लगा :

‘कहाँ जा रही हो श्रीमतीजी ? बाप रे बाप ! इतनी बड़ी लड़की ! अकेली ही सफ़र कर रही हो ? अम्मा को छोड़कर आई हो ? अपने आप ही टिकट खरीदकर सफ़र पर चल पड़ी हो। बापरे बाप ! कैसी बहादुर लड़की हो ! तुम्हारी अम्मा कहाँ हैं ?’

इसपर एक लम्बी, सुन्दर और आत्माभिमानि स्त्री ने आगे बढ़कर साइमन से शान्तिपूर्वक कहा ‘बच्चे के सामने से हट जाओ। अनजान बच्चों को इस तरह नहीं छेड़ा जाता !’ साइमन उछलकर अपने पैरों पर खड़ा हो गया और सिटपिटाता हुआ कहने लगा ‘माफ़ कीजिये श्रीमतीजी ! मेरा दिल नहीं माना...आपकी लड़की इतनी। सुन्दर...इतनी अच्छी है...कि मैं अपनी खुशी नहीं रोक सका...!’

मगर वह स्त्री उससे कुछ न बोलकर अपनी बच्ची का हाथ पकड़कर साइमन की तरफ़ से मुँह फेरकर चल दी। साइमन सिटपिटाया हुआ प्लेटफ़ॉर्म पर माफ़ी माँगता ही खड़ा रह गया।

चौबीस घण्टे में साइमन कई बार तीसरे दर्जे के उन दोनों डिब्बों में गया जिनमें से एक गाड़ी के इस छोर पर और दूसरा उस छोर पर लगा था। एक डिब्बे में तीन सुन्दर स्त्रियाँ एक काली दाढ़ीवाले गम्भीर, सुस्त आदमी के साथ बैठी थीं। साइमन इस आदमी से जाकर ऐसी बोली में बातें करता था जो समझ में नहीं आती थी। स्त्रियाँ परेशानी

से उसकी तरफ मुँह उठा-उठाकर देखती थीं मानो वह उससे कुछ पूछना चाहती थीं, मगर हिम्मत नहीं होती थी। एक बार सिर्फ दोपहर के वक्त उनमें से एक ने इतना कहने की हिम्मत की : 'तो वह सब सच है ? जो कुछ तुमने उस जगह के बारे में कहा है ? ...देखो जी, मेरा जी बहुत घबराता है !'

'क्या कहती हो मारगेरीटा ! जो कुछ मैंने कहा वह बिल्कुल पक्का है ऐसा पक्का जैसा सरकारी बैंक ! देखो लेजर', फिर उसने काली दाढ़ी के आदमी की तरफ मुड़कर कहा, 'अगले स्टेशन पर इन लोगों के लिए अच्छा-अच्छा खाना देखकर ले लेना। गाड़ी पच्चीस मिनट तक ठहरेगी।'

'मुझे मिठाई चाहिये' इचकिचाते हुए एक सुनहरी बालों की छोकरी ने कहा जिसकी आँखें भूरी थीं।

'प्यारी बेला जो तुम्हें चाहिये खुशी से लो ! अगले स्टेशन पर खुद तुम्हारे लिए मिठाई खरीदकर भिजवा दूँगा। अच्छा लेजर, तुम तकलीफ मत करना। मैं खुद ही सारा खाना लेकर इन लोगों के लिए भिजवा दूँगा।'

तीसरे दर्जे के दूसरे डिब्बे में तो स्त्रियों की पूरी फुलवारी ही साइमन की थी। दस पन्द्रह स्त्रियाँ एक तगड़ी, ज़बरदस्त, भयङ्कर भृकुटियों की स्त्री के साथ उस डिब्बे में भी बैठी थीं। वह स्त्री बड़ी मोटी आवाज़ से बोलती थी और उसकी मोटी ठुड्ठियाँ, छाती और तोंद उसके कपड़ों में रेल के डिब्बे के साथ-साथ हिलती थीं। उस मोटी स्त्री और उसके साथ की छोकरियों को देखते ही उनके व्यवसाय का पता फौरन चल जाता था।

स्त्रियाँ डिब्बे की तिपाइयों पर बैठी, सिगरेट और शराब पीती और ताश खेलती हुई हिल रही थीं। बीच-बीच में डिब्बे के मर्द मुसाफिर उन्हें छेड़ देते थे और वे जवाब में उन्हें भर्राई आवाजों से खरी-

खोटी सुनाती थीं। जवान मुसाफिर सिगरेट और शराब भी उन्हें पिला रहे थे।

यहाँ साइमन का ढंग बिल्कुल ही दूसरा था—वह शानदार लापरवाही और बड़े बड़प्पन के साथ उनसे मज़ाक और बातें करता था और वे स्त्रियाँ उससे बड़ी खुशामद से बातचीत करती थीं। इन तमाम स्त्रियों को, जिनमें रुमानियन, यहूदी, पोल और रूसी सभी थीं, अच्छी तरह देखभाल करके कि सब ठीक है, साइमन ने उनके लिए खाना मँगाने का हुक्म दिया और बड़ी शान से लौटकर चला गया। वह इस समय उस बंजारे की तरह लग रहा था जो रेल में भरकर जानवरों को कसाईखाने में बेचने के लिए जाता है और बीच में स्टेशनों पर उतर-उतर कर अपने जानवरों को देखता और चारा इत्यादि डालता है। स्त्रियों को देख-दाखकर वह फिर अपने डिब्बे में जा बैठता और अपनी स्त्री से खेलने लगता और अपने यहूदी चुटकुले कहने लगता।

जहाँ-जहाँ गाड़ी देर तक रुकती वहाँ-वहाँ वह रिफ्रेशमेन्ट रूम में जाने का बहाना करके, मगर वास्तव में अपने साथ की स्त्रियों को देखने के लिए, उतरता था। पड़ोसियों से अपने आप ही कहने लगता था :

‘मुझे खाने की तो इतनी चिन्ता नहीं कि क्या मिलता है क्या नहीं मिलता, मगर मेरा पेट बड़ा खराब है और कभी-कभी इन स्टेशनों पर ऐसा खाना मिलता है कि खाने पर तो दो चार रुपया ही खर्च होता है मगर डाक्टरों पर दो चार सौ रुपया बाद में खर्च करना पड़ता है। हाँ, तुम सिरोंचका, तुम शायद रिफ्रेशमेन्ट रूम में चलकर खाना पसन्द करो। या मैं तुम्हारे लिए यहीं भेज दूँ ?’

सरोचका उसकी खातिरदारी और इतनी ज़्यादाह तवज्जह से शर्माकर लाल होती हुई कहती, ‘नहीं सेनया, मेरी फ़िक्र तुम मत करो। मुझे बिल्कुल भूख नहीं है।’ मगर साइमन खाने के कटोरदान में से थोड़ा-सा

खाना निकालकर अपनी स्त्री के सामने रख ही देता और खुद भी उसमें से थोड़ा-सा चखता। स्त्री नज़ाकत से उसमें से थोड़ा-सा खाना खाती और फिर बचा-खुचा कटोरदान में बन्द करके रख देती।

इन्जन से आगे, बहुत दूर, शहर के चमकते हुए मकान और गुम्बद दीखने लगे थे। टिकट-चेकर ने पास आकर साइमन को इशारों से बुलाया और वह फौरन उठकर उसके साथ दूसरे डिब्बे में चला गया।

‘हमारा अफ़सर टिकट देखता हुआ आ रहा है। मिहरबानी करके आप अपनी पत्नी को लेकर ज़रा देर के लिए तीसरे दर्जे के पास आकर खड़े हो जायँ।’ टिकट-चेकर ने साइमन से धीरे से कहा।

‘बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा !’ साइमन ने उसकी बात मानते हुए कहा।

‘और जो रुपया आपसे तय हुआ है वह भी मिहरबानी करके मुझे दे दीजिये।’

‘कितना तुम्हें देना है ?’

‘जैसा आपसे तय हुआ था—किराये का आधा—पौने तीन रुपया।’

‘क्या ?’ साइमन ने गुस्से में कहा। ‘पौने तीन रुपया।’

‘आपने मुझे क्या निरा पागल ही समझ लिया है ? यह लो एक रुपया, यह बहुत है !’

‘माफ़ कीजिये जनाव !...यह आप क्या मज़ाक कर रहे हैं... आपसे तय हो चुका है...’

‘तय हो चुका है !...क्या तय हो चुका है ?...यह लो आठ आना और, बस ! ज़्यादा चीं-चपड़ करोगे तो मैं ही खुद तुम्हारे अफ़सर से कह दूँगा कि तुम बिना टिकट लोगों को गाड़ी में ले जाते हो। समझे, मुझे बिल्कुल दुधारू गाय ही तुमने समझ लिया है !’

टिकट-चेकर की आँखें फैल गईं और उनमें खून उतर आया।

‘धूर्त ! बदमाश कहीं का !’ उसने कहा, ‘तेरे जैसे धूर्त को तो गाड़ी के नीचे ढकेल देना चाहिये !’

लेकिन साइमन ने फौरन ही उसको डाटकर कहा, ‘क्या कहा ? गाड़ी के नीचे मुझे ढकेल दोगे ? मालूम है ऐसी धमकी के लिए तुम्हें क्या सज़ा मिल सकती है ? अभी मैं पुलिस को पुकारता हूँ और गाड़ी की जंजीर खींचकर उसे खड़ी किये देता हूँ ।’ यह कहकर उसने ऐसे दृढ़ भाव से जंजीर की तरफ हाथ बढ़ाया कि टिकट-चेकर के होश फाख्ता हो गये । टिकट-चेकर ने घृणा और नाउम्मेदी से हाथ हिलाकर जमीन पर थूककर कहा :

‘जा तू ही मेरा रुपया रखकर राजा होगा ! मगर तुझे यह मेरा रुपया फलेगा नहीं !’

साइमन ने अपनी स्त्री को दूसरे डिब्बे में से यह कहते हुए बुला लिया, ‘आओ सरोचका, थोड़ी देर यहाँ बाहर खड़े होकर हवा खायें । यहाँ से दृश्य भी अच्छा दीखता है ।’ *

सरोचका फौरन उठकर, अपनी पोशाक होशियारी से सँभालती हुई— जो ऐसा लगता था उसने ज़िन्दगी में शायद पहली ही बार पहनी थी— साइमन के पास चली गई ।

शहर के मकानों और गुम्बदों पर सूर्यास्त की सुनहरी किरणें पड़ती हुई बड़ी सुन्दर लग रही थीं । सामने की पहाड़ियों पर सफेद-सफेद गिरजे जादू के महलों की तरह हवा में बहते हुए लग रहे थे । ऊपर से नीचे तक जंगल फैले हुए थे और नदी के किनारे की सफेद सपाट चट्टानों में जहाँ-तहाँ पेड़ों की कतारें शरीर की रंगों और नसों की तरह दीख रही थीं । परिस्तान की तरह सुन्दर नगर दौड़ता हुआ स्वयं गाड़ी से मिलने के लिए आता लग रहा था !

* यूरोप में रेल के सब डिब्बे आमतौर पर एक दूसरे से मिले होते हैं जैसे कि बम्बई में पूना जानेवाली गाड़ियों में होते हैं ।

गाड़ी रुकने पर उसने तीन कुलियों को बुलाकर अपना असबाब पहले दर्जे की तरफ से ले चलने को कहा और अपनी पत्नी को उनके साथ चलने को कहा। मगर स्वयं वह द्वार के पास ठिठककर अपनी स्त्रियों के दोनों दलों को खैरियत से गुज़रते हुए देखने के लिए खड़ा हो गया। जब वह मोटी औरत अपने साथ की स्त्रियों को लेकर उसके पास से गुज़रने लगी तो साइमन ने उससे जल्दी से कहा :

‘देखो, याद रखना ! होटल अमेरिका नाम आइवानूकोवस्काया, कमरा नम्बर बाईस !’

फिर काली दाढ़ीवाले आदमी से उसने उसी तरह कहा :

‘देखो लेज़र, भूलना मत ! इन छोकरियों को अच्छी तरह खिला-पिलाकर किसी सिनेमा में ले जाना और रात के ग्यारह बजे मेरा इन्तज़ार करना। मैं बातचीत करने आऊँगा। मगर कोई और मुझसे मिलना चाहे तो मेरा पता तुम्हें मालूम ही है—होटल हरमिटेज ! मुझे टेलीफोन कर देना। अगर इत्फ़ाक से मैं वहाँ न होऊँ तो रीमान काफ़े में या वहाँ भी न मिलूँ तो सामने के यहूदी भोजनालय में मुझ से आकर मिलना। मैं वहाँ खाना खाता मिल जाऊँगा। अच्छा, बन्दगी ! खुदा हाफ़िज़ !’

तीसरा अध्याय

साइमन की अपने व्यापार के सम्बन्ध की सारी कहानियाँ भूठी थीं । कपड़ों, फीतों, बटन, मसनूई दातों और आँखों के नमूने वह केवल लोगों की आँखों में धूल झोंकने और अपने असली व्यवसाय को छिपाने के लिए अपने साथ रखता था । असल में वह स्त्रियाँ बेचने का काम करता था । यह ज़रूर सच है कि करीब दस वर्ष पहिले उसने सारे रूस में घूम-फिरकर किसी एक बिल्कुल नामालूम कारखाने की खराब शराबें बेची थीं जिससे उसकी ज़वान लच्छेदार बातें करने में बड़ी तेज़ हो गई थी जो कि आम तौर पर माल बेचनेवाले सौदागरों की हो जाती है । इसी काम के सिलसिले में उसे अपना असली व्यवसाय, जो वह अब करता था, हाथ आ गया था । एक बार एक शहर को जाते हुए उसने एक नौजवान दरज़िन को किसी तरह अपने प्रेम में फँसा लिया था । इस जवान छोकरी का नाम अभी तक पुलिस की लिस्ट में तो नहीं आया था, मगर प्रेम और अपने शरीर को देने में उसे अधिक फ़िक्क नहीं थी । साइमन भी उस समय जवान था और अपनी जवानी के जोश में वह उसे लिये-लिये

घुमा और उस सफर में उसने वे मजे किये जो उसने अपनी ज़िन्दगी में पहले कभी सोचे तक भी नहीं थे। मगर छः महीने के बाद साइमन उससे ऊब उठा—वह उसके लिए एक बड़ा भारी बोझ हो गई। रोज़ दोनों में जलन और अविश्वास के झगड़े और रोना-पीटना होने लगा जो कि बहुत दिनों तक साथ रहने का आम तौर पर नतीजा हुआ करता है।...धीरे-धीरे वह उसे मारने-पीटने भी लगा। पहले दिन साइमन ने जब उसे पीटा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ, मगर फिर वह उसकी आदी हो गई और कुछ न कहती थी। यह मानी हुई बात है कि वे स्त्रियाँ जो प्रेम का व्यापार करती हैं, या तो स्वभाव से झूठी, धोखेबाज़ और गप्प हाँकनेवाली होती हैं या बड़ी निस्स्वार्थ, अन्ध-प्रेमी, मूर्ख और भेड़ों की तरह भोली होती हैं जो कि कुछ भी देने में, यहाँ तक कि अपना आत्माभिमान त्याग देने में भी नहीं हिचकतीं। यह दरज़िन दूसरे किस्म की स्त्री थी। अतएव साइमन को उसे इस बात पर शीघ्र ही राज़ी कर लेने में अधिक कठिनाई नहीं हुई कि वह बाज़ार में अपने आपको बेचने लग जाय और जिस दिन शाम को उसने बाज़ार में अपने आपको बेचकर पाँच रुपये अपनी कमाई के लाकर साइमन को दिये उसी दिन शाम से साइमन के मन में उसके प्रति अथाह घृणा पैदा हो गई। यह ध्यान में रखने की बात है कि इसके बाद साइमन को जितनी भी स्त्रियाँ मिलीं और कई सौ स्त्रियाँ उसके हाथों में होकर गुजरी होंगी—उन सभी के प्रति उसके मन में वैसी ही घृणा का भाव क़ायम रहा। साइमन उसको तरह-तरह से चिढ़ाता, पीटता और देख-देखकर ऐसे स्थानों पर मारता जहाँ उसको बड़ी सख्त चोट पहुँचती। मगर वह चुपचाप सिसकियाँ भरती हुई कराहती और उसके आगे घुटनों पर गिरकर उसके हाथ चूमने का प्रयत्न करती। उसके इस प्रकार सब कुछ सहन कर लेने से

साइमन को और भी चिढ़ होती। वह उसको अपने पास से धकेलकर हटा देता, मगर वह फिर उसी के पास आ जाती। वह उसको घर में से धकेलकर गली में निकाल देता, किन्तु घण्टे दो घण्टे में वह ठण्ड से काँपती हुई फिर उसी के पास लौट आती। अन्त में उसके कुछ बदजात दोस्तों ने उसे बड़ी होशियारी की यह सलाह दी कि वह उसे किसी चकले में बेच दे और इस सलाह पर अमल करने के बाद साइमन का जीवन ही बदल गया।

सच तो यह है कि यह व्यवसाय शुरू करने पर साइमन को बिल्कुल भी विश्वास नहीं था कि वह उसमें सफल हो जायगा, परन्तु सौदा बड़ा अच्छा हो गया। खारकोव के एक चकले की मालकिन से उसका सौदा पट गया। यह मालकिन साइमन को बहुत दिनों से अच्छी तरह जानती थी, क्योंकि साइमन उसके यहाँ अक्सर जाकर बड़े मजेदार ढङ्ग से पियानो बजाया करता था और ऐसा नाचता था कि बैठक में बैठनेवाले लोटपोट हो जाते थे। सबसे खास बात साइमन में यह थी कि पीनेवालों की वह बिल्कुल ही जेबें खाली कर लेता था। सौदा पट जाने के बाद उसको अपनी स्त्री को समझाना भी बाक़ी था जो कि बड़ा मुश्किल काम साबित हुआ। वह किसी हालत में उसे छोड़कर जाने को तैयार न हुई; खुदकुशी कर लेने, अपनी आखें गन्धक के तेजाब से जला डालने और पुलिस कप्तान से जाकर उसकी शिकायत करने की वह साइमन को धमकियाँ देने लगी। उसे सचमुच साइमन की कई ऐसी करतूतें मालूम थीं जिससे साइमन फाँसी पर लटक सकता था। अतएव साइमन ने अपना तरीक़ा बदल दिया। वह एकाएक कोमल बनकर उसको बहुत प्यार करने लगा, फिर एकाएक वह बड़ा दुःखी रहने लगा। जब-जब वह परेशानी से उसके दुःख का कारण पूछती तो वह चुप रहता और कोई जवाब न देता; फिर कभी-कभी एक दो शब्द मानो ग़लती से कहने लगा;

धीरे-धीरे अपनी ज़िन्दगी के किसी गुनाह की तरफ इशारा करने लगा और अन्त में खुलकर गढ़-गढ़कर भूठ बोलने लगा। उसने उससे कहा कि पुलिस मेरी निगरानी कर रही है। जेल से मेरा बचना अब कठिन दीखता है—शायद फाँसी हो जाय। अतएव कुछ महीने के लिए विदेश चला जाना ही ठीक होगा। साथ ही वह इस बात पर भी बार-बार जोर देने लगा कि विदेश में एक ऐसा व्यापार भी वह करना चाहता है जिसमें हजारों रुपया उसे मिल सकता है। दरज़िन ने उसकी बातों पर विश्वास कर लिया और वह बड़ी डरी—स्त्रियों का वह स्वाभाविक, पवित्र भय उस बेचारी के हृदय में होने लगा जो कि उनके मातृत्व का अंश होता है। अतएव अब साइमन को उसे यह मनाना कठिन नहीं रहा कि उसको साथ-साथ लिये फिरना साइमन के लिए बड़ा खतरनाक होगा और सबसे ठीक यही है कि वह यहीं बनी रहे और उसका इन्तज़ार करे जब तक कि साइमन का सारा मामला ठीक न हो जाय। इसके बाद उसे यह समझाना बिल्कुल ही आसान था कि सबसे अच्छी छिपकर रहने के लिए सुरक्षित जगह चकले से अच्छी दूसरी नहीं हो सकती क्योंकि वहाँ वह पुलिस की नज़रों से बिल्कुल बची रहेगी। एक दिन साइमन ने उससे अच्छे-अच्छे कपड़े पहिनकर, बाल की घूँघरें ठीक करके, पाउडर और रुज * लगाकर अपने साथ चलने को कहा और वह उसे अपने परिचित स्थान पर जहाँ वह पहिले ही से सौदा ठीक कर आया था, ले गया। वह वहाँ फौरन पसन्द कर ली गई और उसी दिन शाम तक थाने से उसका पीला टिकट भी बनकर आ गया। उसे सीने से देर तक लगाकर और आँखों में आँसू भर कर साइमन ने उससे बिदा ली और मालकिन के कमरे में जाकर पचास रुपये जेब में रक्खे—गोकि उसने मागे दो सौ रुपये थे। मगर इतने कम दाम मिलने पर भी उसे कोई ख़ास अफ़सोस नहीं हुआ

* गाल गुलाबी करने के लिए लगाने का रङ्ग।

क्योंकि मुख्य बात यह थी कि उसे आखिरकार अपना धन्धा मिल गया था जोकि उसने अपने आप ही ढूँढ़ निकाला था और जिससे उसका भविष्य ही बिल्कुल बदल जाने की सम्भावना थी ।

यह स्त्री बाद में चकले में ही रही । साइमन उसको ऐसा भूल गया कि सालभर के बाद याद करने पर भी उसकी शक्ल याद आना उसको कठिन हो गया । कौन जाने...शायद वह जान-बूझकर बनता हो ?

धीरे-धीरे साइमन दक्षिण रूस में इस व्यवसाय का सबसे बड़ा व्यापारी बन गया । वह कुस्तुनतुनिया और अरजेनटाइन तक से व्यापार करने लगा ; छोकरियों के दल के दल वह ओडेसा के चकलों से कीव में, कीव से खारकोव में, और खारकोव से ओडेसा में पहुँचाने लगा । बड़े-बड़े शहरों में जो माल पुराने हो जाते थे या जिनको लोग अधिक जान जाते थे उनको दूसरे जिलों और छोटे शहरों में, जहाँ उनके काफी दाम मिल सकते थे, वह पहुँचाने लगा । धीरे-धीरे साइमन के ग्राहकों की तादाद बहुत बढ़ गई जिनमें काफी सम्मानित और प्रख्यात पुरुष भी शामिल थे जैसे कि लेफ्टीनेन्ट गवर्नर, फौजी कर्नल, मशहूर वकील, प्रख्यात डाक्टर, अमीर ज़मींदार और व्यापारी इत्यादि । छिपी दुनिया के सभी चकले की मालकिनों, अकेले पेशा करनेवाली वेश्याओं की कमाई खानेवालों, नाचनेवाली छोकरियों—से वह इसी प्रकार परिचित था जैसे कि आकाश की दुनिया से ज्योतिष शास्त्र का जाननेवाला परिचित होता है । उसकी ज़बरदस्त याददाश्त में, जिसके कारण वह कोई नोटबुक इत्यादि नहीं रखता था, हज़ारों नाम और पते थे । अपने सारे अमीर ग्राहकों के स्वभाव और प्रकृति की सभी बातों से वह भली भाँति परिचित रहता था, जिनमें से कोई विकृत और अस्वाभाविक प्रेम के ग्राहक थे, कोई भोली-भाली छोकरियों के लिए बेशुमार रुपया लुटाने को तैयार रहते थे और कोई बिल्कुल कम उम्र की छोकरियाँ चाहते थे । कम उम्र की छोकरियाँ लाना

सबसे खतरनाक काम था ; मगर मुनाफ़ा भी इस काम में हजारों का होता था । अपने अमीर ग्राहकों की अस्वाभाविक विषय लिप्साएँ पूरी करने के लिए माल पहुँचाने में भी उसे बहुत-सा रुपया मिलता था । मगर ऐसा वह बहुत कम, जब कि उसे खासकर अच्छी धन की गठरी मिलती थी, तभी करता था । दो चार बार उसे जेल की हवा भी खानी पड़ी थी, मगर इससे उसे कोई हानि नहीं हुई थी । जेल के अनुभव के बाद उल्टा उसका उत्साह और उसकी हिम्मत अपने काम में दुगुनी हो गई थी और वह उसको बड़ी होशियारी से चलाने लगा था । उत्साह और अनुभव के साथ-साथ उसे दुनियादारी और उसके दाँव-पेंच भी खूब आ गये थे ।

अब तक पन्द्रह बार उसने अपना विवाह किया था और हरबार काफ़ी रुपया दहेज में पाया था । अपनी पत्नी का रुपया गाँठ में बाँध कर एक दिन एकाएक वह गायब हो जाता था और सम्भव होता था तो अपनी पत्नी को भी किसी गुप्त या अच्छे खुले चकले में काफ़ी दाम लेकर बेच देता था । धोखे में पड़ जानेवाली अभागी छोकरी के मा-बाप पुलिस के द्वारा साइमन की शेरलिङ्ग के नाम से उसकी खोज करते थे और वह रोज़ेस्टीन के नाम से एक शहर से दूसरे शहर का सफ़र करता फिरता था । इस काम में उसे इतनी बार अपने नाम बदलने पड़े थे कि उसकी इतनी अच्छी याददाश्त होने पर भी, उसे यह याद रखना मुश्किल हो गया था कि कब या किस साल उसका नाम नेथेनीलसन था और किस साल बक्लियार । यहाँ तक कि उसे अपना असली नाम भी इन्हीं नकली नामों में से एक लगता था । सबसे बड़ी बात यह थी कि उसको अपने व्यवसाय में कोई बुरी या जरायम पेशा चीज़ नहीं लगती थी । उसे यह धन्धा भी बिल्कुल मछली, आटा, मांस या लकड़ी बेचनेवाले दूसरे धन्धों की तरह लगता था । एक तरह से वह धार्मिक आदमी भी था क्योंकि चाहे वह

कहीं भी हो मुख्य त्योहारों पर वह बाकायदा पूजा-पाठ और व्रत ज़रूर करता था। ओडेसा में उसकी एक बूढ़ी माँ और कुबड़ी बहिन ही उसके खानदान के लोगों में रह गये थे जिनके पास वह बराबर, कभी अधिक तो कभी कम, रुपया रूस के तमाम शहरों से, जहाँ-जहाँ वह जाता था, भेजता रहता था। बैंक में भी उसके नाम पर काफ़ी रुपया जमा हो गया था और उसको धीरे-धीरे वह बढ़ाता ही जाता था—सूद तक उसका बैंक से नहीं निकालता था। मगर वह लोभी या लालची बिल्कुल नहीं था। इस धन्वे का मज़ा, ख़तरा और होशियारी उसे अपनी ओर खींचती थी। स्त्रियों की भी उसे फ़िक्र नहीं थी—यद्यपि वह उनको परखना खूब जानता था। इस सम्बन्ध में वह बिल्कुल उस चतुर रसोइये की तरह था जो अच्छे खाने बनाता है, मगर उसके मुँह में उन खानों को देखकर पानी नहीं आता क्योंकि वह उनको बनाते-बनाते ही अघा जाता है। किसी औरत को फसाने, फुसलाने और अपनी मर्जी के अनुसार चलाने के लिए उसे कोई खास प्रयत्न नहीं करने होते थे। वे आपसे आप उसके पास आ जाती थीं और उसके हाथ में बिल्कुल मिट्टी की पुतली बन जाती थीं। वह उनसे व्यवहार करने में एक प्रकार के दृढ़, निश्चल आत्मविश्वास से काम लेता था जिसके सामने वे इसी तरह झुक जाती थीं जैसे कि शैतान घोड़े भी घोड़ों को सिखानेवाले अनुभवी उस्ताद की आवाज सुनकर या नज़र देखकर या थपथपी लगने पर फौरन ठीक होकर चलने लगते हैं।

वह शराब भी बहुत कम पीता था, हाँ दूसरों के साथ में थोड़ा पी लेता था—अकेला कभी नहीं। खाने की भी उसे अधिक चिन्ता नहीं रहती थी। हाँ, कपड़ों का उसे शौक था—जैसा कि सभी आदमियों को होता है। अच्छे-अच्छे कपड़ों पर और अपनी शकल-सूरत ठीक रखने पर वह काफ़ी रुपया और वक्त खर्च किया करता था। तरह-तरह के

कालर, मफलर, कफों, घड़ी की चेनों, कमीज़ों और जूतों को वह बहुत खरीदता था ।

स्टेशन से वह सीधा होटल हरमिटेज गया । होटल के नौकरों ने जो नीली वर्दियों में थे, दौड़कर उसका अस्वाब उठाया और उसे होटल की ब्योढ़ी में ले गये । उनके पीछे-पीछे अपनी स्त्री का हाथ पकड़े हुए, दोनों के दोनों बड़ी अच्छी और शानदार पोशाकों में—मगर उसकी पोशाक बहुत ही शान की थी—और एक हाथ में चौड़ी मूठ की एक खूबसूरत छड़ी थामे हुए जिसकी मूठ पर एक नङ्गी स्त्री की मूर्ति थी, वह भी होटल में घुसा ।

‘यहाँ बिना इजाज़त के आप नहीं ठहर सकते’, एक लम्बे-चौड़े और तगड़े द्वारपाल ने उसकी तरफ कठिन और सोते हुए चेहरे से देखते हुए कहा ।

‘अरे ज़ाचर ! फिर तुमने अपनी पुरानी बात मुझ पर झाड़ी, ‘यहाँ बिना इजाज़त नहीं ठहर सकते !’ साइमन ने मुस्कराते हुए कहा और उस भीमकाय द्वारपाल की पीठ थपथपाई । ‘बिना इजाज़त यहाँ न ठहर सकने के क्या मानी हैं ? हमेशा तुम यही कहते हो ! मुझे यहाँ सिर्फ़ तीन दिन ठहरना है । काउन्ट इपाटीव से जैसे ही मेरा किराया तय हो गया मैं चला जाऊँगा । खुदा हाफ़िज़ ! तुम अकेल ही इन तमाम कमरों को घेरे पड़े हो ! देखो तो ज़ाचर, तुम्हारे लिए ओडेसा से मैं अबकी बार कैसा अच्छा खिलौना लाया हूँ । देखते ही तुम्हारी तबीयत फड़क उठेगी !’

यह कहते हुए उसने बड़ी होशियारी से द्वारपाल के हाथ में एक गिन्नी घुसेड़ दी जिसको उसने अपनी मुट्ठी में जोर से दाबकर हाथ पीठ के पीछे कर लिया ।

सबसे बड़े गोल कमरे में अपना अस्वाब ठीक से रख लेने के बाद सबसे पहिला काम उसने जो किया वह यह था कि छः जोड़े बहुत

बढ़िया जूते निकालकर कमरे के दरवाज़े के बाहर रख दिये, घण्टी बजाकर नौकर को बुलाया और उससे बोला :

‘देखो, फौरन इन सबको अच्छी तरह साफ़ कर दो ! ऐसी अच्छी तरह साफ़ करो कि शीशे की तरह चमक उठें ! तुम्हारा नाम शायद टिमोथी है, क्यों ? अच्छा टिमोथी देखो, मेरा काम अच्छी तरह करोगे तो मैं तुम्हें खुश कर दूँगा । इनको शीशे की तरह चमका दो !’

चौथा अध्याय

साइमन होटल हरमिटेज में तीन दिन और तीन रात से अधिव नहीं रहा, मगर इसी समय में वह लगभग तीन सौ आदमियों से मिल लिया। उसके आने से इस बड़े और चमकीले बन्दरगाह में जान आ गई। साइमन के पास नौकरों की खोज में दफ्तरों के मालिकों, सस्ते होटलों की मालकिनों और अनुभवी दलालों का जो स्त्रियों के व्यापार में बूढ़े हो गये थे, दिन-रात ताँता लगा रहता था। लालच के कारण नहीं बल्कि व्यापार में अपने आपको चतुर साबित करने के अभिमान के कारण वह सबसे खूब सौदा करता था जिससे स्त्रियों को वह सस्ता से सस्ता खरीद सके। दस-पाँच रुपये अधिक मुनाफ़े के मिल जाँय इसकी उसे इतनी चिन्ता नहीं रहती थी जितनी इस बात की कि कहीं याम-पोल्स्की को, जिससे उसकी इस व्यापार में सख्त होड़ रहती थी, उससे अधिक किसी सौदे में मुनाफ़ा न मिल जाय।

इस शहर में पहुँचने के दूसरे रोज़ ही वह अपने साथ बेला नाम की छोकरी को लेकर मेज़ेर नाम के फोटोग्राफर के यहाँ पहुँचा और उसके साथ तरह-तरह की हालतों में बहुत से फोटो खिंचवाये। फोटो-

ग्राफर को हर निगेटिव के लिए उसने तीन रुपया और बेला को एक रुपया दिया। इसके बाद गाड़ी में बैठकर वह बारसूकोवा के यहाँ गया।

बारसूकोवा एक ऐसी पुरानी तजुरबेकार छिनाल थी जैसी कि खास तौर पर दक्षिणी रूस में ही पाई जाती हैं। वह न तो पोलिश जाति की थी और न रूसी ही थी। काफी ठम्र की और धनवान हो चुकी थी जिससे कि वह एक आदमी को अपना पति बनाकर और उसके साथ ही एक नाच घर बनाकर बैठ गई थी। उसका पति नम्र स्वभाव का, एक छोटा-सा पोलिश जाति का आदमी था। साइमन और बारसूकोवा दोनों एक दूसरे से बड़े पुराने दोस्तों की भाँति मिले। जब वे एक दूसरे से बातें करने लगे तो उन्हें न तो किसी से किसी किसिम का डर लगा, न उनमें शर्म या हया दिखाई दी और न उनमें आत्मा ही लगती थी।

‘मैं आपके लिए खास तौर पर तीन औरतें लाया हूँ! एक तो सुनहरीबालोंवाली बड़ी शर्मीली है; दूसरी बड़ी जवान काले बालोंवाली है और तुम्हें हर तरह से खुश करने के लिए तैयार हो जायगी; तीसरी एक रहस्यपूर्ण स्त्री है जो केवल मुस्कराती है और बोलती-चालती कुछ नहीं, मगर वह बड़ी सुन्दर है और बड़े ही काम की तुम्हें साबित होगी!’

श्रीमती बारसूकोवा ने उसकी तरफ अविश्वास से घूरते हुए सिर हिलाकर कहा, ‘मिस्टर साइमन! आप मुझे पट्टी मत पढ़ाइये! क्या आप मेरे साथ फिर वैसा ही सलूक करना चाहते हैं जैसा पिछली बार किया था?’

‘ईश्वर की कसम खाकर कहता हूँ। मैं तुमसे बिल्कुल झूठ नहीं कह रहा हूँ! इतना ही नहीं, मैं तुम्हारे लिए एक पढ़ी-लिखी स्त्री भी लाया हूँ। जो चाहो तुम उससे काम ले सकती हो। मैं समझता हूँ उसका पारखी भी तुम्हारे पास ज़रूर होगा।’

बारसूकोवा ने रहस्यपूर्ण मुस्कान से पूछा—‘तुम्हारी नई पत्नी है?’

‘नहीं; मगर अच्छे घर की है।’

‘इसका मतलब है कि पुलिस से फिर झकझक होगी ?’

‘अरे बारसूकोवा ! मगर मैं रुपये भी तो सिर्फ एक हजार ही माँगता हूँ ।’

‘देखो, ठीक-ठीक बातचीत करो—पाँच सौ लो । मैं बोरे की बिल्ली नहीं खरीदना चाहती ।’

‘देखो बारसूकोवा, हमारा तुम्हारा पहिली ही बार सौदा तो हो नहीं रहा है, न आखिरी बार है । मैं तुम्हें धोखा देने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ । मैं अभी उसे यहीं लिये आता हूँ मगर एक बात सिर्फ ध्यान में रखना कि तुम मेरी ताई हो और तुम्हें उसी ढङ्ग पर उससे बातचीत करना है । मुझे इस शहर में तीन दिन से अधिक नहीं ठहरना है ।’

श्रीमती बारसूकोवा की छाती, तोंद और उड्डियाँ खुशी से फूल उठीं ।

‘खैर, छोटी बातों पर वक्त बर्बाद करने से कोई लाभ नहीं । न तो मैं ही तुम्हें कभी धोखा देती हूँ और न तुम्हीं मुझे कभी धोखा देते हो । थोड़ी-सी शराब मेरे साथ बैठकर पियोगे ?’

‘धन्यवाद, बड़ी खुशी से ।’

‘हाँ जी, ज़रा देर फिर पुराने मित्रों की तरह बैठकर बातें करें । कहो, कितना साल भर में कमा लेते हो ?’

‘अरे, क्या बताऊँ श्रीमती ! करीब बारह हजार साल भर में तो मिल ही जाते हैं, मगर साथ ही लगातार सफर करते रहने में खर्च भी बहुत हो जाता है ।’

‘कुछ बचाकर भी रखते हो ?’

‘बहुत थोड़ा...दो-तीन हजार सालाना से अधिक नहीं बचा पाता हूँ ।’

‘मैं सोचती थी दस-बीस हजार...’

साइमन उसकी बातों से उकता उठा क्योंकि उसने देखा कि धीरे-

धीरे उसका सारा भेद ही श्रीमती लिये लेती थीं। वह बोला, 'मगर इन सबसे तुम्हें क्या मतलब है ?'

श्रीमती ने घण्टी बजाकर नौकरानी को बुलाया और उससे मलाई के साथ काफ़ी और लाल शराब लाने को कहा जो साइमन को, वह जानती थी, अच्छी लगती है। फिर उसने साइमन से पूछा :

‘तुम शेषशेरोविश को जानते हो ?’

साइमन ने आश्चर्य से कहा, ‘शेषशेरोविश को कौन नहीं जानता ! वह तो बुद्धि का भाण्डार है...देवता है !’

और जोश में भरकर, बिल्कुल यह भूलकर कि वह उसको धीरे-धीरे अपने जाल में खींचे लिये जा रही थी, साइमन ने बड़े उत्साह से कहना शुरू किया :

‘खबर है शेषशेरोविश ने पारसाल क्या किया ? वह कोवनो, विलनो और ज़िटोमीर से इकट्ठी करके तीस औरतें अरजेनटाइन ले गया और वहाँ एक औरत को एक-एक हज़ार में बेचा। सोचो तो तीस हज़ार रुपये...एक बार में तीस हज़ार रुपये ! और इससे भी उसे शान्ति नहीं हुई ! अपना सफ़र का खर्च निकालने के लिए उधर से वह थोड़ी हबशिने खरीद लाया जिनको उसने मॉस्को, पीटर्सबर्ग, कीव, ओडेसा और खारखोव में लाकर बेच दिया। आदमी क्या है पूरा उक्ताब है ! यह आदमी व्यापार करना जानता है !’

बारसूकोवा ने बड़े स्नेह से उसके घुटने पर हाथ रख दिया। वह इसी की बाट देख रही थी। बड़े मित्रभाव से वह उससे फिर बोली, ‘यही मैं आपसे कहना चाहती थी...मिस्टर...क्या नाम है आपका...’

‘...साइमन...हॉरीज़न...कुछ भी कहिये...’

‘अच्छा मिस्टर हॉरीज़न, समझे ! मैं आपसे यह कहना चाहती थी कि आप कुछ भोली लड़कियाँ मुझे दे सकेंगे ? भोली और मासूम लड़कियों की आजकल बड़ी माँग है। क्रीमत आप जो कहेंगे मिल

जायगी। उसकी फ्रिक मत कीजियेगा। मगर आजकल भोली छोकरियाँ माँगने का फैशन चल पड़ा है। जिस हालत में तुम उन छोकरियों को मुझे दोगे उसी हालत में मैं उन्हें तुमको फिर लौटा दूँगी। यह ज़रा बात तो भद्दी है मगर क्या करूँ...'

साइमन आँखें नीची करके सिर खुजलाता हुआ बोला :

‘आपने किसी तरह जान लिया है...मेरी एक पत्नी है...’

‘अच्छा...अच्छा...’

‘मुझे इक्क़रार करते हुए शर्म आती है कि अभी तक...उसे कैसे समझाऊँ...मेरी बधू ही है...’

बारसूकोवा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

‘मैं नहीं जानती थी कि तुम इतने शरीर हो ! अच्छा अपनी पत्नी ही दे दो...वह भी ठीक रहेगी। मगर क्या सचमुच तुमने उससे अभी तक कुछ भी नहीं किया है?’

‘कुछ भी नहीं, मगर उसके लिए मैं पूरे एक हज़ार लूँगा।’ साइमन ने गम्भीर चेहरा बनाकर कहा।

‘खैर, यह छोटी बात है। एक हज़ार ही सही, मगर यह तो कहो कि वह ठीक तरह से यहाँ व्यवहार करेगी?’

‘क्या कहती हो?’ साइमन ने आत्मविश्वास से कहा।

‘मैं तुमसे कह चुका हूँ कि तुम मेरी ताई हो। बस, मैं अपनी पत्नी को अपनी ताई के पास छोड़ जाता हूँ। वह मुझ पर इतनी लट्टू है कि मेरे पीछे उससे तुम मेरे हित में जो भी करने को कहोगी वह बड़ी खुशी से करने को तैयार हो जायगी। कोई चीँ चपड़ न करेगी!’

अब इस सम्बन्ध में उन दोनों को कोई बातें करनी नहीं रह गई थी, अतएव श्रीमती बारसूकोवा अन्दर जाकर एक हजार की हुण्डी का कागज़ ले आई और उस पर अपने बाप का नाम लिखकर अपने हस्ताक्षर कर दिये। हुण्डी काफ़ी बड़ी थी। मगर व्यापारियों की तरह

चोरों में भी आपस में बात का खयाल रक्खा जाता है। ऐसे धन्धों में लोग एक दूसरे को धोखा नहीं देते ; वरना मौत का उनसे सामना होता है। जेलों, गली-कूचों और चकलों में सभी जगह एक-सा क्रायदा है।

इसके बाद फौरन ही पिछले द्वार से भूत की तरह बारसूकोवा का प्यारा पति, नाचघर का मालिक, एक छोटे क़द का पोल ऊपर को मूछें मरोड़े हुए, अन्दर घुसा। सबने मिलकर कुछ देर तक शराबखोरी की, मेले का जिक्र छिड़ा और पकड़-धकड़ और व्यापार की दिक़्तों की बातें हुईं। फिर साइमन ने अपने होटल को टेलीफोन करके अपनी पत्नी को बुलवा लिया और उसका ताईजी और उनके चचेरे भाई से परिचय करा दिया। खुद, एकाएक ज़रूरी काम आ जाने से फौरन शहर के बाहर जाने का बहाना करके, सारा से बड़े प्रेम से लिपटकर मिला और आँखों में आँसू भरकर और उसको चूमकर उससे विदा लेकर उसे वहीं छोड़कर चला गया।

पाँचवाँ अध्याय

ईश्वर जाने साइमन के कितने नाम थे—हाँरीज़न, गोगलोविश, गिडलेविश, औकूनाँव, रोजमिटलस्की इत्यादि। उसके कटरे में आते ही कटरे के चकलों में भी बड़े परिवर्तन हो जाते थे। दुनिया इधर से उधर होने लगती थी। ट्रेपेल के यहाँ की छोकरियाँ अन्ना के चकले में, अन्ना के चकले की रुपयेवाली पेड़ियों में और रुपयेवाली पेड़ियों की छोकरियाँ अठन्नीवाली पेड़ियों में दीखने लगती थीं। किसी की तरक्की नहीं होती थी—हरएक की तनज्जुली ही होती थी। इस किस्म की प्रत्येक तबदीली और उलट-फेर से साइमन को पाँच से लेकर सौ रुपए तक मिल जाते थे। सचमुच इस आदमी में इमात्रा के प्रपात की तरह शक्ति थी। दिन में अन्ना के पास बैठा, सिगरेट के धुएँ से आँखें मीचता हुआ और एक टाँग पर दूसरी रखकर हिलाता हुआ, वह इस प्रकार बातचीत करता दिखाई देता था :

‘सवाल यह है...कि अब इस सोनका की तुम्हें क्या ज़रूरत है ? किसी अच्छे चकले के लायक तो अब वह रही नहीं है। उसे यहाँ से भटिया चकले में भेज दिया जाय तो तुम्हें सौ रुपए मिल सकते हैं और

मुझे भी पच्चीस रुपए का फ्रायदा हो सकता है। सच बताओ, क्या अब तक उसकी माँग यहाँ है ?'

‘अरे मिस्टर शैटत्स्की ! आपसे बातचीत में जीतना तो किसी को भी सम्भव नहीं है। मगर ज़रा सोचो तो मुझे कितना दुःख उसके लिए होगा ! बेचारी कैसी अच्छी छोकरी है !’

साइमन क्षण-भर सोचने लगा। फिर उपयुक्त कहावत सोचकर कहता—‘गिरे पर दुनिया में सभी लात मारते हैं ! क्या किया जाय ! मुझे पूरा यकीन है कि अब इस चकले में उसे कोई नहीं चाहता होगा ।’

इसाय जो नाटा, बीमार और बूढ़ा होते हुए भी ऐसे मौकों पर बड़ी दृढ़ता से बातें करता था। साइमन का समर्थन करता हुआ कहता, ‘बड़ी सादी बात तो है। सचमुच उसको इस चकले में अब कोई नहीं बुलाता। ज़रा सोचो तो, अन्ना ! पचास रुपए की उसकी चीजें हैं, पच्चीस रुपए मिस्टर शैटत्स्की को मिल जायँगे, पचास हम लोगों को बच जायँगे। मगर यहाँ से उसके चले जाने पर, ईश्वर की कृपा से, हमारा चकला बदनाम होने से तो बचेगा ।’

इस प्रकार सोनका रुपयेवाले चकले से निकालकर अठन्नीवाले चकले में भेज दी गई, जहाँ तमाम क्रिस्म के लुच्चे-लुंगाड़े और आवारे छोकरीयों से जो चाहें सो रात भर करते थे। वहाँ काम सँभालने के लिए बड़ी शारीरिक शक्ति और स्नायुबल की आवश्यकता पड़ती थी। एक बार सोनका ने वहाँ की थेलका नाम की ढाई मन की मालकिन को, जल्दी से आँगन में पेशाब करने के लिए बैठते हुए, दर्वान से कहते सुना—‘देखो, आज छत्तीस मेहमान एक साथ आनेवाले हैं उनको मत भूल जाना’ तो उसका दम खुश्क हो गया।

खुशक्रिस्मती से सोनका को यहाँ भी कोई अधिक परेशान नहीं करता था। इस चकले में भी उसकी अधिक माँग नहीं होती थी। जब कोई दूसरी छोकरी खाली नहीं होती थी तभी लोगों का ध्यान उसकी

तरफ़ होता था। सोनका का यहूदी प्रेमी उसको ढूँढ़ता हुआ यहाँ भी आ पहुँचा। वह रोज़ शाम को उसके पास आया करता था। मगर अपनी बुज़बिली, अथवा यहूदी परहेज़, अथवा शायद उसके प्रति शारीरिक घृणा के कारण चकले से निकालकर अपने घर सोनका को बैठा लेने की उसे कभी हिम्मत नहीं हुई। रात-रात भर वह आकर उसके पास बैठता था और वह अन्दर चली जाती थी तो बड़े सब्र से उसके लौटने का इन्तज़ार करता था और उसके लौटने पर ईर्ष्या का इज़हार करता और खुद कुढ़ता और उसे कुढ़ाता था, मगर फिर भी वह सोनका को हृदय से चाहता था। दिन भर बेचारा दूकान पर दवाएँ बनाता हुआ बराबर सोनका की याद किया करता था।

छठा अध्याय

शहर के छोर के एक कैबैरेट १ के द्वार पर घुसते ही एक मसनूई फूलों की ब्यारी थी जिसमें फूलों के स्थान पर बिजली के रङ्ग-बिरंगे बल्ब चमकते थे और इसी प्रकार की चमकती हुई मेहराबों के नीचे घूमता हुआ एक रास्ता बगीचे के भीतर चला जाता था। आगे चल कर एक चौड़ी, छोटी चौकोर जगह थी जिस पर पीली रेत बिछी हुई थी। उसकी बाईं तरफ एक खुला स्टेज नाटक खेलने के लिए बना था, सामने एक सीप की शक्ल की जगह बैण्डवालों के लिए बनी थी और मेजें थीं जिन पर शराब की बोतलें और फूलों के गुलदस्ते रक्खे थे ; दाईं तरफ रेस्तराँ की लम्बी जगह थी। ऊँचे-ऊँचे खम्भों पर लगे हुए बिजली के गोल गोल कन्दीलों का मन्द, दूध का-सा धुला सफेद प्रकाश चौकोर जगह में फैल रहा था। कन्दीलों के फ्रास्टेड २ शीशों

१. कैबैरेट उस जगह को कहते हैं जहाँ विश्राम-गृह अर्थात् खाने-पीने के स्थान के साथ-साथ नाचने इत्यादि का स्थान और प्रबन्ध भी होता है।

२. शीशे जिनको रगड़कर धुंधला कर दिया जाता है जिससे रोशनी सीधी आँखों में न पड़े।

पर, जिन पर तार की जालियाँ लगी थीं ; पतंगों के मुण्ड के मुण्ड आ-आकर अपना सिर पटकते थे और उनकी काँपती हुई परेशान छायाएँ नीचे ज़मीन पर लोटती थीं। भूखी स्त्रियाँ हल्की, दिखावटी, रङ्ग-विरंगी पोशाकें पहिने हुए जिनके चेहरों पर बेफ़िक्री की मौज अथवा ऐसा बड़प्पन और अभिमान का भाव दीखता था कि जिससे उनके पास फटकने की हिम्मत न हो, जोड़ों में मदों के साथ थकी हुई चाल से इधर से उधर और उधर से इधर थिरक रही थीं। रेस्टोराँ की सारी मेजें धिर चुकीं थीं—और उन पर से छुरी, काटों और तश्तरियों की आवाज़ और लगातार गपशप की बहती हुई लहरें उठ रही थीं। खाने की चटपटी सुगन्ध हवा में मँहक रही थी। रेस्टोराँ के बीचोंबीच बाजे बजने की जगह पर, लाल कपड़ों में, हट्टे-कट्टे, सफ़ेद दातों के, चिकने व गलमुच्छेवाले रूमानिया के निवासी, मूर्छे नीची किये हुये, बन्दरों की तरह बाजे बजा रहे थे और रेस्टोराँ का नेता, आगे की तरफ़ झुक-झुककर, बनावटी अदा से झूमता हुआ, बेला बजा रहा था और लोगों की तरफ़ ऐसी भोंड़ी तरह पर कटाक्ष करता था जैसा कि मर्द-वेश्यायें^१ करते हैं। बिजली की बत्तियों का थका प्रकाश, स्त्रियों के भड़कीले शृंगारों की चमक-दमक, चटपटे खानों की महक और बाजों के संगीत का उतार-चढ़ाव और लचक, सब मिलकर एक पगली, उकतानेवाली, मूर्खतापूर्ण ऐय्याशी और हँसी-खुशी की उन्मत्त शराबखोरी का समा बना रहे थे।

रेस्टोराँ के हाल में, ऊपर चारों तरफ़, खुली हुई गैलरियाँ थीं जिनमें बहुत से निजी कमरों के द्वार खुलते थे। इन निजी कमरों में से एक में दो स्त्रियाँ और दो मर्द बैठे हुए थे। इनमें से एक तो रूस की प्रख्यात गानेवाली रोविन्सकाया नाम की ऐक्ट्रेस थी, लम्बी और हरी-हरी मिश्र देश की स्त्रियों की-सी आँखोंवाली थी जिसका शरीर

१. यूरोप में मर्द वेश्यायें भी होते हैं।

भरा हुआ और सुन्दर, मुँह लाल और लम्बा तथा उत्तेजक और लोभी हौठ दोनों पर फुके हुए थे ; दूसरी एक अमीर स्त्री बैरोनेस टेफटिङ्ग नाम की थी जो छोटी, सुन्दर और पीली-पीली थी और हमेशा वह रोविन्सकामा के साथ-साथ घूमा करती थी ; तीसरा आदमी प्रख्यात वकील रायजेनॉव था ; और चौथा बोलेद्या चैपलिनस्की नाम का एक अमीर दुनियादार नौजवान था जो कवि भी था और जिसकी रोजमर्रा की बातों पर बनाई हुई कविताएँ शहर में काफ़ी प्रचलित थीं ।

कमरे की दीवारें लाल थीं और उन पर सुनहरी काम किया हुआ था । मेज़ पर बिजली की बत्तियों के प्रकाश में रखे हुए चाँदी की कलाई के एक बर्तन से, जिसके ऊपर ठण्ड से पानी की बूँदे आ गई थीं, दो शराब की बोतलों की काली-काली गर्दनें निकल रही थीं और शराब के गिलासों में बारीक सुनहरी रोशनी भर रही थी । कमरे से बाहर, द्वार के पास, दीवार के सहारे एक वेटर इन लोगों का हुक्म बजा लाने के लिए तैनात खड़ा था । होटल की तगड़ी व लम्बी मालकिन जिसके दाहिने हाथ की छिगुनी एक बड़े हीरे की अँगूठी पहिने हमेशा बाहर को निकली रहती थी, टहलती हुई बार-बार इन कमरों के द्वारों के पास आती थी और ठिठक-ठिठककर अन्दर की बातें अपना एक कान लगाकर सुनने का प्रयत्न करती थी ।

बैरोनेस थके व पीले चेहरे से, अपना चश्मा उठा-उठाकर नीचे की भीड़ को बार-बार देखती थी जो मुँह चलाती और गुन-गुनाती हुई अपना वक्त काट रही थी । स्त्रियों की लाल, सफेद, नीली, और ज़र्द पोशाकों में मर्दों की एक-सी शक्लें लम्बे, चौड़े व काले पतङ्गों की तरह लग रही थीं । रोविन्सकाया लापरवाही से, मगर ग़ौर से, बाजे बजानेवालों और तमाशवीनों की तरफ देख रही थी और उसके चेहरे पर भी थकान और शायद उस सन्तोष की बदहजमी के चिह्न

दीख रहे थे जो कि मशहूर शख्सों को ऐसे आम दृश्य देखते-देखते होने लगती है। उसके बायें हाथ की सुन्दर, लम्बी व पतली-पतली उङ्गलियाँ उसकी कुर्सी की लाल मखमल पर रखी हुई थीं। अँगुलियों पर हीरों और लालों की बेशक्रीमती अङ्गूठियाँ इस लापरवाही से लटक रही थीं मानो वे किसी भी क्षण अँगुलियों में से निकलकर नीचे गिर पड़ेंगी। एकाएक वह हँसने लगी।

‘देखो’ वह बोली, ‘वह आदमी कैसा हास्यास्पद दीखता है... सच तो यह है कि यह पेशा ही हास्यास्पद है ! देखो वहाँ वह बाजा वाला जो सप्तसुरी बजा रहा है !’

सबके सब बाजेवाले की तरफ़ देखने लगे। सचमुच उस दृश्य को देखकर हँसी रोकना मुश्किल था। रुमानियन आदमियों के आँरकेस्ट्रा में एक मोटा, गलमुच्छेदार आदमी बैठा हुआ, जो कि एक बड़े खानदान का ही नहीं बल्कि शायद पिता का पितामह भी होगा, सप्तसुरी की सातों बाँसुरियों को फूँकफूँक कर बजा रहा था। बाजे को अपने मुँह पर इधर-उधर ले जाना उसके लिए कठिन था, अतएव वह जल्दी-जल्दी अपना मुँह दायें-बायें करता हुआ बाँसुरियाँ फूँक रहा था।

‘विचित्र धन्धा है यह भी’ रोविन्सकाया बोली, ‘चैपलिन्स्की तुम तो ज़रा अपना मुँह इस तरह चलाने की कोशिश करो।’

बोलोद्या चैपलिन्स्की उस पर मन ही मन बेतरह से फ़िदा था, अतएव उसका हुक्म होते ही वह उत्साह से बाजेवाले की तरह इधर-उधर अपना मुँह करने का प्रयत्न करने लगा, मगर क्षणभर ही में बन्द करके वह कहने लगा :

‘असम्भव है। इसके लिए बड़ा अभ्यास अथवा खानदानी लियाक़त की ज़रूरत है।’

वैरोनेस एक गुलाब के फूल की पँखुड़ियाँ तोड़-तोड़कर चुपचाप एक

प्याले में डाल रही थी। वह बड़ी मुश्किल से अपनी जँभाई को रोकती हुई रुखा मुख बनाकर कहने लगी :

‘हे ईश्वर, किस बुरी तरह से यहाँ लोग वक्त काटते हैं ! देखो न तो हँसी ही है, न गाना और न नाचना। ऐसा लगता है मानों मेड़ों की तरह लोग यहाँ बाड़े में जबरदस्ती वक्त काटने के लिए भर दिये गये हों।’

रायजेनॉव ने सुस्ती से अपना जाम उठाया और उसमें से थोड़ी शराब पीकर लापरवाही से अपनी सुन्दर आवाज़ में बोला, ‘अच्छा, क्या आपके पेरिस या नाइस में लोग यहाँ से अधिक आनन्द उठाते हैं ? मेरा तो ख्याल है कि आनन्द उठानेवाले लोग ही अब दुनिया से उठ चुके हैं और फिर उनके दुनिया में आने की भी सम्भावना अब बिल्कुल नहीं लगती। मैं समझता हूँ लोगों को समझने के लिए काफ़ी सब्र की ज़रूरत है। क्या पता नीचे हाल में भरे हुए इन तमाम आदमियों के लिए आज की शाम भी काफ़ी छुट्टी की और आराम देनेवाली हो ?’

‘मुलज़िमों की तरफ़ से आपका सफ़ाई का व्याख्यान’ चैपलिनस्की ने अपने शान्त ढङ्ग से कहा।

मगर रोविन्सकाया ने एकाएक इन लोगों की तरफ़ घूमकर देखा और उसकी नीलम की तरह आँखें छोटी हो गईं। यह उसके क्रोध का चिह्न था जिस को देखकर शाही खानदानों के शाहज़ादे भी कभी कभी सिटपिटा जाते थे, मगर उसने तुरन्त ही अपने आपको सँभालकर सुस्ती से कहा :

‘मेरी समझ में नहीं आता कि आप लोग किस बात के लिए इतनी बहस कर रहे हैं। मैं यह भी नहीं समझती कि यहाँ पर हम लोगों के आने का मतलब क्या था, क्योंकि अब देखने के लिए दुनिया में क्या रह गया है ? मैंने स्पेन में बैलों की लड़ाइयाँ देखी हैं जिन्हें देखकर हृदय में बड़ी घृणा उत्पन्न होती है। मैंने आदमियों की कुशितयाँ

और घूसेबाज़ी भी देखी जो कि बिल्कुल बेहूदा चीज़ें हैं। मैंने चीतों के शिकार में भी हिस्सा लिया है जिसमें मैं एक बड़े, बुद्धिमान, सफेद हाथी की पीठ पर हौदे में एक छत्र की छाया में बैठी थी।...सूक्ष्म में आप सब लोग यह सब अच्छी तरह जानते ही हैं और मेरे इस सारे महान्, रङ्गीन, गुलाबी जीवन में जिसमें मैं बूढ़ी हो गई हूँ...'

'बूढ़ी हो गई हूँ ? क्या कहती हो ऐलेना विकटोरोव्ना !' चैपलिनसकी ने स्नेह से उसे फिड़का ।

'चापलूसी की बातें जाने दो, बोलोद्या ! मैं अच्छी तरह जानती हूँ मेरा शरीर अभी तक सुन्दर और जवान है, मगर सचमुच मुझे कभी-कभी लगता है कि मैं निन्यानवे वर्ष की हूँ। मेरी आत्मा ऐसी थक गई है। किसी तरह मैं चलाये जाती हूँ। अपने सारे जीवन में सिर्फ़ तीन घटनाओं ने मेरी आत्मा पर असर किया जो मुझे अच्छी तरह याद है। पहिली तो जब मैं बिल्कुल छोकरी ही थी तब हुई थी। एक दिन मैंने एक बिल्ली को धीरे-धीरे दबक-दबक कर एक गौरैया पर हमला करने के लिए जाते देखा। मैं घबराई हुई उस बिल्ली की होशियारी की चाल और गौरैया की सजग निगाह की तरफ़ चुपचाप देखने लगी। मुझे आज तक पता नहीं है कि मुझे उस बिल्ली की चतुराई से अधिक सहानुभूति थी अथवा उस गौरैया की फुर्ती से। गौरैया बिल्ली से अधिक फुर्तीली निकली। क्षणभर में फुदककर वह पेड़ की शाख पर जा बैठी और वहाँ से चहक-चहक कर उसने बिल्ली को अपनी भाषा में ऐसी-ऐसी सुनानी शुरू की कि मुझे यकीन है कि मैं उसकी भाषा जानती होती तो उसकी गालियाँ सुनकर मेरा चेहरा लाल हो जाता। बिल्ली ने इस प्रकार अपनी दुम सीधी करके ऊपर को उठाई मानो उसके साथ बड़ा अन्याय हुआ हो और वह ऐसा बहाना-सा करने लगी जैसे कि कुछ हुआ ही नहीं। दूसरी घटना एक मशहूर गायक के साथ मैं गाने के लिए जब स्टेज पर गई तब हुई।...

‘किस गायक के साथ ?’ वैरोनेस ने जल्दी से पूछा ।

‘कोई सही ! नाम से क्या मतलब है ? जब मैं उसके साथ गाने लगी तो मुझे ऐसा लगा कि मेरी आत्मा सङ्गीत से भरी जा रही है और उसकी आवाज़ से अपनी आवाज़ मिलाकर मैंने कैसा सुन्दर सङ्गीत का आलाप किया ! आह, उसका वर्णन करना असम्भव है ! आज भी याद से रोमाञ्च हो उठता है ! शायद ऐसा जीवन में एक ही बार होता है ! मुझे अपने पार्ट के अनुसार उसके साथ गाते-गाते रोना भी था ! मैं दिल से, आँखों में सच्चे आँसू भर कर रोई और बाद में पर्दा गिर जाने पर जब उस महान् गायक ने आकर अपने विशाल और गरम हाथों से मेरे बाल थपथपाकर अपनी जादूभरी मुस्कान से मुझसे कहा, ‘बहुत सुन्दर गाया ! अपने जीवन में आज पहली ही बार मैंने ऐसा सुन्दर गाया है’...तब मैंने...मुझे आज तक अभिमान है...उसके हाथ पकड़ कर चूम लिये । उस वक्त भी मेरी आँखों में आँसू भर रहे थे...’

‘और तीसरी घटना ?’ वैरोनेस ने पूछा । उसकी आँखें ईर्ष्या से जल उठी थीं ।

‘तीसरी घटना,’ ऐक्ट्रेस ने अफमोस से कहा, ‘तीसरी घटना बड़ी साधारण-सी है । पिछले वर्ष जब मैं नाइस में थी तो मैंने एक नाटक देखा जिसमें सीसेल केटन पार्ट ले रही थी जो बेचारी—अब भगवान् जाने उसके लिए यह अच्छा हुआ या बुरा—इस संसार में नहीं है ।’

यह कहते हुए एकाएक उसकी सुन्दर आँखें भर आईं और इस प्रकार की एक जादू की-सी हरी-हरी रोशनी से चमक उठीं जैसी कि ग्रीष्म ऋतु की सन्ध्या में सितारों से निकलती है । उसने अपना मुँह फेर लिया और उसकी लम्बी-लम्बी उँगलियाँ परेशानी से तुर्सी की मखमल को पकड़-पकड़कर मसलती रहीं ; मगर फिर जब उसने अपना

मुँह अपने मित्रों की तरफ मोड़ा तो उसकी आखें सूखी थीं और उसके रहस्यमय और हठीले होठों पर मुस्कान नाच रही थी ।

रायज़ानोव ने उससे एक बड़ी विनम्र और निश्चयपूर्वक शान्त आवाज़ में पूछा :

‘लेकिन ऐलेना विकटोरोव्ना, अपनी इतनी शोहरत, अपने भक्तों और लोगों की तालियाँ और आनन्द से भी तुम्हारी आत्मा में प्रसन्नता नहीं आती ?’

‘नहीं, रायज़ानोव,’ उसने थकी हुई आवाज़ में उत्तर दिया, ‘तुम भी अच्छी तरह जानते हो कि उस सारे नाम और शोहरत का मूल्य क्या है—एक अखबार का सम्वाददाता जो अपने दोस्तों के लिए मुफ्त के टिकट और एक बन्द लिफ़ाफ़े में पच्चीस रुपये चाहता है, स्कूलों और कालिजों के छोकरे और छोकरियाँ जो अपनी किताबों पर मुफ्त में कुछ लिखाकर दूसरों को दिखाना चाहते हैं ; कुछ बूढ़े मूर्ख, पेन्शन-याफ़्ता जनरल या कर्नल जो मेरे गाने को सुनकर गुनगुनाने लगते हैं ; जिधर जाओ उधर ही लोगों का उँगलियाँ उठाकर कहना, ‘वह जा रही है—वह प्रख्यात गानेवाली !’ गुमनाम तारीफ़ के खत और गा चुकने के बाद लोगों का, जिनकी ऐसी आदत पड़ी होती है, स्टेज के पीछे आकर फूल भेंट करना ! यही तो शोहरत का नतीजा होता है या और भी कुछ ? तुम्हें भी तो ऐसी काफी स्त्रियों से अवसर पड़ता होगा ?’

‘हाँ, हाँ,’ रायज़ानोव ने निश्चय से कहा ।

‘बस इसी को शोहरत कहते हैं ! मगर सबसे खराब बात तो यह है कि जब मैं अपनी अन्तरात्मा में संगीत भरकर गाना चाहती हूँ तब मैं अनुभव करती हूँ कि मैं लोगों की तरफ भूठे हावभाव कर रही हूँ...और मेरे हृदय में इस बात का डर भरा हुआ है कि कहीं लोग मुझसे अधिक किसी दूसरी गानेवाली को पसन्द न करने लगें...और मुझे हमेशा यह डर लगता रहता है कि कहीं जोर से अधिक गाने से गला खराब न हो

जाय... हमेशा गला ठीक बनाये रखने की फिक्र लगी रहती है ! शोहरत भी सचमुच एक बड़ा बोझ है !'

‘मगर हुनर की शोहरत ?’ वकील ने कहा, ‘कलाविद् की शक्ति राजाओं और महाराजाओं की शक्ति से भी कहीं बढ़कर होती है !’

‘हाँ, हाँ, ठीक कहते हो मित्र । मगर शोहरत और शोहरतमन्द दूर से ही अच्छे होते हैं... उनका स्वप्न ही प्रिय होता है ! जब शोहरत पास आ जाती है तो वह छेदने लगती है और जब वह फिर घटने लगती है तो उसका जरा-जरा-सा घटना बड़ा बुरा लगता है । एक बात कहना तो मैं भूल ही गई । हम ऐक्टों को बिल्कुल सख्त मशकत की सजा रहती है । सुबह की वरजिश, १ दिन में रिहर्सलें, फिर खाना इत्यादि खाकर जैसे ही तैयार हुए तमाशे का वक्त आ जाता है और उसमें लग जाना होता है । एक-दो घण्टे कभी पढ़ने-लिखने को या आनन्द करने को, जैसा इस वक्त हम लोग कर रहे हैं, मिल जाते हैं तो हम लोग उसे अपना बड़ा भाग्य समझते हैं और फिर आनन्द भी ऐसा लचर...’

उसने यह कहकर अपना हाथ उठाकर उङ्गलियों से, लापरवाही दिखाते हुए, थकान का इशारा किया ।

वोलोद्या चैपलिनस्की ने इस बातचीत से घबराकर एकाएक पूछा, ‘अच्छा ऐलेना त्रिकोरोव्ना, यह बताओ कि अपनी थकान और ऊब दूर करने के लिए तुम्हें किस किस्म के आनन्द की ज़रूरत लगती है ?’

उसने चैपलिनस्की की तरफ गूढ़ दृष्टि से देखा और फिर, ऐसा लगा कुछ शर्माकर, शान्तभाव से बोली :

‘पूर्वकाल के लोग आनन्द करते थे क्योंकि वे बड़े आज़ाद तबीयत

१ हिन्दुस्तान के अभिनेता और अभिनेत्रियाँ ऐसा नियमित जीवन नहीं रखने लीलिय शीघ्र ही ख्याति के साथ-साथ चर्चा भी उनपर बढ़ने लगती है ।

के होते थे। मुझे लगता है कि मैं भी उसी काल में जन्मी होती तो बड़ी सुखी रहती। आह, कहाँ है वह पुराना रोम का ज़माना !'

रायज़ानोव ने जिसके सिवा किसी की समझ में उसकी बात न आई, उसकी तरफ़ न देखते हुए, अपनी कोमल आवाज़ में धीमे से, ऐक्टर की भाँति, एक पुरानी लैटिन की कहावत कही।

‘बिल्कुल ठीक ! रायज़ानोव मुझे तुम बहुत ही भाते हो क्योंकि तुम बड़े चतुर हो। तुम उड़ते हुए विचारों को भी फौरन पकड़ लेते हो गोकि मैं साथ में यह भी कहूँगी कि यह कोई बड़ी बुद्धिमानी की बात नहीं है। सचमुच दो प्राणी एक दूसरे से मिलते हैं, हिल-मिलकर साथ-साथ बैठते हैं, खाते-पीते हैं और फिर उनमें से एक चल देता है, समझे—हमेशा के लिए इस ज़िन्दगी को छोड़कर चल देता है, न किसी से गिला या शिकवा उसे होता है और न किसी से भय। कैसा महान् दृश्य है—मेरे मनको यह दृश्य कैसा लुभाता है !’

‘कितनी क्रूरता तुममें भरी हुई है’ बैरोनेस ने विचारते हुए कहा।

‘हाँ, मगर उसका अब क्या उपाय हो सकता है ! मेरे पूर्वज बड़े लड़ाकू और लुटेरे थे। खैर, अब यहाँ से हमलोग चलेंगे नहीं ?’

सब लोग उठकर बाग़ के बाहर गये। चैपलिनस्की ने अपनी मोटर-गाड़ी बुलवाई। ऐलेना विक्टोरोव्ना उसकी बाँह पर झुक रही थी। एका-एक उसने पूछा।

‘सच कहना, बोलोद्या, जब तुम भली कहलानेवाली स्त्रियों का साथ छोड़ देते हो तो फिर कहाँ जाते हो ?’

चैपलिनस्की इस एकाएक पूछे गये प्रश्न से चक्कर में पड़ गया, मगर वह अच्छी तरह जानता था कि रोविन्सकाया से झूठ बोलना सम्भव नहीं है।

‘श्रीमती...आपसे कहना उचित नहीं है। ज़िगानी जैसे होटल और नाचघरों में...’

‘और भी कहीं ? इससे भी बुरी जगह ?’

‘आप मुझे बड़ी मुश्किल में डाल रही हैं। जब से मैं तुम्हें प्यार करता हूँ तब से...’

‘छोड़ो, छोड़ो, यह अपने प्रेम की बातें छोड़ों!’

‘अच्छा, मगर कैसे कहूँ?’ बोलोद्या बड़बड़ाने लगा और उसका मुँह ही नहीं बल्कि सारा शरीर लाल हो गया, ‘और हाँ, औरतों के पास। मगर यह मैं नहीं करता...’

रोविन्सकाया ने ईर्ष्या से उसकी बाँह ज़ोर से अपने शरीर से चिपटा कर पूछा, ‘चकले में?’

बोलोद्या ने कुछ उत्तर नहीं दिया। फिर वह बोली, ‘चलो हम लोगों को भी अभी फौरन तुम अपनी मोटर-गाड़ी से चकले में ले चलो। मगर देखो, वहाँ मेरी रक्ता का सारा भार तुम पर रहेगा।’

दूसरे दोनों मित्रों ने भी इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया क्योंकि ऐलेना विक्टोरोव्ना का विरोध करना असम्भव था। वह हमेशा जो चाहती थी सो करती थी और उन लोगों को यह भी मालूम था कि पीटर्सवर्ग में शराबखोर स्त्रियाँ और छोकरियाँ भी, अपनी मौज और अपने अहङ्कार में इससे भी विचित्र-विचित्र बातें करती हैं जो रोविन्सकाया ने इस समय करने का प्रस्ताव किया था।



सातवाँ अध्याय

कटरे की तरफ जाते हुए रोविन्सकाया रास्ते में बोलोद्या से बोली—
‘पहले सबसे बढ़िया चकले में, फिर मध्यम श्रेणी के चकले में और
बाद में सबसे खराब चकले में ले चलना ।’

‘मेरी प्यारी ऐलेना विक्टोरोव्ना,’ चैपलिनस्की ने स्नेह से कहा, ‘मैं
तुम्हारे लिए, सभी कुछ करने को तैयार हूँ। मैं डींग नहीं मारता।
सचमुच अपनी जान और सब कुछ तुम्हारे इशारे पर दे देने को तैयार
हूँ...मगर इन चकलों में तुम्हें ले जाने की मेरी हिम्मत नहीं होती।
रूसी लोगों का बर्ताव बड़ा भोंड़ा होता है...अक्सर जानवरों का-सा
होता है। मैं डरता हूँ कहीं तुमसे वहाँ कोई बुरी बात न कह बैठे या
कोई वहाँ का मेहमान तुम्हारे साथ कोई बुरा बर्ताव न कर बैठे...’

‘हे भगवान्’ रोविन्सकाया ने बेसव्री से उसकी बात काटते हुए
कहा, ‘जब मैं लन्दन में गाया करती थी तब बहुत से लोग मुझसे प्रेम
करना चाहते थे। मगर उस समय भी मैं अपने मित्रों के साथ गन्दे-से-
गन्दे स्थानों में जाने से नहीं हिचकती थी। किसी ने कभी मुझसे कोई
बुरी बात नहीं की और न बुरा व्यवहार ही किया। हाँ, उस समय

हमेशा मेरे साथ दो अमीर अँग्रेज़ रहते थे, जो दोनो लार्ड थे, खेल-कूद में भाग लेनेवाले अच्छे खिलाड़ी थे और शारीरिक और नैतिक दृष्टि से बलवान भी थे। वे कभी किसी औरत का अपने सामने अपमान होता नहीं देख सकते थे। मगर बोलोव्या तुम शायद कायर जाति के हो ?'

चैपलिन्सकी क्रोध से लाल होकर बोला :

‘क्या कहती हो, ऐलेना विक्टोरोव्ना ! मैं तो अपने स्नेह के कारण तुम्हें पहले से आगाह कर रहा था। जहाँ तुम्हारा हुक्म होगा मैं तुम्हें ले चलने को तैयार हूँ। इन खराब स्थानों में ही नहीं बल्कि मौत का मुक्कावला करने को चलना हो तो वहाँ भी मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।’

इस वक्त उनकी गाड़ी कटरे के सबसे शानदार और अमीर चकले ट्रेपेल के द्वार पर पहुँच चुकी थी। रायज़ानोव ने अपनी तीक्ष्ण सुसकान सुसकराते हुए कहा—‘अच्छा तो अब हम लोग चिड़ियों की नुमाइश देखना शुरू करते हैं।’

वे लोग एक कमरे में ले जाकर बैठा दिये गये जिसकी दीवारों पर लाल रङ्ग का कागज़ लगा था और जिस पर शाही ढंग पर मालाओं के सुनहले चित्र बने हुए थे। रोविन्सकाया का ध्यान फौरन इस बात पर गया कि जिस कमरे से वे लोग अभी उठकर आ रहे थे वहाँ भी ऐसा ही कागज़ दीवारों पर लगा था।

बाल्टिक प्रान्तों की चार जर्मन स्त्रियाँ कमरे में आईं। चारों की चारों तगड़ी, भरी छातियों की और सुनहरी बालों की थीं। वे चेहरों पर पाउडर लगाये हुए थीं और भली और बाइज़ज़त दीखती थीं। शुरू में कोई बातचीत नहीं हुई। छोकरियाँ आकर चुपचाप मूर्तियों की तरह बैठ गईं और भले घरों की स्त्रियों का-सा व्यवहार करने का बहाना करने लगीं। रायज़ानोव ने शैम्पैन मँगवाई मगर उससे भी उनके व्यवहार में कोई फर्क नहीं पड़ा। अतएव रोविन्सकाया ने ही

वातचीत गुरु की। सबसे तगड़ी और सुन्दर छोकरी से जो डबल रोटी की तरह दीखती थी, उसने नम्रता से जर्मन भाषा में पूछा—‘कहिये, आपका जन्म कहाँ हुआ था ? जर्मनी में शायद ?’

‘जी नहीं, श्रीमती जी, मैं रीगा की रहनेवाली हूँ।’

‘यह किस वजह से आप आई ? गरीबी की वजह से ?’

‘जी नहीं, श्रीमती जी। बात यह है कि मेरा आदमी हॉन्स जिससे मेरी शादी होनेवाली है, एक होटल में नौकर है जहाँ उसको इतना वेतन नहीं मिलता जिसमें हम दोनों की, यदि हम शादी कर लें तो, गृहस्थी चल सके। अतएव मैं और वह दोनों रुपया कमाकर, बचा-बचाकर, बैंक में रख रहे हैं। जैसा ही हम लोग दस हजार रुपये जमा कर लेंगे वैसे ही हम दोनों मिलकर अपनी शराब की दूकान खोल लेंगे और तब ईश्वर की इच्छा हुई तो हमारी गृहस्थी होगी और बाल-बच्चे होंगे। कम से कम दो बच्चे—एक लड़का और एक लड़की।’

‘लेकिन सुनिये तो श्रीमती’ रोविन्सकाया को बड़ा ही आश्चर्य हुआ, ‘तुम जवान हो, सुन्दर हो और दो भाषाएँ जानती हो...’

‘तीन भाषाएँ श्रीमती जी’ जर्मन छोकरी ने अभिमान से कहा।

‘मुझे लैटिन भी आती है। मैं प्राइमरी स्कूल के बाद हाईस्कूल के पाँचवें दर्जे तक पढ़ी थी।’

‘अच्छा, अच्छा तो इतनी पढ़ी-लिखी होने पर...’ रोविन्सकाया ने जोश में भरते हुए कहा, ‘तुम कहीं भी खाने और रहने के साथ-साथ लगभग तीस रुपये की नौकरी तो आसानी से पा ही सकती हो। कहीं भी घर का प्रबन्ध करने के लिए, अथवा बच्चों को देखने के लिए, अथवा दूकान में क्लार्क या मुनीम का काम तो तुम मज़े से कर सकती हो...और तुम्हारा आदमी जिससे तुम्हारा विवाह होनेवाला है... फ़िज़ भी...’

‘उसका नाम हॉन्स है, श्रीमती...’

‘हाँ, हाँ हॉन्स भी यदि मेहनती और मितव्ययी हो तो तुम और वह दोनों मिलकर तीन-चार वर्ष में अपनी गृहस्थी अच्छे ढंग पर बसा सकते हो। क्या राय है तुम्हारी?’

‘आह श्रीमती, आप थोड़ी ग़लती करती हैं। अच्छी से अच्छी नौकरी में भी मैं पन्द्रह या बीस रुपये महीने से अधिक नहीं बचा पाऊँगी। यहाँ मैं महीने में सौ रुपये तक बचा लेती हूँ और उन्हें ले जाकर फौरन बैंक में रख देती हूँ। उसके सिवा जरा यह भी तो सोचिये श्रीमती जी कि किसी के घर में नौकरी करना कितना हेय काम है! हमेशा मालिकों की उङ्गलियों पर नाचते रहना होता है! और मालिक अपनी बेवकूफी भी दिखाता है। छी...छी...!...और मालिकन का जलन के मारे दिल बैठता है...जिससे वह रोज डाँटती और फट-कारती है...ओह राम रे!’

‘मेरी समझ में तुम्हारी बात नहीं आती...’ रोविन्सकाया ने सोचते हुए कहा और उसकी तरफ़ न देखकर आँखें नीची करके ज़मीन की तरफ़ देखने लगी। फिर वह—‘बोली मैंने यहाँ की तुम्हारी जिन्दगी के बारे में बहुत कुछ सुना है...चकलों की जिन्दगी के बारे में! सुना है यहाँ का जीवन बड़ा भयंकर है। गन्दे से गन्दे बूढ़ों से प्रेम करना होता है और बुरी तरह से पीटा भी जाता है...’

‘जी नहीं, जी नहीं, श्रीमती जी...। हमारी हर एक की यहाँ अलग अलग हिसाब की किताबें रहती हैं। जिनमें महीने भर की सारी आमदनी और खर्च दर्ज कर दिया जाता है। पिछले महीने में मैंने पाँच सौ रुपये से कुछ ज़्यादा कमाये थे। दो तिहाई कमाई मालकिन खाने-पीने, रहने और दूसरे खर्च के लिए ले लेती हैं इसलिए डेढ़ सौ से कुछ अधिक मुझे बच रहे। पचास रुपये कपड़ों और जेब-खर्च पर मेरे खर्च हो जाते हैं। सौ रुपये मुझे बच रहते हैं। बताइये, इसमें मेरे साथ कौन-सा अन्याय होता है! यह सच है कभी-कभी बड़े गन्दे

आदमी भी यहाँ आते हैं—मगर यह ज़रूरी नहीं है कि मैं उनके पास जाऊँ ही, मुझे यदि कोई आदमी पसन्द न हो तो मैं बीमारी का बहाना कर सकती हूँ और मेरी बजाय उसके पास किसी नई आनेवाली छोकरी को भेज दिया जायगा ।...’

‘माफ़ कीजिये...मुझे आपका नाम तो अभी तक मालूम ही नहीं हुआ...’

‘एल्सा ।’

‘मैंने सुना है यहाँ आप लोगों के साथ बड़ा खराब व्यवहार किया जाता है...कभी-कभी पीटा भी जाता है...और ऐसे-ऐसे काम करने के लिए मजबूर किया जाता है जो तुम्हें बिल्कुल पसन्द नहीं होते ।’

‘जी नहीं, श्रीमती जी, कभी नहीं !’ एल्सा ने क्रोध दिखाते हुए कहा—‘हम लोग यहाँ एक अच्छे कुटुम्ब की तरह स्नेह-पूर्वक रहते हैं । हम लोग सब एक ही जगह के रहनेवाले अथवा रिश्तेदार हैं और आपस में ऐसे मिल-जुलकर स्नेह से रहते हैं जैसे कि ईश्वर करे सभी कुटुम्ब रह सकें । यह ज़रूर है कि इस मुहल्ले में वारदातें और झगड़े होते रहते हैं । मगर वे अक्सर रुपयेवाले चकलों में होते हैं । रूसी छोकरियाँ आम तौर पर बड़ी शराबी होती हैं और अपना एक प्रेमी भी रखती हैं । उन्हें अपने भविष्य का कुछ भी खयाल नहीं होता ।’

‘तुम होशियार हो एल्सा’ रोविन्सकाया ने दुःख से कहा, ‘यह सब तो ठीक है । मगर यहाँ जो भयङ्कर बीमारियाँ हो जाती हैं उनसे तो मौत ही भली होती है ! यह तो तुम जानती ही हो कि वह कैसे होती हैं ?’

‘जी नहीं ; श्रीमती जी । मैं किसी आदमी को अपने विस्तर में तब तक नहीं आने देती जब तक कि उसका डाक्टरों मुआयना नहीं करा लेती...कम से कम पचहत्तर फीसदी आदमियों से तो मुझे बिल्कुल भय नहीं होता ।’

‘हे भगवान !’ एकाएक रोविन्सकाया ने गर्म होकर मेज़ पर अपने हाथ पटकते हुए कहा, ‘मगर वह तुम्हारा ऐल्बर्ट...’

‘हॉन्स, श्रीमती जी !’ स्त्री ने उसको फिर याद दिलाते हुए कहा ।

‘हाँ, हाँ, माफ़ कीजिये...वह आपका हॉन्स आपसे कुछ नहीं कहता ? उसे यह बात तो हरगिज भी पसन्द न होगी कि तुम यहाँ रहो और रोज़ उसके प्रति विश्वासघात करो ?’ एल्सा उसकी तरफ़ बड़े आश्चर्य से देखने लगी । फिर बोली, ‘मगर श्रीमती जी... मैंने कभी उसके साथ आज तक विश्वासघात नहीं किया है ! यह तो दूसरी छिनालें ही, खासकर रूसी छोकरीयाँ करती हैं जो अपने यार रखती हैं और जिनपर वे अपनी गाड़ी कमाई का रुपया भी खर्च करती हैं । मैं कभी इस हद तक नहीं जाती... धिक्कार है ऐसा करनेवालों को !’

‘इससे अधिक अधम जीवन और क्या हो सकता है !’ रोविन्सकाया ने उठते हुए घृणापूर्वक ज़ोर से कहा, ‘इन लोगों को रुपया दे दीजिये और चलिये यहाँ से !’

गली में निकल आने पर बोलोद्या ने रोविन्सकाया की बाँह पकड़कर प्रार्थना करते हुए कहा, ‘ईश्वर के लिए अब और कहीं न चलिये । एक ही अनुभव काफ़ी है ।’

‘कैसा खराब जीवन है ! कैसा भोंड़ा !’

‘इसीलिए मैं कहता हूँ कि अब और अनुभव की ज़रूरत नहीं है !’

‘नहीं, मैं पूरी तरह देखूँगी । किसी दूसरी जगह चलो जो इतनी ठाटबाट की न हो ।’

बोलोद्या जो एलेना की हरकतों से बड़ा परेशान और दुखी हो रहा था, पास की अन्ना की पेढ़ी में उसे ले चला जो वहाँ से सिर्फ़ दस कदम पर ही थी ।

मगर यहाँ असली दृश्य देखने को मिला । सिमियन उन्हें अन्दर घुसानेपर बड़ी आनाकान करने लगा और जब रायज़ानोव ने

उसकी मुट्ठी अच्छी तरह गरम कर दी, तब पिघला। अन्दर घुसकर ये लोग ट्रेपेल की तरह एक कमरा लेकर जो बिल्कुल उसी ढङ्ग का मगर उससे घटिया था, बैठ गये और अन्ना के हुक्म से सारी छोकरियाँ उनके कमरे में भेड़ों की तरह ठेल दी गईं, गलती इतनी ही की गई कि जेनी को भी उनके साथ ही अन्दर ठेल दिया गया जिसकी आँखें क्रोध और चिढ़ से तमतमा रही थीं। शर्मीली टमारा अपनी अधम मुसकान मुसकराती हुई सबसे आखिर में आई। धीरे-धीरे इस पेढ़ी की सारी छोकरियाँ कमरे में भर गईं। रोविन्सकाया ने फिर यह पूछने की हिम्मत न की कि तुम लोग यहाँ कैसे आईं ? मगर फिर भी यहाँ की निवासिनियों की आँखों में उसके प्रति स्पष्ट वैर-भाव था। ऐलेना ने उनसे अपने आप गाने को कहा और उन्होंने बड़ी खुशी से गाना शुरू कर दिया :

‘हाय आ गया फिर सोमवार ,
प्रीतम कहे चलो उस पार ;
इधर डाक्टर बिगड़े मुझ पर ,
कहो सखी जाऊँ मैं क्योंकर ?’

फिर उन्होंने गाया :

‘हाय सखी मेरा सिर दुक्खे ,
प्रीतम नहीं आया कौन पिलावे ;
कौन खिलावे, कौन पिलावे ,
हाय सखी मेरा सिर दुक्खे... !’

और उन्होंने गाया :

‘आवारे का प्रेम नियारा ,
बड़ा मसालेदार सखी ;
मैंने दिल तो अपना वारा ,
पर दिल ठण्डा हाय सखी से ;
कैसे रहूँ मैं ; कैसे रहूँ मैं !’

‘साथ सभी मुस्टण्डे आये ,
 मूँछ चढ़ाये, बाँह चढ़ाये ;
 सखि मैं बेइया, प्रीतम चोर ,
 कैसे पाऊँ भव का खोर ?
 हाय क्या करूँ मैं, हाय क्या करूँ मैं ?
 आधी रात मोहि छोड़ अकेली ,
 प्रीतम चोरी करें हवेली ;
 जीवन की यह रीति नबेली ,
 मेरी प्रिय जोड़ी अलबेली ;
 कैसे रहूँ मैं, कैसे रहूँ मैं ?

फिर उन्होंने गाया :

‘मोरा बलमा बारा रे ,
 पल में हुआ है हाय सबेरवा ;
 जाहि बलम मोहि छोड़ मदरसा ,
 मोरा बलमा बारा रे, मोरा बलमा न्यारा रे ।

इसके बाद उन्होंने एक कैदी की याद का गीत गाया :

‘अब दिन बीतत नाहि सँवरिया ! अब दिन० !
 तुम दिन ले मोरी कौन खबरिया !
 रहे ज़िन्दगी के दिन थोरे ,
 आवो आवो प्रीतम मोरे ;
 हाय ! मोरी बीती जात उमरिया , अब दिन० !

फिर उन्होंने पल्टन को जाते हुए एक सिपाही का गीत गाया :

‘मत मुझाओ प्यारी !
 है प्रेम की रीति नियारी !
 लौटूँ जल्दी पल्टन से ,
 फिर बाँह गले में तेरी ; मत मुझाओ प्यारी !

मगर यह गाना हो ही रहा था कि मोटी किटी जो आम तौर पर गम्भीर रहती थी, एकाएक जोर से हँसने लगी । सबको बड़ा आश्चर्य

हुआ। वह बोली—‘मैं भी एक गीत गाना चाहती हूँ। मेरे ओडेसा में अक्सर वह गीत चोर और भालू का नाच करानेवाले शराब की दूकानों में गाया करते हैं।’

यह कहकर उसने अपनी भर्माई हुई और मोटी आवाज़ से बड़े विचित्र हाव-भाव कर, जो ऐसा लगता था उसने किसी लचर कैबरेट में किसी नाचनेवाली को करते हुए देखा होगा, गाना शुरू कर दिया :

‘मैं जाऊँ प्यारी के पास,
नित रहती ये ही आस;
कुसीं पर बैठूँ डटकर,
मूछों पर ताव लगाकर;
पूछूँ ‘क्या लोगी प्यारी?’
ब्राण्डी या बोतल न्यारी?
वह सिर नीचा करे लजाकर,
ओ जाऊँ मैं न्योछावर;
‘क्या लोगी वोली प्यारी?’
ब्राण्डी या बोतल न्यारी?
कृछ जल्दी मुखगे बोलो।
दिल मेरा यों मत तोड़ो,
क्या लोगी, बोलो प्यारी?
ब्राण्डी या बोतल न्यारी?
या यों ही मौन रहोगी?
मन मेरा तुम मसलोगी?’

किटी का यह विचित्र गाना लोग सुन रहे थे, मगर मनका ने एकाएक आकर रङ्ग में भङ्ग कर दिया। वह सिर्फ एक चोली और जाँघिया ही पहिने हुए एकाएक कमरे में घुस आई। कोई सौदागर जिसने पिछली रात ‘परिस्तानी रात’ मनाई थी उसके साथ शराब-खोरी कर रहा था और जैसा कि शराब का मनका पर हमेशा डायना-

माइट की तरह असर होता था, आज भी वह शराब पीकर हर एक से लड़ने के लिए उतारू होकर एकाएक इस कमरे में फट पड़ी थी। इस समय वह 'नन्ही मनका' नहीं रही थी 'लड़ाकू मनका' का स्वरूप धारण कर चुकी थी। इस कमरे में एकाएक घुस आने पर उसे स्वयं शायद बड़ा आश्चर्य हुआ जिससे वह क्रश पर लेटकर हँसी से ऐसी लोट-पोट हुई कि सब देखनेवाले भी हँसी न रोक सके और उसके साथ हँसने लगे। मगर यह हँसी देर तक न चली क्योंकि मनका एकाएक उठकर बैठ गई और चिल्लाकर कहने लगी, 'ओ हो हो हो ! और नई छिनालें भी हमारे यहाँ आई हैं !'

इसकी किसी को आशा न थी, मगर बैरोनेस ने और भी एक सख्त गलती कर दी। वह बोली :

'मैं पतित छोकरियों की रक्षा करनेवाले एक आश्रम* की स्थापिका हूँ, अतएव मैं तुम लोगों का हाल जानने आई हूँ।'

इस पर जेनेका तिलमिलाकर बोली :

'भागजा यहाँ से फौरन, मूर्खा कहीं की ! गन्दी ! कूड़ा-कर्कट !... पतित छोकरियों के रक्षण करनेवाले आश्रम की स्थापिका है ! जेलखाने की मालिक है ! पता है इन आश्रमों के मंत्री हम लोगों को कुतियों की तरह कैसा इस्तेमाल करते हैं। तुम्हारे बाप, तुम्हारे पति और तुम्हारे भाई रोज़ हम लोगों के पास आते हैं, और हम उन्हें तरह-तरह की बीमारियों का इनाम देती हैं... अच्छी तरह जान-बूझकर इनाम देती हैं।... और वे उन बीमारियों को तुम्हें देते हैं। तुम्हारे आश्रमों की संरक्षिकाएँ, साईसों, दरवानों और पुलिसवालों से नाजायज ताल्लुक रखती हैं और हम लोग आपस में भी ज़रा एक दूसरे से हँसी-मज़ाक करें तो हमको फौरन कालकोठरी दे दी जाती है और तुम यहाँ हमें

* कुछ दिन हुए अखबारों में लखनऊ के आश्रम के बारे में खबर थी कि वहाँ की स्त्रियाँ नक़ब लगा कर भाग गई और उन्होंने बयान दिया कि...

देखने आई हो मानो यह भी एक थियेटर है ! लो सुनो, मन भरकर खरी-खरी बातें सुनो...'

मगर टमारा ने शान्तिपूर्वक उसे रोका, 'ठहरो, जेनी मुझे कहने दो... कहिये श्रीमती जी क्या आप सचमुच यह समझती हैं कि हम घर-गृहस्थी में रहनेवाली और वाइज्जत कहलानेवाली स्त्रियों से बुरी हैं ? हमारे पास खुल्लमखुल्ला आदमी आते हैं और हमारे यहाँ आने या रात भर रहने के लिए हमें दाम देते हैं । यह बात हम किसी से दुनिया में छिपाती नहीं—जो कुछ हम करती हैं खुल्लमखुल्ला करती हैं...। मगर सच कहो क्या घर-गृहस्थीवाली स्त्रियों में से एक भी कोई ऐसी है जिसने छिपीचोगी से किसी से प्रेम नहीं किया है ? मुझे अच्छी तरह मालूम है कि पचास फीसदी घर-गृहस्थीवाली स्त्रियाँ किसी न किसी से छिपी-छिपी प्रेम करती हैं और शेष पचास फीसदी जो ज्यादा उम्र की हो जाती हैं, जवान लड़के रखती हैं* और मुझे यह भी पता है कि तुममें से कितनी अपने बापों, अपने भाइयों और अपने बेटों तक से व्यभिचार कराती हैं* । मगर अपनी इन करतूतों को तुम इज्जत के पर्दे के पीछे छिपा लेती हो । वस इतना ही हममें और तुममें फर्क है । हम पतित हैं यह हम जानती हैं और हम अपना पाप पर्दे में छिपाकर अच्छे या सदाचारी होने का बहाना नहीं करती । मगर तुम इज्जत के पर्दे में निरा असत्य का जीवन बिताती हो ! धिक्कार है तुम पर ! हम को पतित समझने का तुमको क्या अधिकार है ?'

'शाबाश मनोच्चा, खूब खरी खरी कह रही हो !' मनका ने फर्श पर बैठे-बैठे ही चिल्लाकर कहा । अपने धूपरवाले बाल बिखरे हुए वह इस समय तेरह वर्ष की छोकरी सी लग रही थी ।

'बोलो ! बोलो !' जेनी ने जलती हुई आँखों से पूछा ।

* यह यूरोप में सच हो, मगर भारत में ऐसा है यह कहना कठिन है, कि कि कुछ लोगों की राय है कि भारत में भी यही हाल है ।

‘इतना ही नहीं, जेनेच्का, अभी और भी मुझे कहना है। हममें से शायद हजारों में से एक मुश्किल से ऐसी होगी जिसने अपना हमल गिरवाया होगा, १ मगर तुममें से हर एक तो अपने जीवन में कई बार यह कुकर्म करती हो ? कहो ? क्या यह सच नहीं है ? और तुम लोग हमल इसलिए गिरवाती हो कि ऐसा न करने से मुसीबत आ जायगी या गरीबी के कारण बच्चों का पालन-पोषण असम्भव होगा बल्कि इसलिए कि बच्चा पैदा हो जाने से तुम्हारा शरीर खराब हो जायगा और तुम्हारा सौन्दर्य बिगड़ जायगा जिसको तुम अपनी सारी पूँजी मानती हो ! अथवा तुम्हें केवल अपनी इन्द्रियों के सुख की ही अधिक चिन्ता रहती है जिसमें हमल और बच्चे को दूध पिलाने से विघ्न होने का तुम्हें खतरा रहता है !’

रेविन्सकाया ने धबकाकर जल्दी से फ्रेञ्च भाषा में बेरोनेस से कहा, ‘बेरोनेस देखो तो, छोकरी पढ़ी-लिखी और समझदार लगती है।’ बेरोनेस ने फ्रेञ्च में उत्तर दिया, ‘मैं भी यही सोच रही थी...मुझे इसका चेहरा परिचित-सा लगता है...मगर खयाल नहीं आता कि कहाँ देखा था...शायद स्वप्न में ?...या शायद कभी बचपन में ?...’

‘अपनी याददाश्त को बहुत तकलीफ न दीजिये बेरोनेस’ टमारा यकायक फ्रेञ्च भाषा में बोली : ‘मैं आपको अभी याद दिलाये देती हूँ। ज़रा खारखोव शहर की याद कीजिये और वहाँ कोनियाकिन होटल के एक कमरे में सोलोविशचिक नाम के एक थियेटर के मैनेजर की

१. यह अविश्वसनीय-सी बात पढ़कर पाठक वैसे ही दङ्ग रह जायँगे जैसा कि मैं पहिले-पहल रह गया था। मगर फिर मैंने एक काशी के आश्रम में आनेवाली स्त्रियों की जो कहानियाँ सुनी वह परिशिष्ट में पढ़िये और सोचिये कि भारत और यूरोप में इस सम्बन्ध में कितना कम फर्क रह गया है।

२. भारत में भी हमल तो ज़रूर गिराये जाते हैं, मगर इस औसत में अवश्य नहीं जैसा कि ऊपर कहा गया है। बरना भारत की जन-संख्या इतनी न बढ़ गई होती। यूरोप के सम्बन्ध में मुमकिन है यह सच हो।

याद कीजिये...उस समय आप बैरोनेस नहीं थीं...। आप एक साधारण गानेवाली छोकरी थीं और मेरे साथ थियेटर में गाया करती थीं ।’

बैरोनेस ने धबराकर फ्रेन्च भाषा में पूछा, ‘मगर तुम यहाँ कैसे आ गई मारग्रेट ?’

‘जो आता है सो रोज यही पूछता है । आ गई...किसी तरह यहाँ आ गई...’

यह कहकर उसने तीखे स्वर में व्यंग्य में पूछा :

‘आप लोग ने जो हमारा वक्त लिया है उसकी कीमत तो आप देवेंगी ही क्यों ?’

‘नहीं नहीं, फिटकार तुम पर !’ नन्हीमनका एकाएक चिल्लाकर फर्श पर से उठी और अपने मोजे में से दो रुपये जल्दी से निकालकर उन लोगों के सामने फेंकती हुई बोली : ‘यह लो गाड़ी का किराया और फौरन यहाँ से अपना मुँह काला करो, वरना मैं तमाम खिड़कियों के शीशे और शराब की बोतलें चूर-चूरकर डालूँगी...’

रोविन्सकाया उठकर खड़ी हो गई और अपनी आँखों में सच्चे स्नेह के आँसू भरकर कहने लगी :

‘हाँ, हम लोग यहाँ से जाते हैं और श्रीमती मारग्रेट ने जो सबकु हमको सिखाया है वह हमें बड़ा लाभकारी साबित होगा । आपका वक्त जो हम लोगों ने खराब किया है उसकी कीमत आपको जरूर दी जायगी—बोलोद्या, देखो इसका ख्याल रखना । मगर तुमने इतने गाने हमें सुनाये हैं एक गाना मुझे भी तुम्हें सुना लेने दो ।’

यह कहकर रोविन्सकाया पियानो पर जा बैठी और दो चार स्वर पियानो के बजाकर उसने एक सुन्दर राग गाना शुरू कर दिया । राग ऐसा सुन्दर था और उसको एक प्रख्यात कलाविद ऐसी कला से गा रही थी और उसका अर्थ ऐसा मौके के अनुसार था कि हर एक छोकरी को राग सुनते-सुनते अपने प्रथम प्रेम, अपनी गलती

और उसके फलस्वरूप वसन्त ऋतु की शीत ऊषा में जब कि सूर्य के किरणों की गुलाबी लाली पेड़ों पर धीरे-धीरे बिखर रही थी—अपने स्वजनों से विदाई की याद हो आई। उन अन्तिम चुम्बनों की याद जो धड़कते हुए दुःखी हृदय से कहते थे ‘हाय ऐसा फिर कभी न होगा ! ऐसा फिर कभी न होगा !’ इसके बाद होठ सूखकर ठण्डे और बाल पसीने से भीगकर गीले हो गये थे।

टमारा यह राग सुनकर बिल्कुल चुप हो गई ; मनका भीगी बिल्ली बन गई और जैनेका जो सबसे उग्र और उद्दण्ड थी, एकाएक दौड़कर रोविन्सकाया के पैरों के पास गिरकर रोने लगी।

रोविन्सकाया ने, जिसका हृदय स्वयं पिघल रहा था, जैनेका के गले में बाहें डालकर कहा : ‘बहिन मैं तुम्हें प्यार करना चाहती हूँ !’

जैनेका ने उसके कान में कुछ कहा।

‘ओह उसका कोई हर्ज नहीं’ रोविन्सकाया ने कहा।

‘कुछ महीने तक इलाज होने से ठीक हो जायगी।’

‘नहीं, नहीं, नहीं...मैं ठीक होना नहीं चाहती। मैं यह बीमारी सब को देना चाहती हूँ। सब को इसका मज़ा चखकर इसी से मरना चाहिये।’

‘आह, प्यारी बहिन ! मैं तुम्हारी जगह पर ऐसा कभी न करूँगी।’ अभिमानी जैनेका कलाविद रोविन्सकाया के हाथ और पैर चूम-चूमकर कह रही थी।

‘मेरे साथ लोगों ने ऐसा बर्ताव क्यों किया ? मैंने उनका क्या बिगाड़ा था ? मैंने किसी का क्या बिगाड़ा था ? मुझे यह सज़ा उन्होंने क्यों दी...बताओ...मैंने उनका क्या बिगाड़ा था ?’

कला की शक्ति ऐसी होती है !

कला की शक्ति ही वह शक्ति है जो अपने हाथों में केवल बुद्धि को पकड़ने का प्रयत्न नहीं करती बल्कि मनुष्य की आत्मा को अपना लेती है। अभिमानी जैनेका रोविन्सकाया के कपड़ों में अपना मुँह

छिपाये बैठी थी ; नन्ही मनका भीगी बिल्ली की तरह एक कुर्सी पर रुमाल से अपना मुँह ढाके बैठी थी ; टमारा एक कुहनी अपने घुटनों पर खड़ी किये और उस पर सिर झुकाये नीचे को देख रही थी और सिमियन, जो हर किस्म की जरूरत के लिए पास ही में मौजूद था, आश्चर्य से आँखें फाड़ रहा था ।

रोविन्सकाया जेनेका के कान में धीरे-धीरे कह रही थी :

‘कभी निराश मत हो, कभी-कभी जीवन में ऐसे संकट आ पड़ते हैं कि कोई रास्ता नज़र नहीं पड़ता और दिल बैठने लगता है, मगर दूसरे ही दिन एकाएक जीवन में परिवर्तन हो जाता है । मेरी प्यारी बहिन आज मैं दुनिया की प्रख्यात गायिका हूँ, मगर तुम्हें क्या पता कि मुझको कितनी मुसीबतें तथा कितनी बेइज्जती का सामना करके यह ख्याति प्राप्त हुई है ! अतएव बहिन दुःखी और निराश मत हो और अपने भाग्य में विश्वास रखो ।’

यह कहकर उसने जेनेका के माथे को झुककर चूम लिया और बाद में फिर चैपलिनस्की जो दुःखी आत्मा से यह सारा दृश्य देख रहा था, कभी भी रोविन्सकाया की हगी, लम्बी मिश्रानी आँखों से जैसी प्रेमपूर्ण और सुन्दर किरणें इस समय निकल रहीं थी, उन्हें न भूल सका ।

सब लोग दुःखित हृदय से यहाँ से विदा हुए, मगर रायज़ानोव क्षण भर के लिए पीछे रह गया । वह सम्मान पूर्वक जैनेका के पास गया और धीरे से उसके हाथ चूमकर बोला :

‘अगर हो सके तो हमारी आज की गुस्ताखी को माफ़ कीजियेगा... अब ऐसी ग़लती फिर हमलोग कभी न करेंगे । अगर आपको कभी मेरी किसी सेवा की ज़रूरत हो तो मैं हमेशा हाज़िर हूँ । यह मेरे नाम और पते का कार्ड लीजिये । आज से आप मुझे एक सच्चा मित्र समझिये ।’

और फिर एक बार जैनेका के हाथ चूमकर सबसे आखिर में वह सीढ़ियों से उतरा ।

आठवाँ अध्याय

बृहस्पतिवार को सवेरे से ही माहट हो रही थी जिससे सभी पेड़ों की पत्तियाँ एकदम हरी हो गई थीं। मगर साथ ही दिन भी एकाएक धुंधला, सुस्त और जी उकता देनेवाला हो गया था।

अतएव सब छोक़रियाँ रोज़ की तरह जैनेका के कमरे में इकट्ठी हो गई थीं। मगर न जाने आज जैनेका के मन में क्या गुजर रही थी ! न तो वह हँसती और मज़ाक़ करती थी और न पढ़ती थी। हमेशा का उसका साथी उसका पीला जिल्दवाला उपन्यास आज उसके पेट या छाती पर उद्देश्यहीन-सा पड़ा था। न जाने क्यों उसके चेहरे पर दुःख की झलक़ थी और आँखों से धृणा की ज्वालाएँ निकल रही थीं। नन्ही मनका ने जो जेनी पर सुझ थी, कई बार उसका ध्यान अपनी ओर खींचने का प्रयत्न किया, मगर जेनी ने उसका कोई खयाल नहीं किया और न उससे कोई बातचीत ही की। अस्तु बड़ी उदासी छा रही थी। शायद अगस्त महीने की कई सप्ताह की लगातार माहट ने सबको इतना सुस्त कर दिया था। दमारा आकर जेनी के

पलँग पर उससे सटकर बैठ गई और जेनी को छाती से लगाकर उसके कान से मुँह लगाकर बोली :

‘क्या हुआ है तुम्हें, जेनेच्का ? मैं बहुत देर से देख रही हूँ कि तुम्हारे मन पर कुछ बीत रही है। मनका को भी ऐसा ही लगता है। देखो बेचारी मनका तुम्हारे उसकी तरफ ध्यान न देने से कैसी दुःखी। है मुझे बताओ क्या बात है। शायद मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकूँ।’

जेनेका ने आँखें बन्द कर लीं और इनकार करते हुए सिर हिलाया। टमारा उससे ज़रा अलग होकर बैठ गई। मगर प्यार से उसके कन्धे थपथपाती हुई कहने लगी :

‘तुम्हारी मर्जी, जेनेच्का न कहो। मैं तुम्हारे अन्दर घुसने की कोशिश नहीं करूँगी। मैंने तो सिर्फ़ इसलिए पूछा था कि तुम्हीं एक ऐसी हो जो...’

जेनेका एकाएक कुछ निश्चय करके पलँग पर से उछलकर खड़ी हो गई और टमारा का हाथ पकड़कर उसे हुक्म देती हुई-सी बोली :

‘अच्छा, आओ, चलो एक मिनट के लिए कमरे से बाहर चलो। मैं तुम्हें सब बताये देती हूँ। छोरियो तुम सब यहीं रहना। हम दोनों अभी आती हैं।’

कमरे के बाहर मकान के रास्ते में ले जाकर टमारा के दोनो कन्धों पर जेनेका हाथ रखकर खड़ी हो गई और दुःख भरे, उदास चेहरे से एकाएक बोली :

‘सुनो मुझे किसी ने गर्मी की बीमारी दे दी है।’

‘हाय मेरी प्यारी ! कितने दिन से है ?’

‘बहुत दिनों से। तुम्हें याद है एक बार कुछ विद्यार्थी आये थे जिन्होंने प्लेटोनॉव से झगड़ा किया था ? उसी दिन सवेरे मुझे इसका पहले-पहल पता लगा।’

‘मैं समझ गई थी—जब तुम उस कलाविद के पैरों के पास झुककर उसके कान में कुछ कह रही थीं। उसी वक्त मैं समझ गई थी, मगर प्यारी जेनेच्का तुम्हें इसकी फ़िक्र करनी चाहिये और अच्छी तरह इलाज कराना चाहिये।’

जेनेच्का ने गुस्से से पैर पटकते हुए अपने हाथ का रूमाल जो अभी तक वह मुट्ठी में कुचल रही थी, फाड़ डाला और बोली :

‘नहीं ! कभी नहीं ! मैं इलाज कभी नहीं कराऊँगी ! मैं तुम लोगों को यह बीमारी नहीं होने दूँगी। तुमने देखा होगा कि कई हफ्ते से मैं तुम लोगों के साथ मेज़पर बैठकर खाना नहीं खाती हूँ और अपनी तश्तरियाँ भी अलग ले जाकर अपने हाथ से ही धोती हूँ। इसी कारण से मैं मनका को भी अपने पास नहीं आने देती जिसे तुम जानती हो मैं दिल से सचमुच चाहती हूँ, मगर इन दो पैरों के बदमाशों को मैं जानबूझकर यह बीमारी देती हूँ। हर रात दस पन्द्रह को यह प्रसाद देकर इस घर से भेजती हूँ। सड़ने दो उन कम्बख्तों को इस अधम रोग से और अपनी पत्नियों, अपनी स्त्रियों और माताओं—हाँ, हाँ माताओं को भी और अपने पिताओं और अपनी नौकरानियों और अपनी दादियों सभी को उन्हें इस रोग से सड़ाने दो ! सबको इस रोग से सड़-सड़कर बर्बाद होने दो !’

टमारा ने स्नेहपूर्वक जेनेका का सिर सहलाते हुए कहा ‘इतनी हद तक जाओगी जेनेका ?’

‘हाँ, किसी पर रहम नहीं करूँगी, मगर तुममें से किसी को मुझसे डरने की जरूरत नहीं है। मैं अपने आदमी को खुद ही चुन लूँगी। सबसे बुद्धू, सबसे सुन्दर, सबसे अमीर और सबसे बड़े आदमी जो यहाँ आते हैं उनको मैं चुनूँगी। मगर फिर मैं उन्हें कभी तुम्हारे पास नहीं जाने दूँगी। मैं ऐसा जबरदस्त प्रेम दिखाऊँगी, उनको ऐसा नोचूँगी और खसोटूँगी, ऐसी पागल बनकर सी-सी, सू-सू करूँगी और चिल्लाऊँगी कि तुम लोग देख-देखकर

हैरान हो जाओगी और वे मूर्ख मानेंगे कि मैं सचमुच उन्हें बहुत चाहती हूँ जिससे वे मुझे छोड़कर फिर कभी तुम लोगों के पास नहीं जायेंगे !’

‘जैसी तुम्हारी मर्जी, जैसी तुम्हारी मर्जी, जेनेच्का !’ विचारपूर्वक जमीन की तरफ़ देखते हुए टमारा बोली, ‘शायद तुम ऐसा करने में ठीक हो, कौन जाने ? मगर यह तो बताओ कि सरकारी डाक्टर जो मुआयना करने आता है, उसको तुमने कैसे धोखा दिया ?’

जेनेच्का एकाएक अपना मुँह फेरकर खिड़की के शीशे में अपना मुँह भिड़ाकर खड़ी हो गई और क्रोध और घृणा की सिसकियों में सिसक-सिसककर रोने लगी। फिर हाँफती हुई वह काँपती आवाज से कहने लगी :

‘क्योंकि...क्योंकि...क्योंकि ईश्वर ने मुझपर खास मिहर्बानी की है...ऐसी जगह मुझे यह बीमारी दी है जहाँ पर कोई डाक्टर शायद उसे न देख सकेगा और हमारा डाक्टर तो बूढ़ा और मूर्ख है ही...’

और फिर एकाएक जेनेच्का ने अपने मनको कड़ा करके अपने आँसू अचानक उसी तरह रोक लिये जैसे कि उसने अचानक रोना शुरू कर दिया था।

‘मेरे पास आओ टमोरच्का’ वह बोली—‘देखो यह बात किसी से कभी कहना मत।’

‘नहीं हरगिज़, नहीं।’

दोनों शान्त मुख से जेनेच्का के कमरे में लौट आईं। सिमियन कमरे में दाखिल हुआ। वह औरों के लिए गुस्ताख होता हुआ भी जेनेच्का से हमेशा इज्जत से और सँभलकर बोलता था। सिमियन बोला : ‘जेनेच्का जेनेरल साहब आये हैं, वैन्डा को बुलाते हैं। दस मिनट के लिए वैन्डा को उनके पास हो आने दो।’

वैन्डा नामकी नीली आखों की, सुनहरी वालों की, बड़े और लाल

मुँह की छोकरी देखने से ही लिथुआनिया देश की साफ़ लगती थी। उसने खुशामद की दृष्टि से जेनेच्का की तरफ़ देखा। अगर सिमियन ने जेनेच्का से न कह दिया होता तो वह हरगिज़ वहाँ से न जाती, मगर जेनेच्का कुछ न बोली—बल्कि उसने जान-बूझकर अपनी आँखें मींच लीं। वैन्डा फर्मावदारी के साथ उठकर कमरे से चली गई।

यह जनरल महीने में दो बार हर दूसरे हफ़्ते नियम-पूर्वक वैण्डा के पास आता था जिस तरह कि जो के पास एक दूसरा बड़ा आदमी जिसको इस घर में सब लोग डायरेक्टर के नाम से पुकारते थे, रोजाना आया करता था।

जेनेका ने एकाएक अपनी पुरानी फटी हुई किताब उसके पीछे फेंकी और उसकी आँखों से गुस्से की आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं।

‘तू इस जनरल से व्यर्थ ही धृणा करती है’ वह बोली, ‘मेरा साबिका इससे भी खराब हवशियों से पड़ा है। एक बार मेरे पास एक निरा काठ का उल्लू आता था। वह मुझसे और किसी तरह प्रेम नहीं कर सकता था...बस...बस...साफ़ ही कहूँ...मेरी छातियों पर बैठ-बैठा सुई चुभोया करता था।...’

‘और विलनो में मेरे पास एक पादरी आता था जो मुझे सफ़ेद कपड़े पहिनाकर और मेरे शरीर पर पाउडर पोतकर पलँग पर लिटा देता था। फिर वह मेरे पास तीन मोमवत्तियाँ जलाकर रखता था मानो मैं मुर्दा हूँ और इस तरह जब वह मुझे मुर्दा समझने लगता था तब कूद कर मेरे ऊपर चढ़ बैठता था।

नहीं मनका ने एकाएक चिल्लाकर कहा :

‘सच कहती हो जेनेका ! मेरे पास भी एक बूढ़ा जानवर आता था। वह हमेशा मुझसे ऐसा व्यवहार करता था मानो मैं बिल्कुल निर्दोष छोकरी हूँ। अतएव मैं चीखती-चिल्लाती और सी-सी करती थी। मगर

जेनेका यद्यपि तुम हम सब में होशियार हो मगर तुम भी नहीं बता सकोगी कि वह क्या काम करता होगा...'

‘जेल का दारोगा होगा ?’

‘नहीं आगबुझानेवाले दल का सदाँर था ।’

एकाएक केटी अपनी भर्राई आवाज में खिलखिला उठी :

‘मेरे पास एक शिक्षक आता था । वह कहीं गणित पढ़ाता था । वह हमेशा यह मानना चाहता था कि वह तो स्त्री है और मैं आदमी हूँ...और मुझे उसके साथ जबरदस्ती करना चाहिये...कैसा मूर्ख था ! जरा सोचा तो, छोरियो, वह कैसा चीखता और चिल्लाता था, ‘मैं तुम्हारी औरत हूँ ! बिल्कुल तुम्हारी हूँ ! जो चाहो सो करो ! जो चाहो सो करो !’

‘पागल हांगा !’ नीली आँखोंवाली चंचल बेरका ने निश्चयपूर्वक अपनी मोटी आवाज में कहा, ‘जरूर पागल, कोई पागल होगा ।’

‘नहीं, नहीं, पागल क्यों !’ नम्र और शर्मीली टमारा ने कहा, ‘पागल बिल्कुल नहीं, सभी मदों की तरह केवल व्यभिचारी ! घर के विषय-भोग से थका हुआ यहाँ पैसा देकर जैसा मजा चाहता है करता है । साफ़ है, पागलपन की क्या बात है ?’

जेनेका जो अभी तक चुपचाप सुन रही थी, एकाएक उछलकर अपने पलँग पर बैठ गई और कहने लगी :

‘तुम सब मूर्ख हो ! क्यों तुम इन लोगों को बिना सज़ा दिये यों ही छोड़ देती हो ? पहले मैं भी तुम्हारी तरह मूर्ख थी । मगर अब मैं इन बदमाशों को चारों पावों पर चलाती हूँ और उनसे अपने पावों के तलवे चटवाती हूँ...और वे यह सब बड़ी खुशी से करते हैं...तुम सब अच्छी तरह जानती ही हो कि मैं रुपए की परवाह नहीं करती...मगर मैं इन आदमियों को हर तरह की मार मारती हूँ । यह गन्दे जानवर आ-आकर मुझे अपनी पत्नियों, बंधुओं, माताओं व बेटियों की तस्वीरें भेंट करते हैं...

देखी होंगी तुमने वे सब टट्टी में पड़ी हुई ! सोचो तो बहिन, स्त्री जिन्दगी में सिर्फ एक बार प्रेम करती है...मगर जिसे वह एक बार प्रेम करती है उसे हमेशा प्रेम करती है । मगर आदमी का प्रेम कुत्तों का सा होता है । वह अपनी प्रेमिका को धोखा देता है; इतना ही नहीं... बल्कि उसके मन में अपनी पुरानी अथवा नई प्रेमिका किसी के लिए भी कोई कृतशता का भाव नहीं रहता । मैं सुनती हूँ कि अब नौजवानों में बहुत से छोकरे अच्छे होने लगे हैं । मगर आज तक मैंने इन्हें कभी अपनी आँखों से देखा नहीं है । मैंने तो जिनको देखा वे सब आवारा, जानवर और लुंगाड़े ही थे । कुछ दिन हुए मैंने हम लोगों के अभागे जीवन के सम्बन्ध में एक उपन्यास पढ़ा था, वैसी ही बात मैं तुम्हें अब सुनाती हूँ ।’

इतने में वैन्डा लौटकर आ गई । आकर वह चुपचाप सँभलकर जेनेका के पलंग पर उस तरफ बैठ गई जहाँ लैम्प की छाया पड़ रही थी । जिस प्रकार किसी को मौत की सज़ा का हुक्म सुन लेने वाले से, अथवा सख्त मशक़त के क़ैदी से, अथवा वेश्या से उसका हाल पूछने की हिम्मत नहीं पड़ती उसी तरह किसी को वैन्डा से यह पूछने की हिम्मत नहीं हुई कि, ‘कहो तुमने यह डेढ़ घण्टा जनरल के साथ कैसे बिताया ।’ एकाएक उसने पच्चीस रुपये मेज़ पर पटककर कहा :

‘मेरे लिए शराब और तरबूज मँगा दो ।’

और यह कहकर वह अपना चेहरा दोनों हाथों से ढककर चुपचाप सिसकियाँ भरने लगी । फिर भी किसी को उससे कुछ पूछने की हिम्मत न हुई । केवल जेनेका गुस्से में भर कर अपना निचला होंठ चबाने लगी जिससे उस पर दातों की एक सफ़ेद लकीर बन गई ।

‘हाँ, देखो टमारा’ वह बोली, ‘अब मैं तुम्हें समझती हूँ । मैं तुमसे इन सबके सामने माफ़ी मागती हूँ । मैं तुम्हारे उस चोर सेनका से प्रेम करने पर तुम्हारी हँसी उड़ाती थी ! मगर अब मैं समझती हूँ कि सब

मर्दों से अच्छा चोर या कातिल का प्रेम होता है। वह किसी छोकरी से प्रेम करता है तो कभी उसे छिपाने का प्रयत्न नहीं करता और उसके लिए चोरी और कत्ल करने को तैयार रहता है। मगर यह दूसरे सब मर्द ! यह सब भूठे, चालाक, दगाबाज़ और गिरे हुए लोग हैं। देखो इस बूढ़े जनरल के तीन खानदान हैं—एक स्त्री और पाँच बच्चे यहाँ हैं ; एक नौकरानी और दो बच्चे परदेश में रहते हैं ; और एक बड़ी लड़की पहली स्त्री से है, जिसके एक बच्चा है। उसके भोले बच्चों के सिवा सभी को इस शहर में इसका यह कहानी मालूम है। और शायद बच्चे भी जानते हों ? और देखो यह एक बड़ा बाइज़न्त और प्रख्यात आदमी इस शहर का है जिसकी सारी दुनिया इज़ज़त करती है...बहिन आज तक हम लोगों ने आपस में एक दूसरे से कभी दिल खोलकर अपना-अपना हाल नहीं कहा है, फिर भी मैं आज तुम्हें बताती हूँ कि मैं जब सिर्फ साढ़े दस वर्ष की थी तभी मेरी मा ने अपने हाथों से मुझे जियोमीर शहर के एक डाक्टर के हाथों बेच दिया था। मैंने उसके हाथ चूमे, उससे गिड़गिड़ाई कि मुझे न छुए, मैं रोई कि, 'मैं अभी बड़ी छोटी हूँ !' मगर उस कम्बखत ने मेरी एक न सुनी। कहता था कुछ हर्ज नहीं, इस तरह जल्द बड़ी हो जाओगी ! दर्द, जलन और घृणा मुझे हुई...मगर मैं क्या करती, निस्सहाय थी...! बाद में वह बदमाश मेरी आत्मा की इस चीत्कार का मज़ाक अपने यार-दोस्तों और पड़ोसियों को हँस-हँसकर सुनाया करता था।'

‘खैर, जब तक हमारे जवान है तब तक तो हम बोलेंगी ही’ एकाएक जो ने लापरवाही और उदासी से मुसकराते हुए शांत स्वर में कहा, ‘मुझे एक स्कूल के शिक्षक ने बिगाड़ा था। उसने बड़े दिन के त्यौहार पर मुझे अपने घर बुलाया। उसकी स्त्री बाज़ार चीज़ें खरीदने गई थी। उसने पहले तो मुझे मिठाई खिलाई फिर कहने लगा, ‘देखो या तो तुम मेरी बात मान लो वरना स्कूल से तुम्हें खराब चाल

चलन के लिए बदनाम करके निकाल दूंगा।' उस ज़माने में विद्यार्थी शिक्षकों से कैसा डरते थे। अब शायद उतना नहीं डरते। मगर हम लोग तो शिक्षक को शाहँशाह ज़ार और ईश्वर से भी बड़ा समझा करते थे।'।

‘और मैं एक विद्यार्थिनी थी। वह आदमी मेरे मालिक के, जिसके यहाँ मैं नौकरानी थी, लड़के पढ़ाने आया करता था...’

‘नहीं, लेकिन मैं...’ नियूरा ज़ोर से बोली, मगर ज्योंही पीछे की तरफ़ उसने घूमकर देखा उसका मुँह खुला रह गया और वह आगे कुछ न कह सकी। जिधर वह घूर रही थी उधर जेनेका ने देखा तो वह हाथ मलने लगी। द्वार में लियून्का खड़ी थी...काँटे की तरह सूखी, आँखें गड्ढों में और मानो नींद में खड़ी-खड़ी द्वार की साँकल सहारे के लिए ढूँढ़ रही थी।

‘लियून्का, अरी मूर्ख, क्या हुआ है तुम्हें?’ जेनेका ने चिल्लाकर पूछा, ‘यह क्या है?’

‘है क्या! यहाँ से ले गया और फिर मारकर घर से निकाल दिया!’

सब दङ्ग होकर चुप थीं। जेनेका ने अपने हाथों से अपनी आँखें ढक लीं और दाँत पीसने लगी।

‘जेनेच्का, मेरी आस तुम्हीं पर है’ लियून्का ने थकी हुई आवाज़ में निस्सहायता से कहा, ‘तुम्हारी बात यहाँ सब मानते हैं। मेरी प्यारी अन्ना मारकोव्ना या सिमियन से ठीक कर लो कि मुझे यहाँ फिर रख लें।’

जेनेका सीधी होकर पलँग पर बैठ गई और लियून्का की तरफ़ जलती हुई, मगर रोनी आँखों से घूरते हुए उसने दूटी आवाज़ में पूछा :

‘आज कुछ अभी तक खाया है कि नहीं?’

‘नहीं कल से मैंने कुछ नहीं खाया है।’

‘सुनो, जेनेच्का’ वैण्डा ने धीरे से पूछा, ‘मैं थोड़ी-सी शराब

इसे पिलाऊँ ? तब वेरका रसोई से दौड़कर कुछ खाने को ले आवेगी ? क्यों ?’

‘हाँ, जो कर सकती हो करो । ठीक है, थोड़ी शराब पिलाओ । देखो, इसके कपड़े भी भीगे हुए हैं । उतारो इन सब कपड़ों को जल्दी से । मनका, टमारा दौड़ो । जल्दी से इसके लिए कपड़े जूते और मोजे पहिने के लिए लाओ ।’ और फिर वह लियूबका की तरफ मुड़कर बोली, ‘मूर्ख कहीं की ! बता तो सारा हाल क्या हुआ !’



नवाँ अध्याय

उस दिन सुबह को जब लिखोनिन अचानक—उसके लिए स्वयं भी यह अचानक ही था—लियून्का को अन्ना के चकले से निकाल कर ले चला तो ग्रीष्म ऋतुजोर पर थी। पेड़ अभी तक हरे-भरे थे, मगर हवा, पत्तियों और घास से कोमल उदास परन्तु जादूभरी मँहक इस प्रकार आ रही थी मानो वह कहीं बड़ी दूर से आ रही हो। लिखोनिन चकित होकर पेड़ों को देख रहा था जो ऐसे स्वच्छ, भोले और शान्त से लग रहे थे मानो ईश्वर ने उन्हें रातोंरात वहाँ उगाकर खड़ाकर दिया हो और पेड़ भी स्वयं चकित-से अपने चारों तरफ़ के तालाबों, नालियों और लकड़ी के पुल के नीचे बहनेवाली उथली नदी के पानी को, जो बिल्कुल नीरव था और ऊँचे धुले हुए आकाश को, जो जगकर ऊषा की लालिमा में, अभी तक थोड़ा-थोड़ा ऊँघता हुआ अपनी गुलाबी, सुस्त और सुखी मुस्कान से कृपालु सूर्य भगवान का स्वागत कर रहा था, देख रहे थे।

प्रातःकाल इस सुन्दर दृश्य को देखकर अपनी आनन्दपूर्ण हस्ती के ज्ञान से और रात भर बन्द धुयें से भरे हुए कमरों में बिना सोये बिताने

के बाद, फेफड़ों में स्फूर्ति भर देनेवाली ताज़ी हवा से विद्यार्थी का हृदय धड़क रहा था, मगर अपने सुन्दर और उच्च कदम से जो आज़ा उसने लिया था, उसे सबसे अधिक आनन्द हो रहा था ।

उसने मदों की तरह काम किया था । हाँ, सचमुच मदों की तरह—वीरों की तरह ! इस समय भी उसके मन में अपने कदम के लिए कोई पछतावा नहीं था । वह अपने मन ही मन में सोचता था, ‘अपने कमरों में, कुर्सियों पर बैठकर भली छोकरीयों के साथ चाय पीते हुए, वेश्या-वृत्ति की भयङ्करता पर व्याख्यान झाड़ना आसान है, मगर किसी स्त्री को उस नर्क से निकाल लेना बड़ी वीरता का काम है ! बहुत से लोग वेश्याओं से आकर उनके दुःखी जीवन की चर्चा करते हैं । यहाँ तक कि वे बेचारी रोने लगती हैं । तब वे उनको दिलासा देने लगते हैं—उनको छाती से लगाते हैं, प्यार से सिर सहलाते हैं, गालों पर चूमते हैं, फिर होठों पर चूमते हैं, और फिर जो होता है सो तो सभी जानते हैं ! धिक्कार दे, ऐसे लोगों पर ! मैं उन लोगों की तरह नहीं हूँ ! मैं जो कहता हूँ सो करता हूँ !’

उसने लियून्का की कमर में हाथ डाला और उसकी तरफ स्नेह से देखा—मगर फौरन ही फिर उसको ऐसा लगा कि वह लियून्का को पिता या भाई की दृष्टि से देख रहा था ।

लियून्का को बड़ी नींद आ रही थी । उसकी आँखें मिची जाती थीं और वह उन्हें बारबार खोलने का प्रयत्न करती थी जिससे कि वह सो न जाय । मगर उसके होठों पर वही भोले बच्चों की-सी, थकी हुई मुसकान अभी तक थी जिसको लिखोनिन ने अन्ना के यहाँ देखा था और उसके मुँह के एक कोने से लार का एक मोटा तार निकल रहा था ।

‘लियून्का, मेरी प्यारी लियून्का ! मुसीबतज़दा स्त्री ! देखो, देखो चारों तरफ कैसा सुन्दर दृश्य है ! हे ईश्वर ! पाँच साल से मुझे कभी

सूर्योदय देखने का मौका नहीं मिला। कभी ताश खेलता रहता था, कभी शराब पीता रहता था, कभी यूनीवर्सिटी को जाने की जल्दी होती थी। देखो, देखो प्रिये, कैसा सुन्दर ऊपाकाल है ! सूर्योदय हो रहा है ! तुम्हारा भी इसी तरह सूर्योदय हो रहा है, लियोबोच्का ! तुम्हारे नये जीवन का यह प्रारम्भ है ! देखो ! तुम निर्भय होकर मेरे आश्रय में रहोगी ! मैं तुम्हें ईमानदार मिहनत की जिन्दगी और जीवन-संग्राम में विजय करना सिखाऊँगा !

लियोबोच्का ने आश्चर्य से उसकी ओर देखते हुए सद्भाव से सोचा, 'अभी तक नशे के असर में हूँ। मगर कुछ हर्ज नहीं बढ़े अच्छे हृदय का है।' और यह सोचकर वह ऊँघती हुई मुसकराकर मोहक झिड़की देती हुई उससे कहने लगी :

'हाँ...हाँ ! तुम मुझे बेवकूफ बना रहे हो। तुम सब मर्द एक-से होते हो। तुम अपना मज़ा पूरा कर लेते हो—फिर हमारी तरफ ध्यान भी नहीं देते !'

'मैं ? हे भगवान ! मैं ऐसा करूँगा ?' लिखोनिन ने उत्साह और स्नेह से अपनी छाती ठोकते हुए कहा, 'हाय ! तब तुम मुझे अभी तक पहचानती ही नहीं ! मैं इतना बेईमान आदमी नहीं हूँ कि तुम जैसी निस्सहाय छोकरी को धोखा दूँ। नहीं ! मैं तुम्हारे दिमाग को शिक्षित करने, तुम्हारी दृष्टि को विस्तृत करने, तुम्हारे दुःखी हृदय को उन सारी झुर्र चोटों को, जो इस जीवन में तुम पर हुई हैं, भुला देने के लिए अपनी पूरी शक्ति से कोशिश करूँगा। मैं पिता और भाई की तरह तुम्हारी देख-भाल करूँगा ! पग-पग पर मैं तुम्हारी सँभाल करूँगा ! और जिस दिन तुम किसी आदमी को सच्चे हृदय से पवित्र प्रेम करने लगोगी उस दिन मैं अपने आपको और इस दिन को जब मैं तुम्हें इस रौरव नर्क से निकालकर ले जा रहा हूँ, धन्य समझूँगा !'

उसके इस व्याख्यान को सुनकर बूढ़ा गाड़ीवान धीरे-धीरे हँसने

लगा। उसकी हँसी सुनाई तो नहीं पड़ी मगर उसकी पीठ के हिलने के ढंग से उसका हँसना साफ़ जाहिर था। बूढ़े गाड़ीवान बहुत-सी बातें सुना करते हैं क्योंकि पास ही बैठने से उन्हें अन्दर होनेवाली सारी बातें सुनाई देती हैं। अतएव वे बहुत-सी ऐसी बातें जानते हैं जिनकी गाड़ी में भीतर बैठनेवालों को खबर नहीं होती। कौन जाने इस बूढ़े गाड़ीवान ने कितने ऐसे व्याख्यान अपनी जिन्दगी में सुने थे ?

लियून्का को लगा कि लिखोनिन उससे किसी प्रकार नाराज़ हो गया था अथवा वह किसी हवाई रकीब से ईर्ष्या कर रहा था। लिखोनिन बड़े जोश से उच्च स्वर में बोल रहा था। उसकी ऊँघ भाग गई और अच्छी तरह जगकर उसने लिखोनिन की तरफ़ आँखें फाड़कर देखा और उसकी बातें बिल्कुल न समझते हुए भी उसके हाथ में अपने आपको अर्पण करते हुए उसके दाहिने हाथ को, जो उसकी कमर पर रखा हुआ था, स्नेह से पकड़कर कहा :

‘मेरे प्यारे, नाराज़ मत हो। मैं कभी तुम्हें नहीं छोड़ूँगी। ईश्वर की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं तुम्हें छोड़कर कभी दूसरे के पास जाने की सोचूँगी भी नहीं ! मैं क्या जानती नहीं हूँ कि तुम मेरी रक्षा करना चाहते हो ? क्या तुम समझते हो कि मेरे पास इतनी भी समझ नहीं है ? तुम कितने सुन्दर, नौजवान और अच्छे हो ! अगर तुम नौजवान न होकर बूढ़े भी होते...’

‘ओह ! तुम मेरा मतलब बिल्कुल नहीं समझीं !’ लिखोनिन ने चिल्लाकर कहा, और फिर वह वैसी ही ऊँची-ऊँची बातें उससे करने लगा—स्त्रियों के मर्दों से बराबरी के अधिकार, शारीरिक परिचय की पवित्रता, मानवी न्याय और स्वतंत्रता और प्रचलित बुराईयों के विरुद्ध संग्राम—उसे समझाने लगा।

मगर लियून्का की समझ में उसकी एक बात भी न आई। वह अभी तक यही समझती रही कि उससे कोई ग़लती हो गई है जिससे

वह सिकुड़कर, उदास होकर, सिर झुकाकर और चुप होकर बैठ गई। थोड़ी देर और लिखोनिन उससे इसी प्रकार की बातें करता रहता तो अवश्य वह रोने लगती, मगर सौभाग्य से गाड़ी उस मकान तक पहुँच चुकी थी जिसमें लिखोनिन रहता था।

‘अच्छा, लो आ गया अपना घर’ विद्यार्थी ने कहा। ‘गाड़ीवान रोको।’

और गाड़ीवान को दाम दे चुकने के बाद वह अपने आपको ऐक्टर की तरह जोश में भरकर हाथ फैलाकर यह पद कहने से न रोक सका—

‘आओ आओ आओ ;

इस घर की रानी आओ !

निर्भर होकर आओ ! निर्शंक आओ ;

इस घर को लो अपनाओ !’

और फिर गूढ़ मुसकान से बूढ़े गाड़ीवान के चेहरे पर मुरियाँ पड़ गईं।



दसवाँ अध्याय

लिखोनिन जिस कमरे में रहता था वह साढ़े पाँचवीं मंज़िल पर था। साढ़े पाँचवीं मंज़िल पर इस तरह कि छः-छः सात-सात मंज़िल-वाले मकानों की आखिरी छत्तों पर जो सस्ते किरायेदारों से भर जाते हैं, टीन के कुछ भोपड़े बना दिये जाते हैं जिनमें रहनेवालों को जाड़ों में सख्त जाड़े से ठिठुरना और गर्मियों में कड़ी गर्मी से तपना होता है। यही टीन के भोपड़े मकान की आधी मंज़िल गिने जाते हैं। ऐसा ही एक भोपड़ा लिखोनिन ने अपने रहने के लिए किराये पर ले रखा था। लियूच्का ऊपर चढ़ते-चढ़ते थक गई। उसे ऐसा लगने लगा कि दो कदम और आगे चली तो वह सीढ़ियों पर गिर कर हमेशा के लिए सो जायगी, मगर लिखोनिन बराबर यह कह-कहकर उसका उत्साह बढ़ा रहा था, 'मेरी प्यारी ! मैं देखता हूँ कि तुम बहुत थक गई हो, लेकिन घबराने की बात नहीं है। मेरा सहारा ले लो। देखती नहीं हो हम लोग ऊपर चढ़ रहे हैं ! ऊपर और ऊपर—मनुष्य के सभी महान् प्रयत्नों का लक्ष्य ऊपर की तरफ चढ़ना होता है ! मेरी मित्र, मेरी बहिन मुझे पकड़ लो, मेरा सहारा लेकर चढ़ी चलो !'

यह बेचारी लियूब्का के लिए और भी कठिन हो गया। उसे अकेला अपना शरीर ही ऊपर को लेकर चढ़ना मुश्किल था। लिखोनिन को पकड़कर साथ-साथ उसका बोझ भी घसीटना उसके लिए और भी कठिन हो गया। और उसका बोझ भी शायद इतना असह्य उसको नहीं लग रहा था जितनी असह्य धीरे-धीरे अब उसकी बातें हो चली थीं। गोद के बालक का लगातार रोना और चीखना, दाँत का दर्द और मसूड़ों की टीस, कौवे की खिड़की पर काँव-काँव अथवा पास के दूसरे कमरे में किसी का लगातार बेसुरी वाँसुरी बजाना जिस तरह अखरने लगता है, उसी तरह लिखोनिन की बातें उसे अखर उठीं।

आखिरकार वे पाँचों मंजिल चढ़कर लिखोनिन के कमरे पर जा पहुँचे। कमरे के द्वार में कोई ताला नहीं लगा था। लिखोनिन कभी अपने कमरे में ताला लगाकर नहीं जाता था, अतएव लिखोनिन ने जैसे ही एक धक्का लगाया वैसे ही कमरे का द्वार तुरन्त खुल गया। कमरे में अन्धेरा हो रहा था क्योंकि तमाम खिड़कियों के पर्दे नीचे गिरे हुए थे। चूहों, मिट्टी के तेल, बासी तरकारी, पुराने कपड़ों और तम्बाकू की बू कमरे में भर रही थी। कोई शख्स जिसकी शक्ल अँधेरे में दिखाई नहीं देती थी, एक तरफ कमरे में लेटा हुआ जोर-जोर से खुराटे ले रहा था।

लिखोनिन ने खिड़कियों के पर्दे उठाकर लपेट दिये। कमरे का ठाट-बाट बिल्कुल एक गरीब विद्यार्थी के कमरे का-सा था—एक तरफ एक ढीली खाटपर उल्टा-पलटा बिस्तर और उसपर एक सिमटा हुआ कम्बल पड़ा था। दूसरी तरफ एक लँगड़ी मेज़ रखी थी जिसपर बिना मोम-बत्ती का एक शमादान रखा हुआ था, चन्द किताबें मेज़ पर और ज़मीन पर बिखरी हुई पड़ी थीं; पिये हुए सिगरेटों के टुकड़े हर तरफ पड़े थे और मेज़ के सामने दीवार से लगा हुआ एक पुराना दीवान था जिस पर इस समय काले बालों और काली मूछों का नौजवान मुँह

फाड़े लेटा ज़ोर-ज़ोर से खुराटे ले रहा था। उसकी कमीज़ के बटन खुले हुये थे जिससे उसकी छाती के घने और धुंधराले काले बाल भी, जैसे कि फ़ारसी मेमनों की पीठ पर होते हैं, दीख रहे थे।

‘निजारजे ! ओ निजारजे, उठ !’ लिखोनिन ने उसकी पसलियों में उङ्गली गड़ाते हुए कहा, ‘उठो शाहज़ादे !’ ‘हूँ...ऊँ...ऊँ...!’

‘तेरे बाप-दादा की ऐसी-तैसी ! तेरे खानदान को कोहकाफ़ से देश-निकाला हो ! वे फिर कभी जार्जिया लौटकर न पहुँचें ! उठ बदमाश ! अरे आवारे ! गुण्डे... !’

मगर एकाएक लियूब्का ने लिखोनिन को रोका जिससे लिखोनिन को आश्चर्य हुआ। उसका हाथ पकड़कर वह झिझकती हुई बोली :

‘प्यारे, क्यों बेचारे को सताते हो ? मुमकिन है बेचारा बड़ा थका हुआ है इसलिए और सोना चाहता है। थोड़ा और सो लेने दो। मैं घर चली जाऊँगी। मुझे सिर्फ़ गाड़ी के किराये के लिए आठ आना दे दो। कल आकर फिर मिलना। क्यों प्यारे, ठीक है न ?’

लिखोनिन का मुँह शर्म से लाल हो गया। उसे इस मौन और ऊँघती हुई छोकरी के हस्तक्षेप पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसकी समझ में यह नहीं आ सका कि लियूब्का के हृदय में पूरी तरह न सो सकने-वाले मनुष्य के लिए स्वाभाविक दया भाव आ सकता था अथवा दूसरे की नींद न तोड़ने की उसको अपने पेशे की वजह से आदत हो गई थी। मगर उसका आश्चर्य क्षणभर ही रहा। न जाने क्यों वह चिढ़-सा गया, उसने सोनेवाले आदमी का हाथ पकड़कर जो शर्श पर पड़ा था और जिसकी अँगुलियों में बुन्नी हुई सिगरेट लटक रही थी ; उठाया और उसे ज़ोर से झकझोरता हुआ गम्भीर और कड़ी आवाज़ से चिल्लाया :

‘ऐ निजारज़े सुनो ! मैं तुमसे सचमुच कहता हूँ ! सुन कम्बख्त, सुन। मैं अकेला नहीं हूँ...मेरे साथ एक स्त्री है...ओ सूअर !...’

उसके यह कहते ही मानो करिश्मा-सा हो गया। सोनेवाला एक

दम ऐसे उछलकर बैठ गया जैसे नीचे से किसी स्प्रिङ्ग ने एकाएक उसे ऊपर को उछाल दिया हो। वह दीवान पर बैठकर जल्दी-जल्दी हथेलियों से अपनी आँखें, कनपटियाँ और माथा मलने लगा। एक स्त्री को सामने देखकर वह सिटपिटाकर जल्दी-जल्दी कमीज के बटन लगाता हुआ बड़बड़ाया :

‘और तुम आ गये लिखोनिन ? मैं तो तुम्हारा यहाँ इन्तज़ार करता-करता सो भी गया। ज़रा अपरिचित कामरेड स्त्री से एक मिनट उधर मुँह कर लेने को कहो।’

यह कहते हुए उसने जल्दी से अपना रोज़ाना का विद्यार्थियों का खाकी कोट पहिन लिया और दोनों हाथों से अपने सिर के बिखरे हुए घुँघराले बाल सँभालने लगा। लियूबका स्त्रियों की उस स्वाभाविक नज़ाकत से जिसका वह हर हालत और हर उम्र में प्रदर्शन करने का प्रयत्न किया करती हैं, घूमकर दीवाल पर लटकते हुए एक आइने में अपने सिर के बाल ठीक करने लगी। निज़ारजे ने लियूबका की तरफ़ आँखों से इशारा करते हुए लिखोनिन से इशारे में ही पूछा कि यह कौन है।

‘इसकी अभी फ़िक्क मत करो। अभी उधर ध्यान मत दो’ लिखोनिन ने ज़ोर से उत्तर में कहा। ‘यहाँ से निकलकर फौरन बाहर चलो। अभी सब बता दूँगा। लियूबका क्षणभर के लिए मुझे क्षमा करना। अभी आता हूँ। मैं तुम्हारा सब प्रबन्ध ठीक-ठाक करके तब यहाँ से हवा की तरह ओझल हो जाऊँगा।’

‘नहीं, इतना कट करने की क्या ज़रूरत है?’ लियूबका ने कहा ‘ठीक तो है। मैं इस दीवान पर सो जाऊँगी। आप उस पलंग पर सो सकते हैं।’

‘नहीं प्रिये, यह अच्छा नहीं लगेगा ! पास ही मैं मेरा एक दोस्त रहता है। मैं उसके यहाँ जाकर सो जाऊँगा। अभी क्षणभर में लौटकर आता हूँ।’

दोनों विद्यार्थी कमरे के बाहर के बरामदे में चले गये ।

‘अरे भाई यह मैं क्या स्वप्न देख रहा हूँ ?’ निजारजे ने अपनी रूसी, कुछ-कुछ भेड़ों की-सी, आखें फाड़ते हुए कहा :

‘यह परी कहाँ से ले आये हो—यह श्रीमती कामरेड कौन हैं ?’

लिखोनिन ने उसको गूढ़ दृष्टि से देखते हुए अपना सिर हिलाया और चेहरा रूखाकर लिया । अब प्रातःकाल की ठण्डी और खुली हवा में घूमकर आने के बाद, दिन निकल आने पर तथा अपनी स्थिति का अच्छी तरह ज्ञान होने पर उसके मन में एक तरह की परेशानी और अपने इस अचानक कदम की गैरज़रूरत का खयाल आने लगा था जिससे वह मन ही मन अपने ऊपर और उस स्त्री पर भी जिसे वह ले आया था, कुछ-कुछ कुढ़-सा रहा था । उसे इस स्त्री के साथ रहने की दिक्कों, तरह-तरह की फिफ़ों, लड़ाई-भगड़ों, घर-गृहस्थी के खर्चों, मित्रों की मजाकों और पूछताछ और सरकारी परीक्षाओं में रुकावटों का खयाल होने लगा था । मगर निजारजे से सुस्ती से बात-चीत शुरू करने के बाद ही फौरन उसे अपनी दिलमिल यक़ीनी पर शर्म आने लगी जिससे वह फिर बहादुरी के घोड़े पर चढ़कर दौड़ने लगा ।

‘देखो शाहज़ादे,’ उसने सिटपिटाते हुए, अपने साथी के कोट का एक बटन मोड़ते हुए, बिना उसकी आखों से आखें मिलाते हुए कहा, ‘आप ग़लती पर हैं । यह कोई श्रीमती कामरेड नहीं है, बल्कि केवल मैं... कुछ अपने दोस्तों के साथ कटरे में ज़रा चला गया था... यों ही कुछ देर के लिए... उनके साथ अब्बा के चकले में चला गया था...’

‘किन दोस्तों के साथ ?’ निजारजे ने आवेश में भरते हुए पूछा ।

‘ख़ैर, नाम जानकर तुम क्या करोगे, शाहज़ादे ? टोल्पीजिन था, रामसेस था, एक यारचेन्को नाम का प्रोफ़ेसर था, बोरया सोबाशनीकोव था... और और कई थे जिनके नाम मुझे याद नहीं आते । हम लोग पहले तो शाम को बड़ी देर तक नावों में सैर करते रहे, फिर एक शराब

खाने में जा धुसे और फिर सूअर बनकर चकले में पहुँच गये। मुझे तो तुम अच्छी तरह जानते ही हो कि मुझे ऐसी बातों से शौक नहीं है। मैं वहाँ बैठा-बैठा एक परिचित अखबारनवीस के साथ कागनेक शराब स्पंज की तरह सोखता रहा। दूसरे सबने उनके जो मन में आया, किया। मगर सुबह होते-होते मुझे न मालूम क्या हो गया—मेरा दिल इन अभागी औरतों को देखकर टुकड़े-टुकड़े होने लगा। मैं सोचने लगा कि देखो हमारी बहिनें हमारे स्नेह और रक्षण से और हमारी माताएँ हमारे आदर से कैसा सुखी जीवन बिताती हैं ! कोई उनसे एक गुस्ताखी का शब्द कहने, या उन्हें धक्का देने, या छेड़ने की कोशिश करता है तो हम उसका उछलकर गला पकड़ लेते हैं ! क्यों है न सच ?’

‘हूँ...ऊँ...ऊँ ? निजारजे ने कुछ प्रश्न-सूचक भावना से और कुछ पहले से ही यह समझकर कि आगे वह क्या कहनेवाला है, एक तरफ को अपनी आँखें फिराई।

‘मगर मैंने सोचा कि इन बेचारियों को कोई भी दुष्ट, कोई भी बदमाश बूढ़ा जब चाहे पैसा देकर रात भर या जितना चाहे अपने पास रख सकता है और इनकी मानवी प्रेम जैसी पवित्र और अमूल्य वस्तु को हजार बार भी चाहे तो गन्दा कर सकता है। समझे, वह इन बेचारियों का सर्वस्व छीनकर, उसे अपने गन्दे पाँवों से रौंदकर, सिर्फ उसकी कीमत अदा करके जेबों में हाथ डालकर आनन्द से सीटी बजाता हुआ चला जा सकता है। और कोई कुछ नहीं कहता ! न तो उसे ही कोई खयाल आता है और न उस स्त्री को जिसका सर्वस्व हरण करके वह जाता है। हम लोग यह सब देखने के आदी हो गये हैं जिससे इस दृश्य से हमारी आत्मा पर कोई असर नहीं होता। क्यों ऐसा है कि नहीं ? हमारी आँखों के सामने उन देवियों को नष्ट किया जाता है जो किसी की पवित्र बहिन और मा बनने के लिए ईश्वर ने बनाई थीं ! क्यों, मैं ठीक कहता हूँ न ?’

‘हाँ...आँ ?...’ निजारजे बड़बड़ाया और फिर वह लिखोनिन की आँखों में न देखकर एक तरफ को देखने लगा ।

‘अतएव मैंने सोचा...इतना समझाने की क्या ज़रूरत है ! व्यर्थ के व्याख्यानों से कोई लाभ नहीं ! वेश्यावृत्ति एकदम बन्द कर देने या उसको कम करने के लिए क़ानून बनाने या अबला आश्रमों में जाकर बाइबिल की किताबें बाँटने से तो यही कहीं अच्छा है कि मैं इस नर्क से एक छोकरी को निकाल ले चलूँ और उसे एक घर के सुन्दर और स्नेह-पूर्ण वातावरण में रखकर और उसके साथ दया का बर्ताव करके उसकी आत्मा को शान्ति पहुँचाऊँ और उसके जीवन में उत्साह बढ़ाऊँ ।’

‘हूँ...ऊँ !’ निजारजे दाँत निकालकर गुनगुनाया ।

‘अरे शाहजादे ! तुम्हारे दिमाग में हमेशा गन्दे विचार ही मँडराते रहते हैं । तुम्हें इस बात का खयाल रखना चाहिये कि मैं एक स्त्री के बारे में तुमसे बातें नहीं कर रहा हूँ बल्कि एक मानवी जीव के बारे में—हाड़-मांस की तरफ़ मेरा ध्यान नहीं है, आत्मा की तरफ़ है !’

‘अच्छा, अच्छा, आत्मा की तरफ़ तुम्हारा ध्यान है ! कहे जाओ !’

‘अतएव जैसे ही मेरे मन में यह विचार आया मैंने तुरन्त उस पर अमल किया । मैं इस स्त्री को अन्ना के चकले से फिलहाल अपने यहाँ ले आया हूँ । आगे भगवान की जैसी मर्ज़ी । मैं पहले इसको पढ़ना-लिखना सिखाऊँगा । बाद में मैं एक खाने की दूकान अथवा परचून की दूकान खुलवा दूँगा । मेरा खयाल है कि मेरे दूसरे बन्धु भी इस काम में अवश्य सहायता करेंगे । मनुष्य के हृदय को—हर मनुष्य के हृदय को स्नेह की आवश्यकता होती है, शाहजादे ! एक दो साल में मैं समाज को एक अच्छा मेहनती और योग्य सदस्य लौटा दूँगा जिसकी आत्मा बड़ा से बड़ा काम कर सकने के योग्य होगी...क्योंकि इसने अभी

तक अपना शरीर ही बेचा है और इसकी आत्मा अभी तक बिल्कुल स्वच्छ और निर्दोष है।’

‘शी...शी...शी’ शाहजादे ने अपनी ज़बान चाटते हुए कहा।

‘इस शी...शी...का क्या मतलब है ? गधा कहीं का !’

‘और तुम उसे एक सीने की मशीन भी खरीदकर दोगे न, क्यों ?’

‘सीने की मशीन में क्या खास बात है ? मेरी समझमें नहीं आया!’

‘क्योंकि मैंने उपन्यासों में ऐसी हालतों में सीने की मशीन दिये जाने का ही जिक्र पढ़ा है। उपन्यास का मुख्यपात्र जैसे ही पतित आत्मा को नर्क से छुड़ाकर लाता है वैसे ही वह उसे एक सीने की मशीन खरीद कर देता है।’

‘बेवकूफी की बातें बन्द करो’ लिखोनिन ने गुस्से से हाथ हिलाते हुए कहा, ‘विदूषक !’

लिखोनिन का मित्र एकाएक लाल हो गया और उसकी काली-काली आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं। वह बोला :

‘बेवकूफी की बातें नहीं हैं ! मैं सच कहता हूँ। ऐसी हालत में दो में से एक ही बात होती है—और वही यहाँ भी होगी। या तो तुम चार-पाँच महीने उसे अपने पास रखकर फिर सड़क पर निकाल दोगे और वह फिर लौटकर चकले में जा बैठेगी अथवा सड़कों पर मारी-मारी फिरेगी, या तुम उसका उद्धार करने के लिए सीखने-सिखाने का इतना बोझ उसके सिर पर एकदम लादने लगोगे कि वह उससे घबराकर तुम्हारे पास से भाग जायगी और फिर किसी चकले में जा बैठेगी अथवा गलियों में मारी-मारी फिरेगी। मैं सच कहता हूँ ! इन्हीं दो बातों में से कोई एक बात होगी। हाँ, एक तीसरी बात भी हो सकती है। तुम उसकी भाई की तरह फ़िरक करोगे और वह चुपके-चुपके किसी और से प्रेम कर लेगी। मैं सच कहता हूँ, मेरी बात मानो औरत औरत ही

होती है और जिस आदमी से वह प्रेम करेगी वह भी उसके शरीर से सिर्फ दो-चार महीने खेलेगा, बाद उसको फिर गली में धकेल देगा अथवा किसी चकले में भेज देगा ।’

लिखोनिन ने एक बड़ी गहरी साँस ली । उसके अन्तर में कहीं—उसके दिमाग में नहीं—निज़ारजे का कहना सत्य-सा लगा, मगर उसने शीघ्र ही अपने ऊपर काबू करके अपना सिर हिलाते हुए शाहजादे की तरफ अपना हाथ बढ़ाकर अभिमान से कहा :

‘मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि छः महीने बाद तुम्हें अपने शब्द वापस ले लेने होंगे और तुम मुझसे माफ़ी माँगोगे और जुर्मानी में मुझे आधी दर्जन बोतलें शराब पिलाओगे ।’

‘अच्छा यही रही !’ शाहजादे ने उसके हाथ पर जोर से हाथ मारते हुए कहा, ‘बड़ी खुशी से ! और जो मैं कहता हूँ वह सच हुआ तो तुम मुझे आधी दर्जन शराब की बोतलें पिलाना ।’

‘हाँ, तब मैं तुम्हें पिलाऊँगा । अच्छा, फिलहाल बन्दगी । तुम कहाँ सोओगे ?’

‘यहीं इस बरामदे में सोलोवीव के कमरे में सो जाऊँगा । और तुम तो पुराने वीरों की तरह शायद अपने और उसके बीच में एक दुधारी तलवार रखकर सोओगे ? क्यों ?’

‘क्या बकते हो ! मैं खुद सोलोवीव के यहाँ जाकर सोने का विचार कर रहा था, मगर अब मैं जाकर ज़रा इधर फिरूँगा और फिर किसी दोस्त के यहाँ जाकर सो जाऊँगा । बन्दगी !’

‘ठहरो, ठहरो !’ निज़ारजे ने उसके थोड़ी दूर चले जाने पर चिल्लाकर कहा, ‘मैं तुमसे खास बात कहना तो भूल ही गया । पर्टज़ान पकड़ लिया गया !’

‘अच्छा, अच्छा तो...’ लिखोनिन ने एक लम्बी जँभाई आनन्द से लेते हुए कहा ।

‘हाँ, मगर किसी बड़ी भयङ्कर बात के लिए वह पकड़ा नहीं गया है। उसके पास केवल कुछ जूतशुदा किताबें और पर्चे निकले थे। एक साल से अधिक सजा नहीं होगी।’

‘एक साल तो मजे से काट लेगा—काफी तगड़ा है।’

‘हाँ...अँ’ शाहजादे ने कहा, ‘अच्छा, बन्दगी !’

ग्यारहवाँ अध्याय

लिखोनिन अकेला रह गया। अन्धकार-पूर्ण मार्ग में बुझते हुए मिट्टी के लैम्प और सड़ी तमाखू की बू आ रही थी। रास्ते के दोनों छोरों पर छत में बने हुए शीशे के दो रोशनदानों में से मन्द-मन्द सूर्य की रोशनी भी अन्दर घुसने का प्रयत्न कर रही थी।

लिखोनिन के मन में कमज़ोरी और उड़ान दोनों ही आ रही थीं। उस आदमी को इसका पर्याप्त अनुभव होता है जिसे काफ़ी वक्त तक सोने को बिल्कुल भी न मिला हो। उसे ऐसा लग रहा था कि रोज़मर्रा की साधारण ज़िन्दगी से वह कहीं ऊँचा उठ गया था और वह ज़िन्दगी अब उससे इतनी दूर हो गई थी कि उसकी अब चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं थी, मगर साथ ही उसके विचारों और भावों में एक शान्तिपूर्ण स्पष्टता और लापरवाही का व्यक्तित्व आ गया था जिससे उसको आनन्द भी हो रहा था।

वह अपने कमरे के पास दीवाल पर झुका खड़ा था और उसके निकट और नीचे बीसियों लोग पड़े सो रहे थे जिन्हें वह मन ही मन देख छू और सुन-सा रहा था। यह लोग ऊषाकाल की गहरी नींद, मुँह

वाये, खुराटे भरते हुए, मुड़े हुए तकियों पर अपने नींद से चमकते हुए चेहरे रखे, ले रहे थे। लिखोनिन के मन में विचार आया, जो बचपन से ही अक्सर उसे आया करता था कि सोते हुए लोग कैसे भयङ्कर, मुदों से भी भयङ्कर लगते हैं। इतने में उसे लियून्का की याद आई। उसके भीतरी, दबे हुए, रहस्यपूर्ण ममत्व ने उसके कान में धीरे से कहा, 'चलो इस बहाने से चलकर छोकरी को देखो कि वह आराम से है या नहीं और सुबह की चाय का भी प्रबन्ध करना है, मगर उसने अपना मन फेरने के लिए सोचा कि ऐसा विचार भी उसे नहीं आया और यह सोचकर वह बाहर सड़क पर निकल आया।

वह हर एक चीज़ को बड़े ध्यान से देखता हुआ सड़क पर चलने लगा। उसके मन में इस समय एक विचित्र और नया कौतूहल हो रहा था। चलते हुए हर एक चीज़ों उसे ऐसी स्पष्ट दीखती थीं मानो वह उसे अपनी उङ्गलियों से छू रहा हो। एक किसान औरत उसके पास से निकली। उसके कन्धे पर हल रखा था जिसके दोनो सिरों से दूध के दो मटके लटक रहे थे। उसका चेहरा जवान नहीं था। उसकी कनपटियों पर और नथुनों से लेकर मुँह तक लम्बी-लम्बी सुरियाँ थीं। मगर उसके गाल गुलाबी और शायद छूने पर कड़े थे और उसकी कन्जी आँखों में किसानों की नमकीन मुसकान थी। कन्धे पर रखे हुए भारी हल के हिलने से और उस के धीरे-धीरे चलने के दोनो कूल्हे दायें-बायें ताल से मटकते थे जिनके छहरों की तरफ़ हिने-जुलने में एक भोंड़ा परन्तु इन्द्रियप्रिय सौन्दर्य था।

‘इस नटखट किसान औरत ने जिन्दगी अच्छी तरह देखी है,’ लिखोनिन ने अपने मन में सोचा। और एकाएक उसके मन में विचार आया, जिसकी उसको भी कोई आशा न थी कि यह गाँदा औरत, जिसको न तो वह जानता ही था और न जो जवान ही थी, उसकी हो

जाती। शायद वह स्त्री गन्दी और भोड़ी भी थी, मगर लिखोनिन को वह उस बड़े सेव की तरह लगी जिसे चिड़ियों ने थोड़ा-सा कुतरकर पेड़ से ज़मीन पर गिरा दिया था और जो ज़मीन पर काफ़ी देर तक पड़ा रहने पर भी अभी तक चमकीला और खुशबूदार था।

इतने में जनाज़ा ले जानेवाली एक गाड़ी दौड़ती हुई उससे आगे निकल गई। इस गाड़ी में दो घोड़े आगे और दो पीछे जुड़े हुये थे और मशालची और कब्र खोदनेवाले, सुबह ही से शराब पीकर अपने पाशविक चेहरे लाल किये हुए, पुराने टोप सिरों पर लगाये, एक कम्बल पर अपनी वर्दियों के ढेर पर लालटेने लिये बैठे थे और भराये हुए कण्ठों से एक बेतुका राग अलाप रहे थे। 'शायद यह लोग कोई जनाज़ा ले जाने की जल्दी में हैं या कोई जनाज़ा दफ़नाकर आ रहे हैं,' लिखोनिन ने सोचा, 'कैसे आनन्दी जीव हैं !' आगे चलकर सायेदार चौड़ी सड़क के किनारे पड़ी हुई एक हरे रङ्ग की बेन्च पर वह बैठ गया। मैकड़ों वर्ष पुराने शाहबलूत के बड़े-बड़े दरख्तों की दो क़तारें दूर तक सामने जाकर, बहुत दूर पर मिलकर एक हरे तीर की तरह हो गई थीं। उन पर नुकीले हरे-हरे फल लटक रहे थे। लिखोनिन को एकाएक याद आई कि वसन्त के बिल्कुल आरम्भ में भी वह इसी सड़क पर और इसी स्थान पर एक दिन बैठा था, परन्तु उस समय शांतिपूर्ण, नम्र सन्ध्या, थकी हुई कामिनी की भाँति, मुसकराती हुई, सोने जा रही थी। उस समय शाहबलूत के इन बड़े-बड़े दरख्तों की पत्तियों से भरी हुई टहनियाँ जो नीचे चौड़ी और ऊपर सिर पर पतली थीं, फूलों के गुच्छों से लदी हुई थीं जो चमकीले, गुलाबी और नुकीले आकाश की तरफ उठे हुए थे। ऐसा लगता था मानो किसी ने उन पेड़ों पर बहुत से लाल-लाल दीपक जलाकर रख दिये हों और यह सोचते हुए एकाएक लिखोनिन को यह देखकर वेदना हुई—जैसी कि सभी को कभी न कभी होती है—कि शाहबलूत के पेड़ों पर फल पकने लगे थे क्योंकि उस समय—जिस समय की

वह इस समय याद कर रहा था। इन वृक्षों पर छोटे-छोटे फूलते हुए फूल दीपकों की तरह चमक रहे थे। उसने सोचा कि इसी तरह और भी वसन्त आवेंगे और चले जायेंगे, मगर जो वसन्त एक बार बीत जावेगा उसे फिर कोई लौटाकर न ला सकेगा। यह सोचकर वह दुःख से अपने आगे फैली हुई घनी सड़क की तरफ घूरने लगा, परन्तु फिर एकाएक उसने देखा कि प्रेमाश्रु से उसकी आँखें भर आई हैं।

वह फौरन उठकर खड़ा हो गया और आगे की तरफ हर एक चीज़ को ऐसे ध्यान पूर्वक देखता हुआ चला जैसे कि ईश्वर की सृष्टि को आज पहिली बार ही वह देख रहा हो। मैमारों का एक झुण्ड उसके पास से होकर गुजरा जिनका अक्स उसके दिमाग पर उसी तरह पड़ा जैसा कि कैमेरा के शीशे पर पड़ता है। इस झुण्ड के मिस्री की दाढ़ी लाल थी जो एक तरफ को उलझी हुई थी और उसकी आँखें नीली और चमकीली थीं। दूसरा इस झुण्ड में एक लम्बा-चौड़ा जवान मैमार था जिसकी बाईं आँख चोट से सूजी हुई थी और जिसके माथे से गालों तक और नाक से कनपटी तक नीले रङ्ग का बड़ा धब्बा-सा बन रहा था; तीसरा एक छोटा सा भोलाभाला गाँव का कमजोर छोकरा था जो एक चिड़िया के बच्चे की तरह मुँह बाये लार गिरा रहा था; चौथा एक बूढ़ा मैमार था जो देर से आने के कारण बकरे की तरह कूदता हुआ सबके पीछे दौड़ता हुआ आ रहा था। ये आदमी और उनके चूने से सने कपड़े, कन्नौ, बसूला और अन्य औज़ार उसकी आँखों के आगे एक निर्जीव सिनेमा चित्र की तरह निकल गये।

लिखोनिन नये किशेनवेस्की नाम के बाज़ार में होकर गुज़रने लगा तो किसी चीज़ के भुनने की सुगन्ध से उसके नथने फूल गये। तब उसे याद आया कि कल दोपहर से उसने कुछ खाया नहीं था और उसे एकाएक भूख लग उठी। दाहिनी तरफ मुड़कर वह बाज़ार के बीचोबीच में घुसा। अपने फाकेमस्ती के दिनों में—ऐसे दिन इसने

काफ़ी देखे थे—इस बाज़ार में आकर जो कुछ थोड़े-बहुत पैसे वह मुश्किल से कमा पाता था उनसे वह अपने लिए खाने को रोटी और भुना हुआ गोश्त खरीदा करता था। ऐसा वह अक्सर जाड़ों में करता था। रोटी बेचनेवाली नानबाइन बहुत से कपड़े अपने शरीर पर लपेटे गर्मी के लिए आग से भरे एक बर्तन पर बैठा करती थी। उसके आगे लोहे के तवे में सलाख पर चढ़ा हुआ फुट भर लम्बा गोश्त का टुकड़ा जिसमें प्याज और लहसुन खूब मिला होता था, आग पर चटखता और फुसकारता था। गोश्त के एक ऐसे टुकड़े का दाम दस आना और रोटी का दाम दो आना होता था।

आज बाज़ार में काफ़ी भीड़ थी। कुहनियों से भीड़ में से अपनी परिचित दूकान की तरफ़ रास्ता बनाकर बढ़ते हुए लिखोनिन ने दूर से ही संगीत की आवाज सुनी। भीड़ को चीरकर, जो एक दूकान के सामने घिरी खड़ी थी, लिखोनिन ने निकलकर एक ऐसा सादा और प्यारा दृश्य देखा जैसा कि दक्षिणी रूस में ही देखने को मिल सकता है। दस-पन्द्रह नानबाइनें, जो आम तौर पर बड़ी गपोड़ और बुरी से बुरी गालियाँ बकनेवाली होती हैं, इस वक्त एक दूसरे को सराहती हुई, पिछली शाम से नाच-गाने में मशगूल थीं। रातभर शराब पी-पीकर वे अब अपना नाच गाना करती हुई सड़क पर आ डटी थीं। साथ में किराये के साज़िन्दे नफ़ीरी, सारङ्गी और तबले पर मज़ेदार ज़ोर-ज़ोर की तानें उड़ा रहे थे। कुछ नानबाइनें शराब के गिलास एक दूसरे से टकरा-टकराकर एक दूसरे का मुँह चूम रही थीं और एक दूसरे पर शराब उडेल रही थीं। कुछ मेज़ पर गिलास रखकर उनमें बोटलों में से शराब भर रही थीं। बाकी एक स्थान पर बैठी हुई तालियाँ बजा-बजाकर गाने पर तालें देकर चीख, चिल्ला और थिरक रही थीं। बीच में, पगडण्डी के पत्थरों पर, करीब पैंतालीस वर्ष की एक तगड़ी स्त्री जो अभी तक काफ़ी सुन्दर थी और जिसके कूल्हे भारी और लाल-

लाल और आँखें नशीली थीं जो उसकी काली और ऊँची भौंहों के नीचे से चमक रही थीं, चक्कर लगा-लगाकर नाच रही थी। नाचती क्या थी चक्कर लगा-लगाकर, थिरक-थिरककर, एक स्थान पर खड़ी होकर पैर पटककर, सिर झुका-झुकाकर वह लोगों पर नयन-वाण चलाती थी और फिर सिर पीछे को फेंककर और आँखें मूँदकर वह अपने हाथ दोनों तरफ फैला देती थी और उसके थिरकने के साथ-साथ उसकी बड़ी-बड़ी छातियाँ भी उसकी लाल कुरती के अन्दर थिरकती थीं। इस प्रकार नाचती और थिरकती हुई वह अपनी एड़ियों और अँगूठों से अपने पैरों में पहिने हुए बकरी की खाल के जूते चरमरा रही थी।

लिखोनिन इस नानबाइन को अच्छी तरह जानता था क्योंकि बुरे समय में यह स्त्री लगातार लिखोनिन को न सिर्फ़ खाने-पीने का सामान ही देती रही थी बल्कि उसको उधार भी देती रही थी। उसने लिखोनिन को देखते ही पहिचान लिया और तुरन्त दौड़कर वह उससे चिपट गई और उसको अपनी छाती से दबाकर उसके होंठ अपने तर और गरम होठों से चूमने लगी। फिर उसने अपने दोनों हाथ फैलाकर एक हाथ दूसरे पर मारा और एक हाथ की उङ्गलियाँ दूसरे में उलझाकर मीठे स्वर में बोली :

‘मेरे मालिक ! मेरे सोने के गहने ! मेरे प्यारे ! मुझ शराबी औरत को माफ़ करो। आज मैं खोरिया कर रही हूँ !’ यह कहकर वह उसको चूमने के लिए यह कहती हुई झपटी, ‘मगर मैं जानती हूँ तुम दूसरों की तरह घमण्डी नहीं हो। लाओ प्यारे, अपना हाथ मुझे दो ! मैं तुम्हारा हाथ चूमूँगी ! नहीं, नहीं, नहीं ! मैं चाहती हूँ कि तुम...’

‘अरे चाची ग्लेसेरिया, यह तुम क्या कह रही हो !’

लिखोनिन ने उत्साह से उसकी बात काटते हुए कहा, ‘जैसे तुमने अभी चूमा वैसे ही फिर चूमो ! तुम्हारे होंठ बड़े मीठे हैं !’

‘आह मेरे प्यारे !’ ग्लेसेरिया ने पिघलकर कहा, ‘अच्छा तो अपने होंठ दो ! मेरे प्यारे मुझे अपने होंठ चूमने दो !...’

‘यह कहकर उसने लिखोनिन को स्नेह से अपनी बड़ी-बड़ी छातियों से चिपटा लिया और फिर अपने मोटे, गीले और गरम होंठों से उसके होंठों को तर कर दिया । फिर उसकी बाँह पकड़ कर उसको खींच कर वह बीच में ले आई और मटक-मटक कर उसके चारों ओर एक अश्लील गीत गाती हुई नाचने लगी ।

लिखोनिन पर भी अब रङ्ग चढ़ चुका था । अस्तु वह भी ग्लेसेरिया के साथ-साथ बकरे की भाँति उसके चारों तरफ़ इस प्रकार थिरकने लगा जैसे कि किसी घूमते हुए बड़े नक्षत्र के साथ-साथ एक छोटा तारा चिपटा हो । लिखोनिन के नाच में शरीक होने पर भीड़ ने मित्रभाव से हर्षध्वनि की । नानबाइन ने उसे मेज़ पर बैठाकर ताड़ी पिलाई और गोश्त खिलाया । लिखोनिन ने एक आदमी से, जिसे वह पहिचानता था, बीयर शराब मँगाकर, शराब का गिलास हाथ में लेकर तीन बेहूदा व्याख्यान झाड़ डाले । एक व्याख्यान तो उसने यूक्रेन प्रांत के लिए स्वराज्य की ज़रूरत पर दिया ; दूसरा लिटल रूस की स्त्रियों के सौन्दर्य और गृहस्थी का ज़िक्र करते हुए लिटल रूस के गोश्त की तारीफ़ में था और तीसरा न जाने क्यों दक्षिण रूस के उद्योग और व्यापार के सम्बन्ध में था । लुकेरिया के पास बैठा-बैठा वह बार-बार उसकी कमर में हाथ डालकर उसे चिपटाने की कोशिश करता था और वह भी इसका कोई विरोध नहीं करती थी, मगर वह अपने लम्बे-लम्बे हाथों से भी उसकी विशाल कमर को अपने हाथों में न पकड़ सका । हाँ, लुकेरिया ने अपने विशाल, अग्नि की तरह गरम और नरम हाथ में उसका हाथ इतनी जोर से मेज़ के नीचे दबाकर पकड़ लिया कि वह दुख उठा ।

इतने में नानबाइनों में, जो अभी तक एक दूसरे को बड़े स्नेह से

चूम रही थीं, कोई पुराना झगड़ा और गिला शुरू हो गया। दो नान-बाइनें, एक दूसरे के सामने कुहनियाँ कमर पर रखकर इस प्रकार खड़ी हो गईं जैसे कि मुर्गे लड़ने के लिए तैयार होकर खड़े हो जाते हैं और चुनीदा-चुनीदा गालियों की एक दूसरे पर वर्षा करने लगीं।

‘बेवकूफ ! काठ की उल्लू ! कुतिया की बच्ची !’ एक ने चिल्लाकर कहा, ‘तू मुझे यहाँ चूमने के लायक नहीं है।’ अपनी दुश्मन की तरफ अपनी पीठ घुमाकर और अपनी रीढ़ के नीचे हाथ मार-मारकर वह बोली, ‘यहाँ ! बिलकुल यहाँ !’

दूसरी ने गुस्से से चिल्लाकर जवाब दिया, ‘भूठी ! छिनाल कहीं की !’

लिखोनिन ने इस मौके का फायदा उठाया। वह मेज़ पर से इस प्रकार कूदकर उठा मानो उसे कोई काम एकाएक याद हो आया हो और यह कहता हुआ लपका :

‘लुकेरिया चाची, मेरी बाट देखना ! मैं अभी तीन-चार मिनट में लौटकर आता हूँ !’ यह कहकर वह भीड़ चीरता हुआ चला।

‘मालिक ! मेरे मालिक !’ लुकेरिया ने चिल्लाकर कहा, ‘जल्दी लौटकर आना ! जितनी जल्दी हो सके लौट आना ! मुझे तुमसे कुछ बात करनी है।’

सड़क के मोड़ पर घूम कर लिखोनिन यह याद करने की कोशिश करने लगा कि उसे फौरन ही कौन-सा काम करने के लिए था। वह अपनी अन्तरात्मा में अच्छी तरह जानता था कि वह क्या करना चाहता था, परन्तु वह अपने आपको धोखा देने, अपने मन से टाल-मटोल करने का प्रयत्न करने लगा। दिन खूब खिल रहा था। करीब नौ-दस बज चुके थे। सड़कों पर छिड़काव हो रहा था। मालिन छोकरीयाँ फूल बेचती फिर रही थीं। दक्षिण रूस का आनन्दपूर्ण, रङ्गीन और अमीर नगर जाग उठा था। सड़क पर चुङ्गी की एक गाड़ी तरह-तरह

के कुत्तों से भरी खड़खड़ाती हुई चली जा रही थी और उस पर दो लावारिस कुत्ते पकड़नेवाले जो अपने आपको 'शाही कुत्ते पकड़नेवाले' के बड़े नाम से भी पुकारते हैं, आज सुबह का शिकार पकड़े लिये जा रहे थे।

'वह अब तो उठ बैठी होगी,' लिखोनिन के दबे हुए विचार ने शरीर धारण किया, 'और अगर अभी तक वह सोती होगी तो मैं भी दीवान पर लेटकर कुछ देर सो लूँगा।'

मकान के रास्ते में अभी तक मिट्टी के लैम्प की धीमी रोशनी और बदबू वैसी ही फैल रही थी। ऊपर के रोशनदानों से आनेवाला सूर्य का प्रकाश बड़ी मुश्किल से कुछ-कुछ अन्दर आ रहा था। कमरे का द्वार खुला ही पड़ा था। लिखोनिन आहिस्ता से द्वार खोलकर अन्दर घुसा।

खिड़कियों पर पड़े परदों में से कुछ-कुछ रोशनी छनकर कमरे में आ रही थी। लिखोनिन ने कमरे के बीच में ठहर कर सोती हुई लियून्का की साँसें सुनी। उसके होंठ इतने गरम होकर सूखने लगे कि वह उन्हें बार-बार चाटने लगा। उसके घुटने काँपने लगे।

'पूछूँ कि किसी चीज़ की जरूरत तो नहीं है,' उसके मन में एका-एक विचार आया।

शराबी की तरह हाँफता हुआ, मुँह बाये, काँपते हुए पैरों से वह पलङ्ग तक गया।

लियून्का चित लेटी पलंग पर सो रही थी। एक नङ्गा हाथ उसका शरीर से सटा हुआ सीधा रखा था और दूसरा उसके सीने पर था। लिखोनिन उसकी तरफ झुका। उसका मुँह बिल्कुल लियून्का के मुँह के पास आ गया। वह एक-सी गहरी साँसें ले रही थी। उसके जवान स्वस्थ शरीर में से निकलनेवाली यह साँसें स्वच्छ और लगभग सुगन्धित थीं। लिखोनिन ने उसके नंगे हाथ को अपने हाथ से सहलाया और उसकी छाती को छुआ। 'क्या कर रहे हो?' उसकी बुद्धि ने

घबराकर उससे एकाएक पूछा। मगर उसकी बजाय किसी और ने ही उत्तर दे दिया, 'कुछ भी नहीं! मैं सिर्फ देखता हूँ कि वह अच्छी तरह सो रही है या नहीं और उसे चाय तो नहीं चाहिये।'।

मगर लियूब्का एकाएक जग गई। उसने अपनी आँखें खोलीं और फिर उन्हें बन्द किया और खोला। उसने अपने दोनों हाथ फैलाकर लम्बी अँगड़ाई ली और स्नेह से मुसकराते हुए अपनी दोनों गरम-गरम और मजबूत बाँहें लिखोनिन के गले में डाल दीं।

'प्यारे! मेरे प्यारे!' बड़े प्रेम से नींद से भराई हुई आवाज़ में उसने कहा, 'मैं तुम्हारा इन्तज़ार करते-करते थक गई यहाँ तक कि मुझे तुम पर क्रोध आने लगा। फिर मैं थककर सो गई और रातभर तुम्हें स्वप्न में देखती रही। आओ, मेरे प्यारे! मेरे निकट आओ!' यह कहते हुए उसने लिखोनिन को अपनी छाती से चिपटा लिया।

लिखोनिन ने कोई विरोध नहीं किया। मगर वह काँप रहा था—मानो उसको ठण्ड लग रही हो—और बार-बार धीमी फुसकार में कटकटाते हुए दाँतों से व्यर्थ में कह रहा था, 'नहीं लियूब्का नहीं...ऐसा न करो...नहीं...रहने दो...लियूब्का मुझे न सताओ...मैं अपने आपे में नहीं हूँ...मुझे रहने दो...ईश्वर के लिए लियूब्का...'

'मेरे प्यारे पागल!' लियूब्का ने हँसते हुए खुशी से कहा, 'मेरे सर्वस्व! मेरे निकट आओ—'

यह कहते हुए उसने लिखोनिन का मुँह अपने मुँह से लगाकर उसको सच्चे स्नेह से—शायद अपने जीवन में पहली और आखिरी बार—दिलभर कर चूमा।

'अरे बदमाश! तू क्या कर रहा है?' किसी ने लिखोनिन के अन्तर में कहा।

'क्यों? अब तो तुम्हें फ़िफक नहीं रही?' लियूब्का ने लिखोनिन के होंठ आखिरी बार चूमते हुए पूछा, 'मेरे प्यारे! मेरे सर्वस्व!'

बारहवाँ अध्याय

आत्मा में ग्लानि और मन में अपने और लियूबका दोनो के प्रति, बल्कि सारी दुनिया के ही प्रति, घृणा और द्वेष लिए लिखोनिन बिना कपड़े उतारे ही टेढ़े और ढीले दीवान पर पड़ गया और शर्म से दाँत पीसने लगा। उसको नींद न आई और उसके विचार लियूबका को चकले से ले आने की अपनी मूर्खतापूर्ण हरकत के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने लगे। भोंडी रासलीला का एक महान नाटक बन गया था। 'खैर, जो कुछ भी हो,' उसने अपने मन में ज़िद से दुहराया, 'एक बार जो वायदा मैंने किया है उसे आखिर तक पूरा ज़रूर करूँगा। और अभी जो कुछ हो गया वह फिर कभी न होगा। हे ईश्वर, दुनिया में कौन ऐसा है जो कभी न गिरा हो ? किसी दार्शनिक ने ठीक ही कहा है कि किसी मनुष्य की आत्मा का मूल्य उसकी उड़ान की ऊँचाई और उसकी गिरान की गहराई से मालूम होता है। फिर भी कल का सारा दिन बड़ी बेवकूफी का ही रहा। भाड़ में जाय वह बातूनी अखबारनवीस प्लेटोनाव और उसकी व्यर्थ की दार्शनिक बहसों और मेरा जोश जिसमें भरकर मैं इस औरत को चकले से

निकाल लाया। ऐसा लगता है कि जो कुछ हुआ है वह वास्तविक जीवन की घटना नहीं है बल्कि किसी उपन्यास की घटना है। आज की घटना के बाद कल मैं किस मुँह से इस औरत से आँखें मिलाऊँगा ?

उसका सिर जल रहा था और पलक और होंठ सूखकर चटक रहे थे। जल्दी-जल्दी वह सिगरेट पर सिगरेट पी रहा था और बार-बार दीवान से उठकर, मेज़ पर से सुराही उठाकर उसी से मुँह लगाकर पानी ढकोस लेता था। किसी तरह बड़ी मुश्किल से आखिरकार उसने अपने विचार पिछली रात की घटनाओं से हटाये और उन विचारों के हटते ही उसे गहरी नींद ने आ दबोचा। वह निर्विघ्न नींद में डूबकर ऐसा पड़ गया मानो काली रूई में दब गया हो और जोर-जोर से खुराटे भरने लगा।

फिर जब उसकी आँख खुली तो तीसरे प्रहर के दो या तीन बजे थे। जग जाने के बाद भी काफी देर तक उसके होश-हवास ठीक नहीं हुए। वह होंठ चाटता हुआ भारी आँखों से कमरे में चारों तरफ़ घूरता रहा। कल रात को जो कुछ भी हुआ था उसके दिमाग़ से निकल चुका था। मगर फिर जब उसने लियून्का को सामने पलंग पर, चुपचाप और स्थिर, सिर झुकाये, घुटनों पर हाथ रखे बैठे देखा तो वह घबराहट और परेशानी से भिनभिनाने और कराहने लगा। उसे फिर सारी बातें याद हो आईं और उसे इस बात का स्वयं अनुभव हुआ कि रात की मूर्खता सुबह होने पर कैसी भयंकर दीखा करती है।

‘जग गये मेरे प्यारे ?’ लियून्का ने स्नेह से पूछा। वह उठी और दीवान के पास आकर लिखोनिन के पैरों के पास बैठ गई और ऐहतियाद कम्बल से ढके हुए उसके पैरों को थपथपाने लगी।

‘मैं बहुत देर से जगी बैठी हूँ। तुम्हें जगाने की मेरी हिम्मत नहीं हुई क्योंकि तुम गहरी नींद में सो रहे थे।’

यह कहकर वह उसकी तरफ़ झुकी और उसका गाल चूम लिया।

लिखोनिन ने चेहरा रूखा कर लिया और धीरे से उसे अपने शरीर से अलग कर दिया ।

‘ठहरो, लिखूबोच्का ! ठहरो ! इसकी ज़रूरत नहीं है ! समझीं ? इसकी बिल्कुल ज़रूरत नहीं है । जो कुछ कल हुआ फिर कभी न होना चाहिये । जो हुआ सो हुआ, मगर अब आगे फिर कभी नहीं ! समझीं ? मेरी कमजोरी थी या यह भी कह सकते हैं कि मेरा कमीनापन था जो मैंने ऐसा किया । मगर अब आगे फिर कभी ऐसा न होगा । मैं ईश्वर की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हें अपनी स्त्री बनाकर रखने के लिए नहीं लाया हूँ । मैं तुम्हें अपने मित्र, अपनी बहिन, अपने बन्धु की तरह देखना चाहता हूँ...खैर, जो हुआ सो हुआ । धीरे-धीरे अब सब ठीक हो जायगा । मनुष्य की आत्मा का पतन नहीं होना चाहिये । अच्छा प्रिये, जाओ ज़रा देर खिड़की के पास खड़ी होकर बाहर को देखो, मैं अपने कपड़े ठीक कर लूँ ।’

लिखूबका अपना होंठ थोड़ा-सा लटकाकर खिड़की के पास गई और लिखोनिन की तरफ पीठ फेरकर खड़ी हो गई । उस बेचारी मुर्गी के बराबर बुद्धिवाली सीधी-सादी किसान स्त्री की समझ में लिखोनिन की उसे मित्र, बन्धु या बहिन की तरह देखने की बात न आ सकी । उसे तो इस बात से खुशी हुई थी कि एक विद्यार्थी ने जो पढ़-लिखकर डाक्टर, वकील या जज बन सकता था, किसी ऐरेगैरे ने नहीं, अपना बनाकर रखने का निश्चय किया था ।...मगर अब उसे ऐसा लगा कि लिखोनिन भी जो कुछ उससे चाहता था, लेकर दूसरे मर्दों की तरह अब उससे पीछा छुड़ाने की सोच रहा था । सभी मर्द एक से होते हैं !

लिखोनिन जल्दी से उठा और दो-चार चुल्लू पानी अपने मुँह पर मारकर उसने एक पुराने अँगोछे से अपना मुँह सुखाया । फिर उसने खिड़कियों के पर्दे हटाकर दर्वाजे खोल दिये । सुनहरी धूप, नीला आकाश, शहर की चहल-पहल का शोर, नीबू और शाहबलूत के वृक्षों

की घनी छाया, घोड़ों की व ट्रामों की घण्टियाँ और सड़क की गर्मी और गर्द सब एक साथ इस छोटी-सी छत के कमरे में घुस पड़ी। लिखो-निन चलकर लियून्का के पास गया और मित्र भाव से उसका कन्धा थपथपाने लगा।

‘मेरी प्यारी, कुछ परवाह न करो ! जो हुआ सो हुआ आगे के लिए सबक लो। तुमने अभी तक चाय भी नहीं पी है लियूबोच्का ?’

‘नहीं, मैं तुम्हारे उठने की बाट देख रही थी और चाय पीना भी चाहती तो माँगती मैं किससे यह भी मुझे नहीं मालूम था। और एक बात और भी है। तुम यहाँ से अपने दोस्त के साथ चले जाने के बाद फिर लौटकर आये और कुछ देर तक दरवाजे के पास खड़े रहे। मैंने तुम्हारी आहट सुनी थी। मगर तुमने सोने के लिए जाने से पहिले मुझसे आखिरी सलाम भी नहीं किया। क्या यह अच्छी बात है ?’

‘गृहस्थी का पहिला भूमेला,’ लिखोनिन ने सोचा, मगर इससे उसके मन में कोई कुढ़न नहीं हुई।

हाथ-मुँह धोकर ताज़ा हो जाने से और सुनहरी घूप और नीले आकाश के संसर्ग से और अपने सामने भोलीभाली, आज्ञाकारी और प्रसन्नमुख लियून्का को देखकर और यह सोचकर कि आखिर मैं मर्द हूँ और वह औरत इसलिए जो कुछ हुआ है उसकी ज़िम्मेदारी मुझ पर ही है, उसको हिम्मत आई और उसने अपने आपको सँभाला। कमरे का द्वार खोलकर वह घर के रास्ते के अन्धकार में चिल्लाया :

‘एलेक्जेन्ड्रा ! एक सेमोवार चाय का ! दो रोटियाँ, मक्खन, गोश्त और एक बोतल शराब लाओ !’ स्लीपरो की पटपट रास्ते के अन्धकार में से सुनाई दी और एक बूढ़ी आवाज़ उस छोर से भारी स्वर में बोली :

‘इतनी ज़ोर से क्यों चिल्लाते हो ? इतना क्यों चीखते हो ? हो, हो,

हो ! घोड़े की तरह क्यों इतनी ज़ोर से हिनहिनाते हो ? तुम अब बालक नहीं हो, बड़े हो गये हो ! मगर फिर भी तुम आवारा बालकों की तरह मारे-मारे फिरा करते हो ! कहो. क्या चाहिये ?'

कमरे में एक छोटी बूढ़ी औरत घुसी जिसके पलक लाल-लाल नहीं दराज़ों की तरह थे और चेहरा भोजपत्र की तरह जिस पर एक लम्बी और तेज़ नाक नीचे की तरफ़ चिपकी हुई थी जो उदास और मनहूस लगती थी। यही ऐलेक्जेन्ड्रा थी—विद्यार्थी-गृहों की पुरानी नौकरानी, सारे विद्यार्थियों की मित्र और उन्हें रुपया उधार देनेवाली, पैंसठ बरस की बूढ़ी खूँसट, बड़ी बक्की और झकड़ी।

लिखोनिन ने फिर उससे चाय और दूसरा सामान लाने को कहा और उसके हाथ में एक रुपया पकड़ा दिया मगर बूढ़ी वहाँ से न हिली। एक कोने में गड़कर वह खड़ी हो गई और अपना शरीर हिलाकर, खखारती और होंठ चबाती हुई वह लियूबका की तरफ़ शत्रुभाव से घूरने लगी।

‘क्यों ? क्या हुआ, ऐलेक्जेन्ड्रा ? पत्थर की तरह क्यों खड़ी हो ?’ लिखोनिन ने हँसकर पूछा, ‘क्या इन पर मुग्ध हो गई हो ? यह मेरी चचेरी बहिन हैं। इनका नाम लियूबोव...’ वह क्षणभर सिटपिटाकर फिर जल्दी से बोला, इनका नाम लियूबोव वेसीलीव्ना है। मगर मैं इन्हें सिर्फ़ लियूबोव्का ही कहकर पुकारता हूँ। मैं इन्हें उस समय से जानता हूँ जब यह इतनी बड़ी थीं,’ उसने ज़मीन से एक चौथाई गज़ अपना हाथ ऊँचा उठाकर कहा, और मैं इनके कान खींचा करता था और इनके उस स्थान पर तमाचे लगाया करता था जहाँ से टाँगें निकलती हैं और मैं इनके लिए तितलियाँ और तरह-तरह के कीड़े पकड़ा करता था...मगर, खैर, तुम जाओ जल्दी यहाँ से, मुर्दा कहीं की और चाय फौरन ले आओ ! देखो, एक पाँव यहाँ रखो और एक उस छोर पर, दौड़ो !’

मगर बूढ़ी ठिठकती ही रही। जहाँ खड़ी थी वहीं पैर पटककर लियून्का को ईर्ष्यापूर्वक कनखियों से देखती हुई, द्वार की तरफ मुड़ी और मुँह लटकाती हुई बड़बड़ाई :

‘चचेरी बहिन है ! ऐसी चचेरी बहिनों को मैं खूब जानती हूँ ! ऐसी बहुत-सी चचेरी बहिनें सड़कों पर घूमती फिरती हैं। वहाँ इन कुत्तों का उनसे जी नहीं भरता !’

‘ओ खूसट ! ठीक तरह से बोल, गुरा मत !’ लिखोनिन उस पर चिल्लाया, ‘वरना मैं भी तुम्हें उस तेरे विद्यार्थी दोस्त की तरह गुसलखाने में चौबीस घण्टे के लिए अभी ताले में बन्द कर दूँगा !’

एलेक्जेन्ड्रा चली गई और बड़ी देर तक उसके स्लीपरो की पट-पट और अस्पष्ट बड़बड़ाहट रास्ते में से आती रही। वह अपने गम्भीर स्नेह में, विद्यार्थियों को जिनकी सेवा लगभग चालीस वर्ष से करती आई थी, बहुत कुछ माफ़ कर देने के लिए तैयार रहती थी। नशेबाजी, ताशबाजी, मगड़े-बखेड़े, ज़ोर-ज़ोर से गाना, कर्जे इत्यादि वह उन्हें माफ़ कर सकती थी, मगर उसने स्वयं विवाह नहीं किया था ; अस्तु एक चीज़ माफ़ कर देना उसके लिए असम्भव था अर्थात् व्यभिचार !

अध्याय तेरहवाँ

‘यह सब बड़ा अच्छा...बड़ा सुन्दर लगता है,’ लिखोनिन लँगड़ी मेज़ पर चाय की चीजें यों ही इधर-उधर करता हुआ उत्साह से कह रहा था, ‘बहुत दिनों से मुझे इस तरह बैठकर घर-गृहस्थी के वातावरण में चाय पीने का मौका नहीं मिला है। आओ लियून्का, बैठो इस दीवान पर मेरी प्यारी और घर-गृहस्थी का काम सँभालो। शायद सुबह को शराब पीना तुम पसन्द न करोगी...मगर तुम्हारी इजाज़त से मैं थोड़ी पियूंगा क्योंकि सुबह थोड़ी-सी पी लेने से मेरी तबियत ठीक रहती है। मेरी चाय जरा तेज बनाना और उसमें थोड़ा नीबू का रस भी डाल देना। आह, किसी सुन्दरी के हाथों से बनी चाय से अधिक स्वादिष्ट चीज दुनियाँ में और क्या हो सकती है ?’

लियून्का को उसकी बातें बकवास की तरह और कुछ अस्वाभाविक भी लगीं। शुरू में वह अविश्वास से झिझकती हुई मुसकराती रही, मगर फिर धीरे-धीरे वह पिघली और खुलकर हँसने लगी। फिर भी चाय वह ठीक तरह नहीं बना सकी। उसके गाँव में जहाँ की वह रहने-वाली थी, चाय अच्छे घरों में ही तोहफ़ा की तरह इस्तेमाल होती थी

और मेहमानों के लिए अथवा किसी बड़े त्यौहार पर ही तैयार की जाती थी। वहाँ चाय प्यालों में डालकर पिलाने का काम घर के सब से बड़े-बूढ़े के सुपुर्द होता था। बाद में जब लियूबका पहिले-पहल शहर में पहिले एक पुजारी और बाद में एक बीमा कम्पनी के एजेन्ट के यहाँ काम करती थी—जिसने उसे पहिले-पहल वेश्यावृत्ति का मार्ग दिखाया था—तब उसको मालकिन-पहिले तो पतली, पीली-पीली घृणापूर्ण आखोंवाली, पुजारी की पत्नी और बाद में बीमा एजेन्ट की मोटी, बूढ़ी, भुर्रीदार और प्रतीकारपूर्ण चेहरेवाली, मैली और ईर्ष्यापूर्ण कंजूस स्त्री, उसको थोड़ी-सी बची-खुची गुनगुनी चाय और जूठी की हुई शकर देती थी। अस्तु चाय बनाने की साधारण क्रिया उसके लिए ऐसी ही कठिन थी जैसा कि बचपन में हम सबको दाहिना और बायाँ हाथ पहिचानना या रस्सी का एक छोटा-सा फन्दा बनाना कठिन होता है। लिखोनिन के चाय की चीज़ें उठा-उठाकर इधर-उधर करने से वह और घबराकर अपने औसान खो बैठी।

‘प्रिये, चाय बनाना भी एक बड़ा हुनर है। मॉस्को के लोग इसे खूब जानते हैं। पहिले तो वे एक खाली चाय के बर्तन को आग पर थोड़ा-सा गरम करके सुखाते हैं। फिर उसमें चाय डालकर उस पर वे खौलता हुआ पानी भर देते हैं। फिर वे उस पानी को फौरन चाय में से निकालकर बाहर उडेल देते हैं जिससे चाय साफ़ हो जाती है और उससे अच्छी खुशबू निकलने लगती है। वहाँ वालों का कहना है कि चीन के लोग जाहिल होते हैं और चाय बड़ी गन्दी तरह पर बनाते हैं। * खैर, पहिला चाय का पानी फेंक देने के बाद चाय के बर्तन में

* यह बात बिल्कुल गलत है क्योंकि चीनियों की भाँति सुन्दर चाय संसार में बहुत कम लोग बनाते हैं। परन्तु यह लखनऊ और दिल्लीवालों की-सी बहस है क्योंकि रूसी भी चाय बनाने में बड़े होशियार होते हैं जिससे वे चीनियों को अपने मुकाबले में देय समझते हैं।

तिहाई हिस्से तक, फिर खोलता हुआ पानी भर दिया जाता है और बर्तन को एक तौलिया से ढककर तीन-चार मिनट तक रख दिया जाता है। उसके बाद बर्तन को मुँह तक फिर खोलते हुये पानी से भरकर फिर थोड़ी देर कपड़े से ढककर रख दिया जाता है। इस प्रकार बड़ी जायकेदार चाय मॉस्को में तैयार की जाती है, मेरी प्यारी, जो बड़ी खुशबूदार, ताजगी और ताकत देनेवाली होती है।'

लियूबका का सादा, अच्छा दीखनेवाला चेहरा, जिस पर कोयल के अण्डे की तरह दाग थे, लम्बा होकर कुछ पीला पड़ गया।

‘अच्छा, ईश्वर के लिए, मुझसे खफ़ा न होना...तुमको वसील वसीलिश ही कहते हैं न ? अच्छा, मेरे प्यारे वसीलवसीलिश, देखो मुझसे नाराज़ मत हो जाना। मैं सच कहती हूँ बहुत जल्द मैं चाय बनाना सीख लूँगी और तुम मुझसे हमेशा इतने अदब से ‘आप’ ‘आप’ कहकर क्यों बोलते हो ? हम लोग अब तो एक दूसरे के लिए नये नहीं रहे हैं ?’

यह कह कर उसने लिखोनिन को स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखा और सच तो यह है कि आज सुबह ही उसने अपनी टूटी-फूटी छोटी-सी ज़िन्दगी में पहिली बार एक आदमी को अपना शरीर खुशी से—रुपये के लालच से, मजबूर होकर अथवा नौकरी छूट जाने या बदनामी के डर से नहीं—दिया था। उसको उससे कोई खास आनन्द तो नहीं मिला था मगर फिर भी अपनी खुशी से, कृतज्ञता और रहम से वह एक आदमी के साथ हमबिस्तर हुई थी और उसका स्त्री-हृदय जो कभी नहीं मुर्झाता और सूर्यमुखी का फूल जिस तरह सूर्य का प्यासा रहता है उस तरह सदा प्रेम का प्यासा रहता है—इस समय स्वच्छ और स्नेहार्द्र हो रहा था !

मगर लिखोनिन को इस स्त्री के सामने जिसको कल तक वह बिल्कुल नहीं जानता था और जो आज उसकी यकायक रखेली हो

गई थी दिल को चुभनेवाली एक शर्म-सी हो रही थी। 'गृहस्थी का आनन्द शुरू हो गया,' उसने मन ही मन सोचा। वह कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया और लियूब्का के पास जाकर, उसको हाथ से पकड़ कर अपनी तरफ खींच कर उसका सिर थपथपाने लगा।

'मेरी प्यारी, मेरी प्यारी बहिन,' उसने स्नेहपूर्वक झूठा भ्रातृ-भाव दिखाते हुए कहा, 'जो आज हुआ वह फिर कभी न होना चाहिये। मैं मानता हूँ कि जो कुछ भी हुआ उसमें सारी ग़लती मेरी ही थी और इसलिए तुम चाहो तो मैं तुमसे घुटने टेककर माफ़ी माँगने को तैयार हूँ। एकाएक, मेरी इच्छा के विरुद्ध, स्वाभाविक तौर पर किसी तरह आप से आप बिना मेरी आशा के, ऐसा हो गया। समझो! मुझे ज़रा भी आशा नहीं थी कि ऐसा हो जावेगा। मगर बात यह है कि बहुत दिनों से मैं किसी स्त्री के पास नहीं गया था। अतएव मेरे अन्दर एक घृणित, बेलगाम का पशु एकाएक जाग उठा... और हे ईश्वर...क्या सचमुच मेरा गुनाह इतना बड़ा है? पवित्र कहलानेवाले मनुष्य, साधु, सन्यासी और जती भी मुझसे अधिक संयम नहीं कर सकते क्योंकि वे भी अक्सर ऐसी कमजोरी का शिकार हो जाते हैं। मगर जो हुआ सो हुआ...आगे के लिए जिसकी तुम चाहो कसम खाकर मैं कह सकता हूँ कि ऐसा फिर कभी न होगा... समझती हो?'

लियूब्का उसके हाथों से अपना हाथ छुड़ा लेने के लिए हठ कर रही थी। उसके होठ कुछ-कुछ लटक आये थे और उसके निचले पलक बार-बार फड़कते थे।

'हाँ...हाँ', उसने रहँकाकर कहा जैसे कि नाराज़ हो जाने पर बच्चे रुठकर कहते हैं, 'हाँ, मैं देखती हूँ कि तुम मुझसे खुश नहीं हो। ऐसा है तो तुम मुझसे साफ़-साफ़ क्यों नहीं कह देते। मुझे वापस जाने के लिए गाड़ी का भाड़ा थोड़े कुछ और दाम, जितने तुम चाहो, दे

दो। रात भर का दाम तुम वहाँ दे ही आये हो...मुझे सिर्फ वहाँ वापिस पहुँचने तक का भाड़ा दे दो...'

लिखोनिन ने अपने सिर के बाल पकड़कर खींच लिये और कमरे में इधर-उधर दौड़ता हुआ चिल्लाया :

'अरे, मेरा मतलब यह नहीं था ! मेरा मतलब यह हरगिज़ नहीं था ! ज़रा मुझे समझने की कोशिश करो, लियूबा ! आज सुबह जो कुछ हुआ उसको जारी रखना सूरपरन है, पशुता है, भले आदमियों के स्वाभिमान के विरुद्ध है ! प्रेम ! प्रेम दिमागों, विचारों, आत्मा, और रुझानों के सम्मिलन का नाम है, न कि सिर्फ दो शरीरों के सम्मिलन का । प्रेम एक बड़ी ज़बरदस्त शक्ति, एक महान भाव, संसार की तरह शक्तिशाली वस्तु है । बिस्तर में एक साथ लेट रहना ही प्रेम नहीं है । अभी तक हम दोनों के बीच में वैसा प्रेम पैदा नहीं हुआ है, लियूबोच्का । जब ऐसा प्रेम हम दोनों में हो जायगा तब हम दोनों अधिक सुखी होंगे, परन्तु जब तक ऐसा प्रेम हम दोनों में एक दूसरे के लिए नहीं है तब तक मैं तुम्हारा जीवन में एक सच्चा सखा ही हूँ और तब तक के लिए यही काफी है...मैं अपनी कमज़ोरियों को भी अच्छी तरह जानता हूँ । मगर साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि मेरा दिल साफ़ है और मैं कमीना या बेईमान नहीं हूँ ।'

लियूबोच्का उसकी बातें सुनकर मुर्मा-सी गई । 'यह शायद समझता है कि मैं उससे विवाह करना चाहती हूँ । मगर मुझे तो उसकी फ़िक्र नहीं है ।' उसने उदास मन से सोचा, 'यों भी तो रह सकते हैं । दूसरी बहुत-सी भी तो महज़ गुज़ारे पर रहती है और सुनते हैं कि वे उस हालत से अच्छी हैं जो उनकी विवाह हो जाने पर होती है । इसमें बुरा ही क्या है ! शान्ति-पूर्वक, घर-गृहस्थी का जीवन बिताऊँगी...इसके लिए मोजे बुना करूँगी...घर झाड़ूँगी और धोऊँगी, खाना पकाऊँगी...जो कुछ थोड़ा-बहुत खाना मुझे पकाना आता है वही पकाया करूँगी । इसके

लिए किसी अच्छे घर की लड़की से एक दिन शादी कर लेना ही ठीक होगा। मगर यह मेरा खयाल भी जरूर रखेगा ही और मुझे गली-कूचों की खाक फिर न छानने देगा। है तो यह निरा भोला ही और बकमक भी व्यर्थ की बहुत करता है, मगर भला आदमी है। मेरा कोई न कोई इन्तजाम जरूर कर देगा और शायद यह मुझे ही पसन्द करने लगे। मैं ही शायद इसके मन चढ़ जाऊँ ? मैं सीधी-सादी छोकरी हूँ और कोई बड़ी इच्छायें भी मेरी नहीं हैं। मैं कभी इसे धोखा नहीं दूँगी। लोग कहते हैं कि कभी-कभी वैसा भी हो जाता है...मगर इसको उसकी खबर नहीं लगनी चाहिये। इसका तो मुझे पूरा विश्वास है कि इस वक्त यह चाहे जो कहे रात को फिर यह मेरे साथ आकर जरूर लेटेगा।'

लिखोनिन भी उदास मुख से कुछ सोच रहा था। इसको जो भारी काम उसने अपने कन्धों पर उठा लिया था उसका बोझ सँभालना अभी से कठिन दीखने लगा था। अतएव किसी की इस समय आकर द्वार खटखटाने पर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई और उसके 'आइये अन्दर आइये' कहने पर दो विद्यार्थी अन्दर घुस आये। एक तो सोलोवीव था और दूसरा निजारजे जो रात को उसके यहाँ सोया था।

सोलोवीव लम्बा, चौड़ा और तगड़ा था। वह कुछ मोटा भी हो चला था। उसका चेहरा चौड़ा और लाल-लाल-वाल्मा नदी के किनारे रहनेवाले लोगों का-सा था जिस पर एक छोटी-सी तुकल दाढ़ी थी। वह उन मेहरबान, खुशमिजाज़ और सादे शरुसों में से था जो हर यूनीवर्सिटी में काफी तादात में मिला करते हैं। वह अपनी फुरसत का वक्त—और चौबीसों घण्टे उसे फुरसत ही रहती थी—शराब की दूकानों व सड़कों पर घूमने, ताश व बिलियर्ड खेलने, थियेटर देखने, अखबार और उपन्यास पढ़ने, तथा सरकस और दंगल देखने में बिताया करता था। इन कामों के बीच में जो थोड़ा-सा समय बचता था उसे वह खाने, सोने,

अपनी अलमारी को डोरे, पट्टे, पिन और सिंहाई से अपने हाथों मरम्मत करने में बिताता था और मित्रों को ज़रूरत पड़ने पर पासपोर्ट और रुपया भेजता था। उसके शरीर में बड़ी शक्ति और स्वभाव में काली मिट्टी की-सी नमी और हृदय में सादगी थी। प्रायः उसके पास घर से काफ़ी रुपया खर्च के लिए आता था मगर वह उसको दो-चार दिन में ही अपने मित्रों पर बिखेर डालता था और स्वयं जाड़े में भी अपना एक ही कोट और खुद अपने हाथ से मरम्मत किया हुआ जूता पहिने फिरा करता था।

इन तमाम भोले-भाले, स्नेहमय, उपहास योग्य, ऊँचे और बेकार गुणों के साथ ही जो पुराने ज़माने के रूसी विद्यार्थियों में हुआ करते और भले के लिए ही लुप्त होते जा रहे थे, उसमें ज़रूरत के वक्त कहीं न कहीं से रुपया ले आने और खाने की दूकानों में उधार का प्रबन्ध कर लेने का भी बड़ा भारी गुण था। तमाम बौहरों की दूकानों और पेढ़ियों के नौकर, छिपे और खुले सूदखोर, पुराने कपड़े बेचनेवाले उसके बड़े यार-दोस्त थे।

मगर उनसे भी काम न बनने पर सोलोवीव किसी दूकान या बाज़ार में मिल जानेवाली स्त्रियों से क्षणिक और सच्चा प्रेम करने में बिताया करता था। अपने दूसरे तमाम विद्यार्थी साथियों की तरह वह भी अपने आपको क्रान्तिकारी मानता था, मगर उसको आपस के राजनैतिक झगड़े-बखेड़े और दलबन्दी पसन्द नहीं थी। क्रान्तिकारी पच्चे और किताबें भी उससे बैठकर पढ़े नहीं जाते थे जिससे वह क्रान्तिकारी कार्य में बिल्कुल अज्ञानी था। अतएव उसको दल में सम्मिलित करने की दीक्षा तक नहीं दी गई थी गोकि कभी-कभी उसको ऐसे खतरनाक काम सौंपे जाते थे जिनका मतलब उसको नहीं बताया जाता था और उस पर विश्वास व्यर्थ नहीं होता था क्योंकि वह हरएक ऐसे काम को बड़ी फुर्ती, सच्चाई और श्रद्धा से, खतरों की कोई चिन्ता

न करते हुए, हँसते-हँसते कर डालता था। वह फरार बन्धुओं, ज़ब्त किताबों और छापेखानों को छिपाकर बड़ी होशियारी से किसी तरह ज़रूरत पड़ने पर कहीं न कहीं से रुपया ले ही आता था। ज़रूरतमन्द गरीब दोस्तों की टुकड़ी का सरदार होकर, अपने काम की ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह समझता हुआ, एकाएक उसके मन में एक विचार आता था और वह दूर से ही सड़क पर, अपनी पीठ पर गठरी लादे हुए जानेवाले तातार को एक रहस्यपूर्ण इशारा करता था और झपटकर उसके साथ पास के द्वार में घुस जाता था। शीघ्र ही फिर लौटने पर उसके शरीर पर उसका रोज़ाना का कोट नहीं होता था और वह सिर्फ अपना कुर्ता, जिसकी कमर पर एक डोरी बँधी होती थी, पहिने होता था अथवा जाड़ों में अपना ओवरकोट उतारकर पतले कपड़ों में निकलता था ; अथवा हाल ही में खरीदी हुई नई वर्दी की टोपी देकर सिर पर एक छोटी-सी घोड़े दौड़ानेवालों की-सी टोपी रखे, जो मुश्किल से उसके सिर के बीच के हिस्से को ढकती थी, निकलता था।

मित्र, नौकर, स्त्रियाँ और बच्चे सभी उसे प्यार करते थे। सभी से उसकी जान-पहचान थी। उसके दिलीदोस्त तारतार की उसपर खास कृपा दृष्टि रहती थी गोकि वह उसको एक भोला आदमी समझते थे। वे कभी-कभी बोटलों में भरकर उसके लिए अपने देश से तेज़ शराब लाया करते थे और बैराम शहर में वे उसको दुम्बे का गोश्त अपने साथ खाने के लिए दावतें दिया करते थे। कितनी ही असम्भव बात क्यों न लगे मगर सोलोवीव खतरनाक मौकों पर उन्हें क्रान्तिकारी पर्व और किताबें भी हिफाज़त से रखने के लिए दे देता था। ऐसे मौकों पर वह अपने चेहरे को खास तौर पर भोला और गम्भीर बनाकर उनसे कहता, 'देखो यह किताब जो मैं तुम्हें दे रहा हूँ बड़ी पाक किताब है। इसमें अल्लाहो अकबर और उसके नबी हज़रत मुहम्मद को माना गया है। यह किताब कहती है कि दुनिया में बुराई और गरीबी बहुत है

और हर आदमी को एक दूसरे के साथ रहम और इन्साफ़ का बर्ताव करना चाहिये ।’

इस सब के अलावा उसमें दो गुण और थे । एक तो जोर से वह पढ़ता बहुत अच्छी तरह था । दूसरे शतरंज खेलने में वह ऐसा माहिर था कि बड़े-बड़े उस्तादों को हँसी-हँसी में मात दे देता था । उसका हमला बहुत जोर का और सख्त होता था और बचाव बहुत समझ का और होशियारी का—खासकर तिरछी चाल का ; अपने मोहरे वह दुश्मन से इस होशियारी से पिटवाता था कि उससे उस बेचारे पर एकाएक आफ़त का पहाड़ ही टूट पड़ता था । चालें चलने में वह कभी न तो दो-चार सेकण्ड से अधिक विचार ही करता था और न पुराने ढङ्ग और तरीकों के अनुसार चलने की फ़िक्र करता था । स्वभाव से ही वह शतरंज का एक सिद्धहस्त खिलाड़ी था ।

लोग उसके साथ शतरंज खेलते डरते थे । वे उसके खेल के तरीकों को उजड़ु समझते थे । फिर भी वे उसके साथ खेलते थे और अक्सर भारी-भारी दाँव लगाये जाते थे जो आमतौर पर सोलोवीव जीत लेता था और जीत का सारा माल वह फौरन दोस्तों की ज़रूरतों पर खर्च कर डालता था । मगर वह शतरंज के टूर्नामेंटों में भाग लेने से हमेशा अलग रहता था गोकि उनमें वह भाग लेता तो शतरंज की दुनिया में उसका नाम हो सकता था । मगर उसका कहना था कि, ‘इस शतरंज की बेवकूफी को न तो मैं पसन्द ही करता हूँ और न इसके लिए मेरे दिल में कोई इज्जत ही है । मेरे दिमाग़ में कोई ऐसी बात है, कोई एक दोष या बीमारी-सी, जिससे मैं आसानी से बाज़ी जीत लेता हूँ । अतएव मुझे न तो इस बात पर किसी किस्म का अभिमान ही होता है कि मैं शतरंज का एक अच्छा खिलाड़ी हूँ और न मुझे जीत की खुशी या हार का रंज ही होता है ।’

लम्बा चौड़ा सोलोवीव नाम का विद्यार्थी ऐसा था । उसका सबसे

बड़ा दोस्त निजारज़े था, परन्तु एक दूसरे के बड़े दोस्त होते हुए भी यह दोनों दिन-रात एक दूसरे को चिढ़ाते, गालियाँ देते और आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे। ईश्वर ही जाने जार्जियन शाहज़ादा निजारज़े किस तरह अपना खर्च चलाता था। उसका अपने बारे में कहना था कि वह ऊँट की तरह कई हफ्तों के लिए एक बार में ही खा सकता था जिससे फिर एक महीने तक खाने की उसे ज़रूरत नहीं रहती थी। उसके घर जार्जिया से उसके पास बहुत कम खर्च आया करता था—जो कुछ आता था वह खाने-पीने का सामान होता था। बड़े दिन पर, ईस्टर में और अगस्त के महीने में उसके जन्म-दिवस पर, आम तौर पर उसके प्रान्त से आने वाले परिचित लोगों के साथ, उसके लिए बहुत-सा गोश्त, अंगूर, सूखे बेर और लुहारे, रोगनी मोठी रोटियाँ और घर की बनी तेज़ और खुशबूदार शराब, जिसमें से थोड़ी भेंड़ की खाल की भी मँहक निकलती थी, आया करते थे। यह सामान आने पर शाहज़ादा, अपने किसी दोस्त के कमरे पर—क्योंकि वह कभी अपने लिए कोई कमरा नहीं रखता था—अपने तमाम दोस्तों और हमवतनों की दावत करता था। खाने-पीने के साथ-साथ जार्जियन नाच-गाना भी खूब होता था जिसमें खाना खाने के छुरी काटें हिला-हिलाकर लोग खूब नाचते थे और निजारज़े नये-नये गीत बना-बनाकर गाता था और खूब बकता था।

बकवाद में निजारज़े का मुकाबला करना किसी को भी मुश्किल था क्योंकि जोश में भर जाने पर वह तीन सौ शब्द भी मिनट बोलता था। उसका बोलने का तरीका शानदार, जोशीला और बड़ा रङ्गीन था। उसका जार्जिया प्रदेश का उच्चारण, जिसमें हलक का ज्यादा इस्तेमाल होने से वह फाख्ता की हू-हू और गिद्ध की आवाज़ की तरह लगता था, उसकी बातचीत में कोई अड़चन नहीं डालता था बल्कि उसे और मजेदार बना देता था और चाहे वह किसी विषय पर भी

बोलता अन्त में वह सब से सुन्दर, सब से ज़रखेज़, सब से आगे, सब से वीर और सबसे दुःखी जार्जिया प्रदेश का जिक्र ज़रूर करता। वह जार्जिया प्रान्त के सबसे मशहूर कवि रूस्तावेली की एक कविता पढ़ता और अपने सुननेवालों को विश्वास दिलाता कि वह शेक्सपीयर और होमर से हज़ार दर्जे अच्छी है।

वह तेज़ मिज़ाज का तो ज़रूर था, मगर दिल का बड़ा अच्छा था। वह स्त्रियों की तरह कोमल हृदय का, नम्र, अपनी बातचीत से सबको खुश करनेवाला और अपना प्रादेशिक अभिमान कभी न छोड़नेवाला था। सिर्फ़ उसकी एक बात उसके मित्रों को नहीं पसन्द थी—स्त्रियों के लिए उसका दिखावटी अति प्रेम और लिप्सा। उसे इस बात का अटल विश्वास था कि वह बहुत खूबसूरत है; सारे आदमी उससे जलते और सारी स्त्रियाँ उस पर मरती हैं और पतियों को उससे ईर्ष्या होती है। इस विश्वास के कारण वह स्त्रियों के पीछे लगा फिरता था—यहाँ तक कि सोते हुए भी उन्हीं का खयाल रखता था। सड़क पर लिखोनिन या सोलोवीव के साथ जाते हुए वह बार-बार किसी औरत के पास से निकलने पर अपने साथियों को कुहनियाँ मारकर कहता, ‘सी...सी...देखो कैसी सुन्दर औरत जा रही है। कैसी नज़र उसने मुझ पर अभी डाली ! मैं चाहूँ तो आसानी से यह मेरी हो सकती है !...’

उसकी इस हास्यास्पद कमजोरी को सभी जानते थे। मगर वे उसके इस दोष की हँसी उड़ाकर टाल देते थे क्योंकि वह अपने मित्रों के प्रति बड़ा सच्चा और हमेशा—अपने वायदों का स्त्रियों के वायदों के अति रिक्त—बड़ा पक्का था। मगर साथ ही यह भी ज़रूर सच है कि स्त्रियों में उससे बहुत सफलता मिली थी। सिलाई का काम करनेवाली स्त्रियाँ, गाने और नाचनेवाली छोकरियाँ, मिठाई की दूकानों पर सामान बेचनेवाली छोकरियाँ और टेलीफोन कम्पनी में काम करनेवाली लड़कियाँ

उसके भारी, कोमल, नशीली, नीली आँखों की एक गहरी दृष्टि पड़ते ही पिघल जाती थीं।

‘इस घर को और इस घर में आराम से रहनेवाले पवित्र और बेगुनाह लोगों को, सोलोवीव ने घुसते ही एक बड़े पादरी की तरह कहना शुरू किया और फिर एकाएक सिटपिटाकर बोला, ‘पवित्र पादरियों’ और आश्चर्य से चकित होकर बड़बड़ाते हुए उसने अपना मज़ाक पूरा करने का प्रयत्न करते हुए कहा, ‘मगर यार यह तो सोनया...नहीं, मेरी ग़लती हुई, नादया...नहीं, अन्ना के चकले की लियूब्का है...’

लियूब्का लज्जा से लाल हो गई, उसकी आँखों में आँसू आ गये और उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढाँक लिया। लिखोनिन ने यह देखा और फौरन उसकी आत्मग्लानि और दुख को समझकर उसकी मदद में सोलोवीव को फटकार कर चुप करता हुआ, बोला :

‘ठीक है सोलोवीव। यह चकले में रहनेवाली लियूब्का है। पहले यह वेश्या थी—बल्कि कल रात तक भी यह वेश्या थीं, मगर आज से यह मेरी दोस्त और मेरी बहिन है। अतएव जिसके दिल में मेरे लिए इज्जत है उसको इसकी मेरी बहिन की तरह इज्जत करनी चाहिये। वरना...’

विशालकाय सोलोवीव ने झपटकर, सच्चे हृदय से लिखोनिन को पकड़कर जोर से अपने सीने से चिपटा लिया।

‘बस बस, मेरे प्यारे दोस्त, काफ़ी है। मुझसे बड़ी बेवकूफी हुई। अब वैसी बेवकूफी फिर मुझसे न होगी। स्वागत है, प्यारी बहिन!’ यह कह कर उसने अपना चौड़ा हाथ मेज़ के ऊपर से फैलाकर लियूब्का की छोटी-छोटी उङ्गलियाँ उसमें दबा लीं। ‘आपका हमारे डेरे में आ जाना बड़ा अच्छा हुआ ! आपके यहाँ आ जाने से हम लोगों में कुछ शान्ति और शिष्टता आ जायगी। ऐलेकजेन्डा, शराब लाओ!’ उसने

जोर से चिल्लाकर कहा। 'हम लोग जङ्गली और भोड़े बन गये हैं और गालियों, शराबखोरी, आलस और दूसरी बहुत-सी बीमारियों का शिकार हो रहे हैं और यह सब इसलिए है कि हम लोग स्त्रियों के अच्छे, शान्तिपूर्ण प्रभाव से दूर रहते हैं। मैं आपका फिर एक बार यहाँ आने पर स्वागत करता हूँ। शराब लाओ !'

'लाती हूँ', ऐलेकजेन्ड्रा की नाराज़ आवाज़ रास्ते के उस छोर से आई, 'अभी लाती हूँ। चीखते क्यों हो ? कितनी शराब चाहिये ?'

सोलोवीव उसे बाहर समझाने चला गया। लिखोनिन उसकी पीठ की तरफ़ देखता हुआ कृतज्ञता से मुस्कराया और शाहज़ादे ने उसके साथ जाते हुए उसकी पीठ ठोकी। दोनों की समझ में सोलोवीव का सिटपिटाना आ गया था।

'अच्छा अब,' सोलोवीव ने कमरे में लौटकर एक पुरानी कुर्सी पर बैठते हुये कहा, 'अब मतलब की बातें होने दो। क्या मैं तुम्हारी किसी प्रकार सेवा कर सकता हूँ ? आधे घण्टे का वक्त मुझे दो तो मैं अभी काफ़ी की दूकान में जाकर किसी न किसी से अभी बाज़ी जीतकर रुपया मटके लाता हूँ। गरज़ यह कि मैं हर तरह से तुम्हारी सेवा करने के लिए हाज़िर हूँ !'

'बड़े अजीब आदमी हो !' लियूबका ने हँसते हुए सिटपिटाकर कहा। उसकी समझ में इस विद्यार्थी की बातें तो न आईं, मगर उसकी सादगी से उसकी तरफ़ उसका दिल खिंचा।

'खैर, उसकी कोई ज़रूरत नहीं है,' लिखोनिन बोला, 'इस वक्त तो मैं काफ़ी अमीर हो रहा हूँ। चलो, हम सब लोग किसी होटल में चलें। मुझे कई बातों में तुम्हारी सलाह भी लेनी है। आखिर तुम्हीं लोग मेरे निकट हो और तुम ऐसे बेवकूफ़ या नातजुरबेकार नहीं हो जैसे व्यवहार से दीखते हो। उसके बाद जाकर मुझे इनका प्रबन्ध करना है...इनका पासपोर्ट वापिस लेना है। तुम लोग मेरा इन्तज़ार करना।

ज्यादा देर नहीं लगेगी... इस सारे मँकट को तुम अच्छी तरह समझते ही हो... मेरी अधिक मजाक उड़ाने की ज़रूरत नहीं है। मैं...' यह कहते हुए उसकी ज़बान स्नेह और दिखाव से काँपी, 'मैं चाहता हूँ कि मेरी इस बड़ी ज़िम्मेदारी में तुम भी मेरा कुछ हाथ बटाओ। क्यों, हो इसके लिए तैयार ?'

'क्यों नहीं ? ज़रूर !' शाहज़ादे ने लियूबका की तरफ़ एक विचित्र दृष्टि से देखते हुए अपनी मूछें मरोड़ते हुए कहा। लिखोनिन ने उसको कनखियों से देखा। मगर सोलोवीव ने सादे स्वभाव से कहा :

'यही तरीका है। तुमने एक बड़ा और अच्छा काम शुरू किया है, लिखोनिन। रात को शाहज़ादे ने मुझे सब बताया। क्या हुआ ? जवानी इसी के लिए होती है—पवित्र मूर्खतायें करने के लिए। मुझे दो बोतल, ऐलेकजेन्ड्रा। मैं अपने आप बोतल खोल लूँगा—वरना इतना जोर करने से तुम्हारी कोई रग ही न फट जाय। आपकी अब नई ज़िन्दगी शुरू होती है, लियूबोच्का, अरे माफ़ कीजिये... लियूबोब...'

'निकोनीवना ! मगर आपको जैसा पसन्द हो कहो... लियूबा ही कहो।'

'अच्छा, हाँ, लियूबा। शाहज़ादा अल्लाहवर्दी !'

'याक्शी—ओल' निजारज़े ने उत्तर दिया और अपना शराब का गिलास उसके शराब के गिलास से टकराकर बजाया।

'मुझे तुम पर भी, लिखोनिन, सचमुच अभिमान है' सोलोवीव ने अपना शराब का गिलास नीचे रखते हुए और अपनी मूछें चाटते हुए कहा, 'मैं तुम्हारे आगे सिर नवाता हूँ। तुम्हीं इस प्रकार की सच्ची वीरता चुपचाप, सादा ढङ्ग पर, बिना कुछ शोरोगुल और बकवाद के कर सकते थे।'

'छोड़ो इन बातों को... इसमें कौन-सी बड़ी वीरता मैंने की है ?' लिखोनिन ने रुखा चेहरा बनाकर कहा।

‘यह भी ठीक ही है’ निजारज़े ने उसका समर्थन किया। ‘तुम मुझे सदा झिड़कते रहते हो कि मैं बड़ी बकवाद करता हूँ, मगर तुम खुद कितनी व्यर्थ की बकवाद करते हो।’

‘मैं बकवाद नहीं कर रहा हूँ!’ सोलोवीव ने उत्तर में कहा, ‘मुमकिन है मैं कुछ अतिशयोक्ति कर गया हूँ, मगर मैंने जो कुछ कहा है सच है ! खैर, अपनी इस पंचायत का सबसे बड़े सदस्य की हैसियत से, मैं लियूबा को अपनी पंचायत का पूरा सदस्य ऐलान करता हूँ।’ यह कहकर वह ज़ोर से हाथ हिलाता हुआ उठा और जोश में भरकर बोला :

‘आओ, आओ, आओ
इस घर की रानी आओ,
निर्भय आओ, निशङ्क आओ,
इस घर को लो अपनाओ !’

लिखोनिन को याद आया कि आज ऊषाकाल में उसने भी यही कविता ऐक्टर की तरह दुहराई थी जिससे उसकी आँखें शर्म से झुक गईं।

‘चलो काफ़ी व्यर्थ की बातें हो चुकीं। उठो अब चलें। लियूबा तुम भी अपने कपड़े पहिन लो।’

अध्याय चौदहवाँ

स्पैरोज़ नाम का रेस्टोराँ पास ही में दो सौ क़दम पर था। रास्ते में चलते हुए लियूबा ने आँख बचाकर लिखोनिन की बाँह पकड़कर उसको अपने पास घसीट लिया। इस प्रकार वह दोनों सोलीवीव और निजारज़े से, जो आगे चल रहे थे, कुछ पीछे पड़ गये।

‘तो तुम सचमुच ही मुझे अपना रहे हो, मेरे प्यारे वसील-वसीलिश ?’ लियूबा ने अपनी स्नेहपूर्ण काली-काली आँखों से उसकी तरफ़ देखते हुए पूछा, ‘तुम मुझसे मज़ाक नहीं कर रहे हो ?’

‘इसमें मज़ाक क्या हो सकता है, लियूबोच्का ! ऐसा मज़ाक मैं करूँ तो मुझसे नीच दूसरा कौन हो सकता है। मैं तुमसे फिर कहता हूँ कि मैं तुम्हारे लिए एक मित्र, भाई और बन्धु से भी अधिक हूँ। अब इस बात का अधिक ज़िक्क करना भी ठीक नहीं है और आज मुबह जो कुछ हुआ वह, तुम विश्वास रखो, फिर कभी न होगा। आज ही मैं तुम्हारे लिए एक दूसरा कमरा किराये पर ले लूँगा।’

लियूबा ने एक गहरी साँस ली। यह बात नहीं थी कि उसे लिखोनिन के पवित्र निश्चय से बुरा लगा हो गोकि वह उसके इस

निश्चय पर अधिक विश्वास नहीं करती थी, परन्तु उसकी समझ में यह बात नहीं आ रही थी कि एक आदमी का किसी स्त्री से सिवाय विषय-भोग के और नाता या सम्बन्ध ही क्या हो सकता है। इसके अलावा उसे पसन्द न की जानेवाली स्त्री के अनन्तकाल से चले आनेवाले असन्तोष का अनुभव भी हुआ जो कि अन्ना के यहाँ आपस की होड़ से खूब बढ़ाया जाता था मगर जो अब उसके मन में नहीं था। फिर भी उसका मन असन्तोष से कुढ़ा। न जाने क्यों उसे लिखोनिन की बातों पर पूरी तरह विश्वास नहीं हो रहा था और बिना किसी प्रयत्न के वह लिखोनिन की बातों में से बनावटी बातों को छाँट-छाँटकर सोच रही थी। सोलोवीव इस समय वैसी ही बातें कर रहा था जैसी कि अन्ना के यहाँ आनेवाले विद्यार्थी आम बैठक में सारी छोकरियों के साथ बैठकर, हँसी-मज़ाक करते हुए, किया करते थे, जो कि उसकी समझ में नहीं आया करती थीं यद्यपि अकेले कमरे में उसके साथ सभी आदमी एक-सी बातें किया करते थे। फिर भी लिखोनिन से कहीं अधिक लियूबा का मन सोलोवीव की बातों पर विश्वास करने को हो रहा था क्योंकि उसकी भूरी, चौड़ी और चमकती हुई आँखों से एक सादी सच्चाई टपकती थी।

स्पैरोज़ रेस्टोराँ में लिखोनिन अपनी गम्भीरता, कोमल स्वभाव और हिसाब-किताब में सफ़ाई के लिए मशहूर था। अस्तु वहाँ पहुँचते ही उसको बैठने के लिए एक अलग कमरा दे दिया गया जो कि किसी भी विद्यार्थी के लिए एक काफ़ी सम्मान की बात थी और ऐसा सम्मान बहुत थोड़े से विद्यार्थियों को ही नसीब होता था। इस रेस्टोराँ में दिन भर गैस का लैम्प जलता रहता था क्योंकि रोशनी अन्दर आने के लिए सिर्फ़ एक ही छोटी सी खिड़की थी जिसमें से बाहर सड़क पर चलनेवालों के सिर्फ़ जूते, छाते और छड़ियाँ ही दिखाई देते थे।

दूसरे कमरे में सिमानोवस्की नाम का एक और विद्यार्थी मिला जिसको भी इन लोगों ने अपने साथ ले लिया। 'इस तरह मेरी नुमायश करने से इसका क्या मतलब है?' लियूबा ने सोचा, 'ऐसा लगता है कि यह अपना दिखावा करना चाहता है।' अतएव मौक़ा मिलते ही उसने लिखोनिन के कान में कहा :

'इतने आदमी यहाँ क्यों हैं, मेरे प्यारे ? मुझे बड़ी शर्म लगती है। इतने आदमियों के सामने मुझे बातचीत करना भी कठिन होगा।'

'कुछ हर्ज नहीं है, कुछ हर्ज नहीं है, मेरी प्यारी लियूबोच्का', लिखोनिन ने द्वार के पास ठिठक कर जल्दी-जल्दी उसके कान में कहा, 'कुछ हर्ज नहीं है, मेरी बहिन। यह सब लोग अच्छे लोग हैं—अपने बन्धु हैं। यह तुम्हारी, हम दोनों की मदद करेंगे। इन लोगों की हँसी-मज़ाक़ और कभी-कभी बेवक़्फ़ी की बातों को परवाह न करो। इन लोगों के दिल सोने के हैं।'

'मगर मुझे बड़ा बुरा लगता है...बड़ी शर्म आती है। यह सब जानते हैं कि तुम मुझे कहाँ से लाये हो।'

'अच्छा तो, उससे क्या हुआ ! जानने दो उन्हें !' लिखोनिन ने जोश में भरते हुए कहा, 'अपने बीते की इतनी शर्म क्यों करती हो...चुपचाप उसे भूल जाओ ! साल-भर में तुम हरएक आदमी से आँखें ऊँची करके मिल सकोगी और कह सकोगी।

'गिरते हैं शसवार ही मैदाने जङ्ग में,
वह तिक़ क़्या गिरेंगे जो घुटनों के बल चलें।'

समझीं, लिबोच्का, छोड़ो इस शर्म को !'

सब लोग मेज़ पर बैठ गये और खाने की तश्तरियाँ आने लगीं, मगर सिमानोवस्की को छोड़ कर और सब कुछ परेशान-से लग रहे थे, और सिमानोवस्की ही कुछ इद तक उनकी परेशानी का कारण था। उसका मुँह मुड़ा हुआ सफ़ाचट, बाल बड़े-बड़े और आँखों पर नाक

पर चिपकनेवाला चश्मा था जिसकी काली रेशमी डोरी उसकी गरदन में पड़ी थी। उसका सिर पीछे की तरफ़ अकड़ा हुआ और होंठ सख्त और कोनों पर नीचे की तरफ़ मुड़े हुए थे जिनसे दूसरों के प्रति घृणा टपकती थी। उसके साथियों में कोई उसका दिली दोस्त नहीं था, मगर उसकी रायों और फैसलों को वे लोग काफ़ी इज्जत की नज़र से देखते थे। ऐसा क्यों था यह कहना कठिन है। मुमकिन है उसके आत्मविश्वास के दिखाने के कारण उसका ऐसा प्रभाव उन लोगों पर था अथवा दूसरों की अस्पष्ट इच्छाओं और विचारों को समझ कर उनको व्यक्त करने की उसकी योग्यता अथवा अपनी राय उचित मौकों पर ही प्रकट करने के कारण ऐसा था। हर समाज में इस तरह के काफ़ी लोग होते हैं। कुछ तो अपनी बहस से अपने साथियों को प्रभावित करते हैं, कुछ अपने दृढ़ और अटल विश्वासों से, कुछ अपने ज़ोर-ज़ोर से बोलने से, कुछ हर एक पर ठठा लगा-लगाकर, कुछ चुप रहकर, जिससे दूसरे उन्हें गहरा और अक्लमन्द समझने लगते हैं, कुछ अपने बातूनी पाण्डित्य से और कुछ अपने विरोधी की हर बात के प्रति घृणा दिखाकर। बहुत-से भयङ्कर शब्द 'वाहियात' का काफ़ी प्रयोग करके अपना काम पूरा करते हैं। किसी सीधे आदमी की सच्ची, स्नेहपूर्ण और ईमानदार बात को भी वह 'वाहियात' कहकर रद्द कर देते हैं और यदि वह उनसे पूछने की हिम्मत करता है कि जनाब इसको 'वाहियात' क्यों समझते हैं तो वे तुरन्त ही उसके सिर पर लट्ट-सा जड़ देते हैं 'वाहियात है इसलिए।' ऐसे लोग दुनिया में हर जगह काफ़ी होते हैं जो कि नम्र, शर्मीले, योग्यता से सङ्कोची और प्रायः बड़े दिमागों के सिर पर भी घण्टी लटकाने का प्रयत्न करते हैं। इसी किस्म के आदमियों में से एक सिमानोवस्की भी था।

मगर आधा खाना खत्म होते-होते सब खुलकर बातें करने लगे सिर्फ़ एक लियूबा केवल 'हाँ' या 'ना' में बोलती रही और उसने खाना

भी कुछ नहीं खाया। लिखोनिन, सोलोवीव और निजारज़े सबसे अधिक बातें कर रहे थे। लिखोनिन दृढ़ता से सुप्रबन्धक की तरह बोलता हुआ अच्छे और स्नेहपूर्ण शब्दों के पीछे कोई भीतरी वास्तविकता, जो उसे अखरती और परेशान-सी कर रही थी, छिपाने का प्रयत्न कर रहा था। सोलोवीव बच्चों की तरह खुशी से, ज़ोर-ज़ोर से हाथ चलाता हुआ मेज़ पर अपने हाथ पटक-पटककर बोल रहा था। निजारज़े चालाकी से, पूरे वाक्य खत्म न करता हुआ, इस तरह बोल रहा था मानो वह जानता तो था कि उसे क्या कहना चाहिये मगर कह नहीं रहा था, परन्तु छोकरी के विचित्र भाग्य में तीनों के तीनों बड़ी दिल-चस्पी ले रहे थे और अपनी-अपनी राय ज़ाहिर करते हुए वे, न जाने क्यों, फिर-फिरकर बार-बार सिमानोवस्की की तरफ देखते थे, मगर सिमानोवस्की खामोश था। वह अपना सिर उठाकर चुपचाप अपने चश्मे में से सिर्फ उनके मुँह की तरफ देखता था।

‘अच्छा, अच्छा, अच्छा,’ आखिरकार उसने मेज़ को अपनी उङ्गलियों से बजाते हुए कहा, ‘लिखोनिन ने बहुत अच्छा और बहादुरी का काम किया है। सोलोवीव और शाहज़ादा भी लिखोनिन की इस काम में मदद करने को तैयार हैं यह भी बहुत अच्छा है। मैं भी, जो कुछ मेरी शक्ति में है, करने को तैयार हूँ; मगर क्या यही बेहतर न होगा कि हम लोग अपनी इन मित्र को वह काम करने दें जो इन्हें स्वभाव से पसन्द हो? कहो, मेरी प्यारी मित्र,’ उसने लियूबा की तरफ मुड़कर पूछा, ‘तुम क्या काम जानती हो? क्या काम तुम कर सकती हो? कोई भी काम जो तुम्हें पसन्द हो और जो तुम कर सकती हो शुरू कर दो—सीने, बिनने, काढ़ने का या और कोई काम।’

‘मुझे कोई काम नहीं आता,’ लियूबा ने आंखें नीची करके, शर्म से लाल होकर, मेज़ के नीचे अपने हाथ मलते हुए कहा, ‘मेरी समझ में यह कुछ नहीं आता।’

‘हम लोगों ने बड़ी गड़बड़ की है’, लिखोनिन ने बीच में बोलते हुए कहा, ‘इनके सामने ही सारी बातें करके हम लोगों ने इन्हें सिटपिटा दिया है। देखो न, इनकी जबान भी नहीं खुल रही है। चलो लियूबा घर चलें। मैं तुम्हें वहाँ पहुँचाकर यहाँ फिर फौरन लौट आऊँगा। तब हम लोग बैठकर आगे का इन्तज़ाम सोचेंगे—तुम्हारे सामने नहीं। ठीक है न ?’

‘नहीं, मेरी चिन्ता न करो’, बहुत धीरे से लियूबा ने कहा, ‘जो तुम्हें पसन्द होगा मैं करने को तैयार हूँ, वसीलवसीलिश ; परन्तु मैं घर जाना नहीं चाहती।’

‘क्यों ?’

‘मुझे वहाँ अकेले अच्छा नहीं लगता। मैं बाहर सड़क पर पड़ी हुई बेंच पर बैठकर तुम्हारा इन्तज़ार करूँगी।’

‘अच्छा, अच्छा’ लिखोनिन को याद आई, ‘ऐलेक्जेन्ड्रा से यह बहुत डरती है।’ मैं उस खूसट को ठीक कर दूँगा ! अच्छा, लियूबा बाहर चलो।’

लियूबा ने हिचकते हुए सबसे हाथ मिलाया और लिखोनिन के साथ बाहर चली गई।

कुछ मिनट के बाद लिखोनिन लौटकर आया और अपनी जगह पर बैठ गया। उसको लगा कि उसके बारे में वे लोग उसके पीछे कुछ कह रहे थे। अस्तु, उसने सिटपिटाते हुए अपने तमाम साथियों के चेहरों की तरफ देखा। फिर मेज़ पर अपने हाथ रखकर वह बोला :

‘दोस्तो, मैं जानता हूँ कि आप सब लोग मेरे अच्छे गहरे दोस्त हैं,’ यह कहकर उसने सिमानोवस्की की तरफ एक तिरछी नज़र डाली, ‘और आप सहायता करने में विश्वास रखते हैं। मेरी आप से प्रार्थना है कि आप इस काम में मेरी मदद कीजिये। यह काम मैंने जल्दी में कर डाला है—यह मैं जरूर मानूँगा, मगर जो कुछ भी

मैंने किया है अच्छे भावों और विचारों से ही प्रेरित होकर ईमानदारी से किया है ।’

‘और ईमानदारी ही मुख्य चीज़ है,’ सोलोवीव ने कहा ।

‘मुझे इस बात की ज़रा भी चिन्ता नहीं है कि मेरे परिचित अथवा दूसरे लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे । मैं इस छोकरी को बचाने—माफ कीजिये इस शब्द के लिए—बचाने नहीं मदद करने और जिन्दगी में आगे बढ़ाने के अपने इरादे से मुँह मोड़ने को हरगिज तैयार नहीं हूँ । मैं उसके लिए एक छोटा-सा सस्ता कमरा किराये पर ले सकता हूँ और शुरू में अपने पास से उमके खाने-पीने का प्रबन्ध भी कर सकता हूँ । मगर बाद में आगे चलकर क्या होगा ? उसका खर्च चलाने की अधिक फ़िक्र मुझे नहीं है । उसका तो मैं किसी न किसी तरह प्रबन्ध कर ही लूँगा, मगर बेकार बैठे-बैठे खाने-पीने में वह आलसी, लापर-वाह और निकम्मी हो जायगी और उसका जो नतीजा होगा वह आप सब जानते ही हैं । अस्तु हमें उसके लिए कोई काम सोचना है । इसके लिए हम सबको अपना दिमाग लगाकर कोई रास्ता निकालना है । दोस्तो, सोचो और सोचकर कोई अच्छी सलाह इस मामले में मुझे दो ।’

‘हम लोगों को देखना यह है कि वह क्या काम कर सकती है’ सिमानोवस्की ने कहा, ‘क्योंकि चकले में जाने से पहिले वह कोई न कोई काम ज़रूर करती होगी ।’

लिखोनिन ने हताश होकर हाथ फैलाते हुए कहा :

‘वह कोई काम नहीं जानती । गाँव की छोकरियों की तरह थोड़ा-बहुत सी सकती है । मगर उससे काम न चलेगा । वह मुश्किल से पन्द्रह वर्ष की थी तभी किसी सरकारी नौकर ने उसे कुमार्ग पर रख दिया । अस्तु वह कमरा झाड़ने, बर्तन धोने और दाल-भात बनाने के अतिरिक्त कुछ नहीं जानती है ।’

‘यह मुश्किल की बात है,’ सिमानोवस्की ने कहा ।

‘इसके सिवाय उसे पढ़ना लिखना भी कुछ नहीं आता ।’

‘पढ़ना-लिखना ज़रूरी भी नहीं है !’ सोलोवीव ने उत्साह से छोकरी का पक्ष लेते हुए कहा, ‘पढ़ी-लिखी छोकरी होती और उससे भी खतरनाक कहीं अधपढ़ी छोकरी होती तो हमें उसका जो कुछ प्रबन्ध हम लोग सोच रहे हैं, करना भी मुश्किल हो जाता । गनीमत है कि वह बेपढ़ी-लिखी भोली छोकरी है ।’

‘ही...ही...ही !’ निजारज़े मजाक में हिनहिनाया । सोलोवीव मजाक के लिए अब इस मामले में तैयार नहीं था । अस्तु वह क्रोध से लाल होकर निजारज़े पर दूटा, ‘देखो, शाहजादे ! पवित्र से पवित्र विचार और अच्छा से अच्छा काम इस तरह घृणित और गन्दा बनाया जा सकता है । यह कोई होशियारी या काबिलियत की बात नहीं है । अगर हम लोग जो कुछ करने जा रहे हैं, उसे तुम इतना निकम्मा काम समझते हो, तो वह है तुम्हारा रास्ता’, उसने द्वार की तरफ इशारा करते हुए कहा, ‘और ईश्वर तुम्हारी मदद करे ! यहाँ से तुम चले जाओ ।’

हाँ, मगर तुम खुद भी तो अभी कमरे में...’ शाहजादे ने सिट-पिटाकर कहा ।

‘हाँ, मैंने भी,’ सोलोवीव ने ठण्डा होते हुए कहा, ‘बेवकूफी की बात कही । मुझे उसका अफसोस है । मगर मैं अब मानता हूँ कि लिखोनिन बहुत अच्छा और भला आदमी है और मुझसे जो कुछ बन सकेगा मैं उसके लिए करने को तैयार हूँ । मैं फिर कहता हूँ कि पढ़ना लिखना कोई ज़रूरी चीज नहीं है वह खेलते-खेलते सीखा जा सकता है । ऐसी छोकरी के लिए पढ़ना, लिखना, गिनना, और खासकर स्कूल के बाहर अपने आप सीखना इतना ही आसान है जितना कि बादाम को काटकर दाँत से दो टुकड़े करना और जहाँ

तक कोई व्यवसाय करके अपनी गुजर चलाने का प्रश्न है, सो ऐसे व्यवसाय भी सैकड़ों ही हैं जिनको दो हफ्तों में सीखा जा सकता है।’

‘मसलन ?’ शाहजादे ने पूछा।

‘मसलन...मसलन...मसलन नकली कागज या कपड़े के फूल बनाने का व्यवसाय, या उससे भी बहतर किसी फूलों की दूकान पर नौकरी कर लेने का काम बड़ा सुन्दर, अच्छा और साफ़ काम है।’

‘उसके लिए शौक की ज़रूरत है,’ सिमानोवस्की ने लापरवाही से कहा।

‘योग्यता की तरह शौक भी पैदायशी नहीं होते। वरना शौक सिर्फ़ बड़े घरानों में पैदा होनेवालों को ही होते और कलाकार कलाकारों के यहाँ और गवैये गवैयों के यहाँ ही जन्म लेते, मगर ऐसा होता नहीं है। खैर, मैं इस मामले में बहस नहीं करना चाहता। फूलों की दूकान पर न सही, कहीं और नौकरी मिल सकती है। मैंने हाल ही में एक दूकान में खिड़की के पास एक लड़की को बैठे पाँव से एक मशीन चलाकर कोई काम करते देखा था।’

‘वाह ! फिर मशीन की बात की !’ शाहजादे ने मुसकराकर लिखो-निन की तरफ़ देखते हुए कहा।

‘चुप रहो निजारज़े !’ लिखोनिन ने धीरे से, मगर सख्ती से उससे कहा, ‘तुम्हें इस तरह बात करते हुए शर्म भी नहीं आती !’

‘खर दिमाग़ !’ सोलोवीव ने उससे कहा और अपनी बात कहने लगा :

‘वह मशीन आगे-पीछे चलती थी और उसके ऊपर एक चौखटे पर पतली किरमिच थी। मेरी समझ में नहीं आया कि वह मशीन कैसे चलाई जाती थी। मगर वह छोकरी बैठी-बैठी एक खास चीज़ को उस परदे पर फिरा रही थी और उस पर तरह-तरह के रङ्ग-बिरंगे बेलबूटे और चित्र बनते जा रहे थे। मील और उसमें उगे हुए सफेद

फूलों और हरे पत्तों के कमल और तालाब में आमने-सामने तैरते हुए दो हंस और पीछे एक बाग का दृश्य ; यह सब एक सुन्दर सच्चे चित्र की तरह बनता जा रहा था । मुझे यह काम इतना अच्छा लगा कि मैंने जाकर उस मशीन की कीमत मालूम की जो कि मामूली सीने की मशीनों से कुछ ही अधिक थी । यह मशीन किशतों पर बिकती है और जिसको थोड़ा-सा भी सिलाई का काम आता है इस मशीन पर एक घण्टे में काम सीख सकता है । तरह-तरह के काम के नमूने भी मिलते हैं और खास बात यह है कि इस मशीन पर तैयार होनेवाला माल बड़ी आसानी से बाज़ार में बिक जाता है और काम करनेवाले को अच्छा पैसा मिल जाता है ।’

‘हाँ, यह भी एक व्यवसाय हो सकता है,’ लिखोनिन ने उससे सहमत होते हुए विचार-पूर्वक अपनी दाढ़ी खुजलाई, ‘मगर मैं जो करने की सोच रहा था वह यह है । मैं सोचता था कि इस छोकरी से शुरू में एक ऐसा छोटा-सा होटल खुलवा दिया जाय जहाँ खाना अच्छा, सस्ता और ज़ायकेदार मिले क्योंकि विद्यार्थियों को इस बात की चिन्ता नहीं होती कि वे कहाँ और क्या खाते हैं । तमाम विद्यार्थियों के होटल खचाखच भरे रहते हैं । अस्तु हम लोग शायद अपने तमाम मित्रों और साथियों को इस होटल में खींच ला सकते हैं ।’

‘यह ठीक है,’ शाहज़ादे ने कहा, ‘मगर यह काम चलेगा नहीं क्योंकि उधार खिलाना होगा और यह तो तुम जानते ही हो कि हम लोग उधार का रुपया आसानी से देना नहीं जानते हैं । एक बड़ा तजरबेकार खुराट आदमी ऐसे काम के लिए चाहिये और स्त्री हो तो उसके भाले के से दाँत होने चाहिये और फिर भी उसकी पीठ पर उसकी मदद के लिए हमेशा एक मर्द मौजूद रहना चाहिये । लिखोनिन तो यह कर नहीं सकता कि वहाँ खड़ा-खड़ा यह देखे कि कोई खा-पीकर बिना पैसा दिये चल नहीं देता ।’

लिखोनिन ने उसकी तरफ़ घूरकर देखा, परन्तु दाँत पीसता हुआ चुप रह गया।

सिमानोवस्की ने अपनी तुली हुई और लाजवाब आवाज़ में अपने चश्मे के शीशों को छूते हुए कहा :

‘आप लोगों के इरादे तो बेशक बहुत अच्छे हैं, मगर आपको इस मामले के एक पहलू पर और ग़ौर कर लेना चाहिये। होटल खोलने के लिए अथवा और कोई व्यापार शुरू करने के लिए रुपये की ज़रूरत होती है जो किसी को गाँठ से निकालना पड़ेगा। खैर, जैसा लिखोनिन ने कहा उसका इन्तज़ाम किया जा सकता है। मगर इस तरह सब चीज़ आराम से इकट्ठी हो जाने पर जो काम वह शुरू करेंगे उसमें कुछ दिन बाद उसके आरामतलब और लापरवाह हो जाने की सम्भावना है जिससे वह व्यापार ही बाद में ठण्डा हो जा सकता है। बच्चे को भी चलना पचास बार गिरने के बाद ही आता है। अस्तु, तुम सचमुच इस छोकरी की मदद करना चाहते हो तो उसे मेहनत के रास्ते पर रखो, आरामतलबी के रास्ते पर नहीं। यह ज़रूर है कि वह मार्ग कठिन होगा—मेहनत करनी पड़ेगी और तंगी में रहना होगा, मगर उसको पार कर गई तो हमेशा के लिए वह सुधर भी जायगी।’

‘तो फिर आप क्या चाहते हैं—उससे बर्तन, माजने-धोने का काम करवाया जाय?’ सोलोवीव ने अविश्वास से पूछा।

‘हाँ, क्यों नहीं?’ सोलोवीव ने उत्तर दिया, ‘बर्तन धोने, कपड़े धोने या खाने-पकाने इत्यादि का कोई भी काम उसे दिया जा सकता है। किसी भी क्रिस्म की मेहनत करने से आदमी की तरक्की ही होती है।’

लिखोनिन ने सिर हिलाया।

‘बड़ी बुद्धिमानी की बातें करते हो सिमानोवस्की। बर्तन धोने, खाना पकाने और खिदमतगारी करने का काम पहिले तो मुझे शक है कि

वह ठीक तरह से कर भी सकेगी या नहीं ; दूसरे वह खिदमतगारी कुछ घरों में कर चुकी है और घर के मालिकों की नज़रों का शिकार बनकर मज़ा चख चुकी है । क्या तुम अभी तक यह नहीं जानते कि नब्बे फीसदी वेश्यायें खिदमतगारनियों में से ही बनती हैं ? अस्तु खिदमतगारनी बनकर जैसे ही उसकी पहली बेइज्जती हुई अथवा उसपर डाँट पड़ी वैसे ही वह फौरन कोई और अधिक खराब काम न कर बैठी तो कम से कम जहाँ से मैं उसे ले आया हूँ वहीं लौट जायगी क्योंकि वहाँ की ज़िन्दगी उसकी देखी हुई है और इतनी भयङ्कर उसे न लगेगी, बल्कि शायद मालिक द्वारा बेइज्जती सहने से बेहतर होगी और इन सबके अलावा क्या यह मंगे योग्य है—मेरा मतलब है हम सब के योग्य है—कि हम इतनी मेहनत करके एक प्राणी को एक नर्क से निकालें और उसे दूसरे नर्क में ढकेल दें ?

‘ठीक कहते हो,’ सोलोवीव ने कहा ।

‘तो फिर जैमी तुम्हारी खुशी’ सिमानोवस्की ने हिकारत से कहा ।

‘मगर जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है,’ शाहजादे ने कहा, ‘मैं एक मित्र और जिज्ञासु की हैसियत से इस प्रयोग में तुम्हारे साथ रहने के लिए और तुम्हारी हर तरह से मदद करने के लिए तैयार हूँ । मगर मैंने आज सुबह ही तुम्हें चेतावनी दे दी थी कि इस प्रकार के आज तक हमारी जानकारी में जितने प्रयोग किये गये वह सब असफल हुए हैं और जो हमारी जानकारी में नहीं हुए और जिनके बारे में हम सुना ही सुना करते हैं उनका विश्वास करना ठीक नहीं है । मगर तुमने यह काम उठा लिया है तो इसे पूरा करो, हम तुम्हारी मदद के लिए तैयार हैं ।’

लिखोनिन ने हाथ पटककर जोर से कहा :

‘नहीं ! सिमानोवस्की का कहना भी एक हद तक ठीक है ! किसी शख्स को लकड़ी का सहारा दे-देकर चलाना भी खतरनाक ही होता है । मगर मुझे और कोई रास्ता नजर नहीं आता । शुरू में मैं उसके लिए

एक कमरे और खाने-पीने का प्रबन्ध कर दूँगा और जरूरत की चीजें ले दूँगा। फिर जो होगा सो देखा जायगा ! हम लोगों को उसका दिमाग थोड़ा शिक्षित बनाने का प्रयत्न करना चाहिये—उसका हृदय और आत्मा सुन्दर है इसका मुझे पूरा विश्वास है। मेरे पास इसका कोई सबूत नहीं है। फिर भी मुझे लगता है कि मैं ठीक हूँ और मेरा विश्वास सच्चा है। निजारज़े ! मज़ाक बन्द करो !’ उसने एकाएक जोर से चिल्लाकर कहा और उसका चेहरा पीला पड़ गया, ‘मैंने कई बार तुम्हारी बेवकूफी के मज़ाक सुन-सुनकर दरगुज़र कर दिये हैं। मैं अभी तक तुम्हें दिल का अच्छा और शरीफ समझता रहा हूँ, मगर अब तुमने फिर कोई बेहूदा मज़ाक इस सम्बन्ध में किया तो मैं हमेशा के लिए अपनी राय तुम्हारे बारे में बदल दूँगा—समझे...हमेशा के लिए।’

‘नहीं जी। मेरा कोई मतलब नहीं था। सच ! ऐसी बातें क्यों करते हो ? तुम्हें मेरी हँसी-मज़ाक पसन्द नहीं है मैं चुप रहूँगा। लाओ अपना हाथ मुझे दो, लिखोनिन !’

‘खैर, ठीक है, मुझसे चिपटो मत ! बालकों की तरह व्यवहार मत करो ! बिल्कुल मेढ़ा मत बन जाओ ! हाँ, तो दोस्तों मैं कहना चाहता था कि अगर हम लोगों को कोई ऐसा काम मिल जाय जो सिमानोवस्की की अक्लमन्द राय के अनुसार हो तो मैं अपना तरीका उसे शिक्षित करने का जारी रखूँगा, मैं उसे कुछ लिखा-पढ़ा सकूँगा—उसे अच्छे थियेटर दिखाने, आम व्याख्यान सुनने, अजायबघर दिखाने ले जाऊँगा ; फिर उसको किताबें पढ़कर सुनाऊँगा और उसको अच्छा-अच्छा संगीत भी जो उसकी समझ में आ सके, सुनवाऊँगा। हाँ, यह जरूर है कि यह सब मैं अकेला ही न कर सकूँगा। मैं उम्मीद करता हूँ कि इन सब में तुम लोग मेरी मदद करोगे और आगे ईश्वर मालिक है !’

‘हाँ, खैर,’ सिमानोवस्की ने कहा, ‘यह काम हमारे लिए नया

होगा। न मालूम हम उसमें कैसे साबित होंगे। तुम लिखोनिन शायद एक अच्छी आत्मा के गुरु हो जाओ। मुझसे जो कुछ हो सकेगा मैं करने को तैयार हूँ।’

‘और मैं भी तैयार हूँ!’ ‘और मैं भी तैयार हूँ!’ दूसरे दोनो ने भी उसका समर्थन किया और फौरन वहीं पर चारों विद्यार्थियों ने लियूवा को शिक्षित करने का एक बड़ा लम्बा-चौड़ा प्रोग्राम बना लिया।

सोलोवीव ने उसे व्याकरण और लिखना सिखाने का जिम्मा अपने ऊपर लिया और यह तय किया कि वह थके और ऊबे नहीं इस-लिए उसे अच्छे-अच्छे ऐसे रूसी और विदेशी उपन्यास और किस्से-कहानियाँ पढ़कर सुनाये जायँ जो वह आसानी से समझ सके। लिखो-निन ने उसे हिसाब, इतिहास और भूगोल पढ़ाने का जिम्मा लिया।

मगर शाहजादे ने सीधे स्वभाव से और अबकी बार बिल्कुल मज़ाक न करते हुए कहा :

‘मुझे तो दोस्तो कुछ ऐसा आता-जाता नहीं जो मैं उसे सिखा सकूँ और जो आता भी है वह भी बहुत कम और बुरा आता है। अस्तु, मैं अपने प्रान्त के महाकवि रूस्तवली की कवितायें उसे पढ़कर सुनाया करूँगा और हरएक लाइन का मतलब उस समझाऊँगा। मुझे पढ़ाना-लिखाना किसी को आता नहीं है। एक बार मैंने शिक्षक का काम करने की कोशिश की थी। मगर मेरे दो सबक देखकर ही मुझे वहाँ से धता बता दी गई। मगर गितार, मैन्डोलीन और बैगपाइप बाजे बजाना मुझसे अच्छा कोई नहीं सिखा सकता!’

निजारज़े बिल्कुल गम्भीरता से कह रहा था जिससे लिखोनिन और सोलोवीव उस पर हँसने लगे। मगर सबको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि सिमानोवस्की ने उसका समर्थन किया। वह एकाएक बोला :

‘शाहज़ादा बड़ी अक्लमन्दी की बात कह रहा है। कोई भी बाजा बजाने की शिक्षा प्राप्त करने से आत्मा और बुद्धि शिक्षित होती है और

ज़िन्दगी में बड़ी मदद मिलती है। खैर, मैं उसे मार्क का ग्रन्थ कैपीटल और मनुष्य-समाज की उन्नति का इतिहास पढ़कर सुनाऊँगा और इसके अलावा भौतिक-शास्त्र, रसायन, सृष्टि-विज्ञान और सम्पत्ति-शास्त्र सिखाऊँगा।’

सिमानोवस्की हमेशा की तरह गम्भीरता और दृढ़ता से न बोलता होता तो शेष तीनों विद्यार्थी उस पर खिलखिलाकर हँस पड़े होते, परन्तु चूँकि वह बड़ी गम्भीरता से बोल रहा था, वे केवल आँखें निकालकर उसकी तरफ़ घूरने लगे।

‘हाँ, हाँ,’ सिमानोवस्की बोला, ‘मैं उसके सामने बहुत से ऐसे विज्ञान के प्रयोग करके दिखाऊँगा जो आसानी से घर पर किये जा सकते हैं और जिन्हें देखकर बड़ी तबियत खुश होती है और बहुत-सी गलतफहमियाँ दूर हो जाती हैं। साथ-साथ मैं उसे दुनिया कैसे बनी है और तत्व क्या चीज़ हैं, यह भी समझा दूँगा। जहाँ तक मार्क्स का सम्बन्ध है, याद रखिये बड़े-बड़े ग्रन्थ साधारण आदमियों की समझ में आसानी से आ सकते हैं बशर्ते कि वे ठीक तरह पर समझाये जायँ। सारे महान विचार सादा होते हैं।’

लिखोनिन ने बाहर निकलकर लियूबा को निश्चित स्थान पर— सड़क के किनारे एक बेझ पर बैठा पाया। वह उसके साथ घर को बड़ी अनिच्छा-पूर्वक गई। जैसा लिखोनिन ने सोचा था बड़बड़ानेवाली ऐलेकजेन्ड्रा से मिलना उसे असह्य था क्योंकि वह बहुत दिनों से रोज़मर्रा के जीवन की आदी नहीं रही थी जिसमें कठोरता और तरह-तरह की बदमगजियों का हर रोज़ सामना करना होता है, दूसरे/इससे भी वह बड़ी परेशान थी कि लिखोनिन किसी से उसका भूत जीवन छिपाना नहीं चाहता था। मगर चूँकि अन्ना के घर में उसे अपना व्यक्तित्व खोकर, जो भी उसे ले जाय उसी के साथ जाने की आदत पड़ चुकी थी, उसने लिखोनिन से कुछ न कहा और चुपचाप उसके साथ चली गई।

चालाक ऐलेकजेन्ड्रा इस बीच में दौड़कर मकानों के सुपरिन्टेन्डेन्ट को खबर कर आई थी कि लिखोनिन ने एक छोकरी को लाकर अपने कमरे में रखा और रात उसके साथ बिताई और वह छोकरी कौन है सो वह कुछ नहीं जानती। लिखोनिन कहता है कि वह उसकी चचेरी बहिन की तरह है। मगर उसने उसका पासपोर्ट नहीं दिखाया। सुपरिन्टेन्डेन्ट को समझाना बड़ा मुश्किल हो गया क्योंकि वह बड़ा उजड़ु और भोड़ा आदमी था जो मकान में रहनेवालों के साथ ऐसे व्यवहार किया करता था जैसा कि कोई किसी मुल्क को फतह करने-वाला उस मुल्क के निवासियों से करता है। विद्यार्थियों से ज़रूर वह थोड़ा डरता था क्योंकि वे कभी-कभी उससे भिड़ जाते थे। लिखोनिन उसको फौरन उसी वक्त लियूबा के लिए दूसरा कमरा किराये पर लेकर ही सन्तुष्ट कर सका। यह कमरा लिखोनिन के कमरे के चार पाँच कमरों के बाद ही छप्पर की तरह टेढ़ी और नीची छत के नीचे था जिससे वह पिरामिड की तरह दीखता था। उसमें केवल एक खिड़की थी।

‘फिर भी मिस्टर लिखोनिन कल आप मुझे इनका पासपोर्ट ज़रूर दिखा दें,’ सुपरिन्टेन्डेन्ट ने जाते समय जोर देकर कहा, चूँकि आप भले और मेहनती आदमी हैं और हमारी आपकी बहुत दिनों से जान-पहिचान है और आप अपना किराया भी हमेशा वक्त पर अदा कर देते हैं, मैं आज का समय आपको देता हूँ। आप जानते ही हैं आजकल कैसा खराब वक्त है। मेरी किसी ने शिकायत करदी तो न सिर्फ मेरी नौकरी ही चली जायगी बल्कि शायद मैं इस शहर से भी बाहर कर दिया जाऊँ। आजकल बड़ी सख्ती हो रही है।’

शाम को लिखोनिन लियूबा के साथ बाग़ में घूमता रहा, क्लब में उसे गाना सुनाने ले गया और अँधेरा होने के बाद जल्द ही घर लौट आया। लियूबा को उसके कमरे के द्वार तक वह पहुँचाने गया और

फौरन पिता की भाँति स्नेह से उसका माथा चूमकर उससे विदा लेकर चला आया। मगर उसको कपड़े उतारकर पलँग पर लेटकर किताब पढ़ते हुए दस मिनट भी न हुए होंगे कि लियूबा ने विल्ली की तरह पहिले तो बाहर से उसका द्वार खुरचा और फिर यकायक अन्दर घुस आई।

‘प्यारे, मेरे प्यारे ! ज़रा-सी तुम्हें तकलीफ़ देने आई हूँ—माफ़ करना। तुम्हारे पास सुई-डोरा तो नहीं है ? मुझपर गुस्सा न होना—मैं अभी फौरन ही चली जाऊँगी।’

‘लियूबा ! कृपया जल्दी नहीं, तुरन्त, इसी क्षण, यहाँ से चली जाओ। मेरी तुमसे यह आखिरी प्रार्थना है !’

‘मेरे प्यारे, मेरे प्यारे,’ लियूबा ने हँसी और रहम से प्रार्थना करते हुए कहा, ‘तुम मुझे हमेशा इतना झिड़कते क्यों हो ?’ और यह कहकर उसने मोमबत्ती फूँककर बुझा दी और अँधेरे में उससे चिपटकर हँसने और रोने लगी !

‘नहीं, लियूबा, यह नहीं होगा। इस तरह नहीं चल सकता।’ लिखोनिन दस मिनट बाद द्वार पर कम्बल लपेटे खड़ा कह रहा था, ‘कल ही तुम्हारे लिए मैं किमी दूसरे घर में कमरा लूँगा। देखो, यह रोज़ नहीं होना चाहिये ! खुदा हाफिज अब जाओ ! मगर मुझसे वायदा करती जाओ कि हम दोनों का सम्बन्ध केवल दोस्ती का रहेगा !’

‘अच्छा प्यारे, मैं वायदा करती हूँ, मैं वायदा करती हूँ, मैं वायदा करती हूँ !’ उसने मुसकराते हुये कहा और पहिले उसके होठों को और फिर हाथ को स्नेह से चूम लिया।

आखिर में लियूबा ने जो किया वह बिल्कुल स्वाभाविक था। आज तक उसने कभी किसी मर्द का गिरजे के पादरी को छोड़कर हाथ नहीं चूमा था। शायद वह इस तरह लिखोनिन के प्रति, अपनी कृतज्ञता दिखाना चाहती थी अथवा उसके सामने उसी तरह मुकना चाहती थी जैसे किसी बड़े व्यक्ति के आगे।

अध्याय पन्द्रहवाँ

रूस के पढ़े-लिखे लोगों में से—बहुत से लोगों का कहना है—काफ़ी संख्या पुरानी रूसी सभ्यता के ऐसे सच्चे उपासकों की होती है जो बहादुरी से, माथे पर एक शिकन तक न लाकर मौत का सामना कर लेते हैं, जो अपने विचारों के लिए कठिन से कठिन यातनायें सह लेते हैं, मगर जो एक दर्बान या धोबिन की डाँट सुनकर घबरा जाते हैं और पुलिसवालों के पास या थाने में जाते काँपने लगते हैं। बिल्कुल इसी तरह का आदमी लिखोनिन भी था। दूसरे दिन—पिछले दिन छुट्टी होने और देर हो जाने के कारण वह लियूबा का पासपोर्ट न ला सका था—वह बहुत सवेरे उठा और खयाल आते ही कि आज उसे लियूबा का पासपोर्ट लाना है, उसके मन की वही दशा होने लगी जो कि जब वह स्कूल में पढ़ता था तब उसकी यह जानकारी कि वह फेल अवश्य हो जायगा, इम्तहान में जाते हुए हुई थी। उसका सिर दुख रहा था और हाथ-पाँव काम नहीं देते थे। सवेरे से ही धीरे-धीरे मेंह भी बरस रहा था जिससे सड़क पर गन्दगी हो रही थी। जब कोई बुरी बात होने को होती

है तब हमेशा यह मनहूस मेंह भी बरस उठता है,' लिखोनिन ने धीरे-धीरे कपड़े पहिनते हुए सोचा ।*

कटरा लिखोनिन के रहने की जगह से बहुत दूर नहीं था । मुश्किल से दो तिहाई मील होगा । आम तौर पर वह वहाँ अक्सर जाया करता था । मगर दिन में वहाँ जाने का मौका उसको आज तक कभी नहीं हुआ था । रास्ते में जाते हुए उसे ऐसा लगा कि हरएक आदमी जो उसे रास्ते में मिला, हरएक गाड़ीवाला और पुलिसवाला, उसकी तरफ आश्चर्य और घृणा से, उसके वहाँ, जाने का आशय समझकर देख रहा था । जैसा कि हमेशा जिस दिन सवेरे ही से बादल घिर आते थे और मेंह बरसता था—लगता था, आज भी जो भी उसे रास्ते में मिला उसका चेहरा उसे पीला, कुरूप और भोंड़ा लगा । बार-बार वह सोचता कि अन्ना के यहाँ और थाने में पहुँचकर वह क्या कहेगा और हर बार वह कोई न कोई नई बात मन में दोहराता । फिर अपने ऊपर क्रोध करता हुआ वह मन ही मन कहता :

‘आह, पहिले मे सोचने की क्या जरूरत है ? मौके पर जो ठीक लगेगा कहूँगा...’

मगर फिर उसके दिमाग में कल्पित बातचीत शुरू हो जाती ।

‘तुम्हें उस छोकरी को उसकी इच्छा के विरुद्ध रोक रखने का क्या अधिकार है ?’

‘अच्छा, तो उसको यहाँ से जाने का अपने आप नोटिस देने दो । तुम बीच में क्यों पड़ते हो ?’

‘मैं उसके कहने पर ही उसकी तरफ से कहने आया हूँ ।’

‘इसका तुम्हारे पास क्या सबूत है ?’...और फिर वह इस प्रकार के विचार अपने मन में आने से रोक देता ।

चलते-चलते शहर का मैदान आ गया जिममें गायें चरती हुई

* भार्गवों से वैभी समता है ।

फिर रही थीं। इस मैदान के किनारे-किनारे तार के साथ-साथ चलने के लिए एक चौड़ी पगडण्डी थी और जगह-जगह पर नालियाँ और छोटे-छोटे चश्मों के ऊपर हिलती हुई पुलियायें बनी थीं। मैदान पार करके वह कटरे में घुसा। अन्ना के घर की सारी खिड़कियों के द्वार बन्द थे। द्वार के बीच में दिल की शकल का एक-एक झरोखा बना था। कटरे के दूसरे तमाम मकान भी बन्द और चुप थे—जैसे कि महामारी के बाद किसी जगह शान्ति छा जाती है। धड़कते हुए दिल से लिखोनिन ने अन्ना के द्वार की घण्टी बजाई।

एक नौकरानी, नङ्गे पायों, लहंगे की लाँग लगाये हुए हाथ में एक भोगा चीथड़ा पकड़े और मुँह पर मिट्टी पोते, घण्टी के उत्तर में निकली। वह मकान के फर्श धो रही थी।

‘मैं जेनेका से मिलना चाहता हूँ,’ लिखोनिन ने झिझकते हुए उससे कहा।

‘श्रीमती जेनी एक मेहमान के साथ हैं। वे अभी तक सोकर नहीं उठे हैं।’

‘अच्छा, तो टमारा को बुला दो।’

नौकरानी ने उसकी तरफ अविश्वास से देखा।

‘श्रीमती टमारा...मैं कह नहीं सकती...शायद वह भी किसी मेहमान के साथ हैं। मगर आप चाहते क्या हैं—मेहमान की तरह उनसे मिलना चाहते हैं या क्या?’

‘हाँ...ऐसा ही कुछ काम है?’

‘मैं कह नहीं सकती कि वह खाली हैं या नहीं। अभी देखकर आती हूँ। ज़रा देर ठहरो।’

वह लिखोनिन को आधी-अँधेरी बैठक में छोड़कर चली गई। द्वारों के बीच के झरोखों में से अन्दर आनेवाले धूल के नीले स्तम्भ चारों तरफ की अँधियारी को चीर रहे थे। धुँधली रोशनी में कमरे का रङ्गीन

फर्नीचर और दीवार पर लगी हुई तस्वीरें भयंकर लग रही थीं। कल की तम्बाकू, नमी और खटास की और उस प्रकार की बू कमरों से आ रही थी जैसी कि आमतौर पर खाली पड़े रहनेवाले स्थानों, थियेटरों और हॉलों इत्यादि से निकला करती है। दूर से खटर-खटर शहर में चलनेवाली छकड़ा गाड़ी की कहीं से आवाज़ आ रही थी। दीवार के पीछे से टँगी हुई घड़ी की सुस्त टिकटिक-टिकटिक की आवाज़ सुनाई दे रही थी। लिखोनिन एक विचित्र आवेश से बैठक में इधर से उधर और उधर से इधर टहलता हुआ अपने काँपते हुए हाथों को बराबर मल रहा था और न जाने क्यों इस प्रकार झुका जा रहा था मानो उसे ठण्ड लग रही हो।

‘यह नाटक मैंने शुरू न किया होता तो अच्छा होता,’ उसने मन-ही-मन चिढ़कर सोचा, ‘इसका तो ज़िफ़ ही अब फ़िज़ूल है कि यूनी-वर्सिटी भर में इस समय मेरी चर्चा हो रही है। मुझे शैतान ने उकसा दिया ! कल तक भी, जब वह लौट जाने को तैयार थी, मेरे लिए आसानी थी। मैंने उसको वापिस जाने के लिए गाड़ी का भाड़ा दे दिया होता तो अभी तक सब ठीक हो गया होता। वह यहाँ लौट आई होती और मैं इस भ्रम से मुक्त हो गया होता। यह मुसीबत और परेशानी मुझे न देखनी होती। अब इस आफ़त से छुटकारा पाना मुश्किल है और कल और भी मुश्किल होगा और परसों उससे भी अधिक मुश्किल हो जायगा। किसी से एक बेवकूफी हो तो उसे फौरन ही ठीक कर लेना चाहिये वरना एक बेवकूफी के लिए फिर दो बेवकूफ़ियाँ करनी पड़ती हैं और दो के बाद फिर बीस। अभी भी शायद बहुत देर नहीं हुई है। शायद वह भी दूसरी बेश्याओं की तरह ही मूर्खा, अज्ञानी और पगली है। वह पशुओं की तरह भूसा खिलाकर रखने लायक और पलंग पर सोने लायक ही लगती है ! हे भगवान !’ लिखोनिन ने अपना सिर दोनों हाथों में दबाकर आँखें मूँद लीं। ‘मैंने क्यों

अपने आपको वैसा करने से नहीं रोका ?' वह मन ही मन बोला, 'दो बार मैं वैसा कर चुका हूँ और आगे भी शायद यह ऐसा ही चलता रहे...'

मगर इन विचारों के साथ-साथ दूसरे विचार भी, जो कि इन विचारों के बिल्कुल विरुद्ध थे, उसके मन में आ रहे थे :

'मगर मैं मर्द हूँ । अपनी बात का पक्का हूँ । मैंने जो कुछ भी किया है ऊँचे विचार, महान उद्देश और अच्छे इरादे से किया है । जब मैंने इस काम में पहला कदम उठाया था तो मेरा मन कैसा प्रसन्न हुआ था ! कैसा पवित्र और स्वर्गीय सुख मुझे मिला था ! अथवा वह सब मेरी निरी कल्पना ही थी जो कि दिमाग पर शराब के नशे का असर था, अथवा रात भर न सोने, सिगरेट पीने और बकवास करने का परिणाम था ?'

और फिर लियूबा उसके सामने आ जाती ; उसका भोला, शर्माला, परेशान और प्यारा चेहरा उसकी आँखों के आगे नाच उठता ; वह उसको अपने बहुत निकट और बहुत दिनों की परिचित लगती और फिर उसको अपनी उससे यह जान-पहिचान व्यर्थ में अखरने लगती ।

'क्या मैं कायर और निकम्मा हूँ ?' लिखोनिन हाथ मलता हुआ अपने मन में चिन्ताया, 'मुझे किस बात का डर है ? किसकी मुझे शर्म आती है ? क्या मैं सदा अपनी जिन्दगी का पूरा मालिक होने पर घमण्ड नहीं करता रहा हूँ ? यह भी मान लिया जाय कि किसी मनुष्य की आत्मा पर प्रयोग करने का फ़ितूर जो निन्यानवे फी सदी असफल होता है, मेरे दिमाग में भर गया है, तो क्या मुझे इसके लिए किसी को जवाब देना है अथवा किसी की राय से डरना है ? लिखोनिन ! दूसरे आम मनुष्यों की चिन्ता न करो ! तुम आदर्शवादी हो, वे आदर्शवादी नहीं हैं !'

जेनी बाल बिखरे हुए ऊँघती हुई, लहंगा और एक कुर्ती ही पहिने हुए कमरे में घुसी ।

'आ...आ !' उसने जमुहाई लेते हुए लिखोनिन की तरफ अपना

हाथ मिजाने को बढ़ाया, 'कहो मेरे प्यारे विद्यार्थी, अच्छे तो हो ? तुम्हारी लियूबोच्का तो अपनी जगह—नई जगह—पर खुश है ? कभी मुझे भी दावत देना । या तुम अपनी सुहागरात गुपचुप ही मना लोगे ? किम्मा बाहरवाले को न्योता न दोगे ?'

'छोड़ो यह बेवकूफी की बातें, जेनेच्का । मैं उसका पासपोर्ट लेने आया हूँ ।'

'अच्छा, पासपोर्ट चाहते हो !' जेनेच्का विचार में पड़ गई, 'यहाँ पासपोर्ट तो नहीं है, मगर उसका पीला टिकट घर की मालकिन से तुम ले लो और उसे ले जाकर थाने में देना । वहाँ से उसकी एवज़ में तुम्हें उसका पासपोर्ट मिलेगा । मगर इस मामले में, मेरे प्यारे, मैं तुम्हारी कोई मदद न कर सकूँगी । मुझे खाला या दरवान ने तुम्हारे पास भी देख लिया तो मुझे खूब मार खाने को मिलेगी । देखो, तुम ऐसा करो—नौकरानी को भेजकर खाला जान को बुलवा लो, यह कहलाकर भेजना कि रोज़ाना का एक मेहमान जरूरी काम से आया है और उससे फौरन मिलना चाहता है, मगर मुझे माफ़ करो । मैं इस मामले में न पड़ूँगी । आशा है आप मुझसे नाराज न होंगे । मुझे अपनी जान बचाने की पहले फ़िक्र है, लेकिन तुम यहाँ अँधेरे में क्यों खड़े हो ? जाकर उस कमरे में बैठो । चाहो तो मैं तुम्हारे लिए वहाँ शराब अथवा काफ़ी अथवा...' आँखों में शैतानी भरकर उसने कहा, 'छोकरियाँ भिजवा दूँ ? टमारा तो फँसी हुई है, मगर नियूरा या वेरका को मैं भेज सकती हूँ ।'

'बकवाद मत करो, जेनी ! मैं एक बड़े गम्भीर काम से यहाँ आया हूँ और तुमने यह मजाक...'

'अच्छा, अच्छा, माफ़ करो । मैं मज़ाक नहीं करूँगी । मैं तो यों-ही कह रही थी । मैं देखती हूँ तुम बड़े पत्नी-भक्त हो ! बड़े शरीफ़ आदमी हो । अच्छा चलो, उस कमरे में चलो ।'

वह उसको उसी कमरे में ले गई जहाँ लिखोनिन अपने मित्रों के साथ छोकरियों को लेकर पिछले दिन बैठा था। वहाँ उसको बैठाकर उसने खिड़कियाँ खोल दीं। सूर्य का कोमल और उदास प्रकाश कमरे की लाल और सुनहरी दीवारों, छत से लटकते हुए कंदील और लाल मखमली फर्नीचर पर फैल गया।

‘यहीं शुरूआत हुई थी,’ लिखोनिन ने पश्चात्ताप और दुःख से सोचा।

‘अच्छा, मैं जाती हूँ’ जेनेका ने कहा, ‘मगर तुम खाला से या सिमियन से दबना मत। डटकर उन्हें सुनाना। इस वक्त दिन है और वे तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। अगर वे ज़रा भी चीं-चपड़ करें तो तुम कहना कि फौरन ही गवर्नर के पास जाकर तुम उनकी शिकायत कर दोगे और चौबीस घण्टे के अन्दर तुम उन्हें जेल पहुँचा दोगे। उन्हें खूब ज़ोर-ज़ोर से डाँटना। तब वे तुम से ठीक बातें करेंगे। अच्छा, खुदा हाफिज़ !’

वह यह कहकर चली गई। दस मिनट के बाद अन्ना एक नली पोशाक पहिने हुए कमरे में घुसी। मोटी, गम्भीर चेहरा किये, जो माथे से नीचे गालों तक बुरी तरह मोटा होता गया था, बड़ी-बड़ी ठुड्ठियाँ और छातियाँ हिलाती हुई, अपनी छोटी तीक्ष्ण आँखें चमकाती हुई, जिनके ऊपर भौहों के बाल नदारद थे और पतले-पतले घृणा-पूर्ण होठों को चबाती हुई वह अन्दर घुसी। लिखोनिन ने उठकर उसका मोटा थल-थल हाथ, जो उसने मिलाने के लिए बढ़ाया था और जिसकी उङ्गलियों में अँगूठियाँ भर रही थीं, पकड़ा और एकाएक उसे विचार आया :

‘शैतान की मार हो इस पर ! अगर इस चुड़ैल की आत्मा के भीतर कोई पैठ सके तो अवश्य उसे वहाँ बहुत से कत्लों का भेद मिलेगा !’

कटरे को चलते हुए लिखोनिन ने अपनी जेब में काफ़ी रुपयों के

साथ-साथ एक पिस्तौल भी रख ली थी और रास्ते में कई बार उसने जेब में हाथ डाल-डालकर इस पिस्तौल को छुआ था। उसको मगड़े और वारदात का अन्देश था ; अस्तु वह उसके लिए पूरी तरह तैयार होकर चला था। मगर उसे आश्चर्य हुआ कि जो कुछ भी उसने सोचा था केवल उसका भ्रम ही था। जो कुछ हुआ वह बड़ा ही सादा, यकानेवाला, भोंड़ा पर अप्रिय काम था।

‘कहिये जनाब,’ खालाजान ने एक नीची कुरसी में बैठकर, सिगरेट जलाते हुए, बड़प्पन से कहा, ‘एक रात के दाम देकर आप छोकरी को ले गये और उसे एक रात और एक दिन और रख लिया। पच्चीस रुपये आपको और देने हैं। एक रात के दस रुपये और चौबीस घण्टे के पच्चीस रुपये हमारी छोकरियों की फीस होती है। बिल्कुल टैक्स का-सा हिसाब बढ़ता जाता है। कहिये, आप सिगरेट नहीं पियेंगे ?’ यह कहकर उसने सिगरेट का डिब्बा लिखोनिन की तरफ बढ़ाया और उसमें से लिखोनिन ने, बिना कुछ सोचे या कहे, एक सिगरेट निकाल ली।

‘मैं आपसे एक बिल्कुल दूसरी ही बात करने आया हूँ।’

‘ओ ! कहने की तकलीफ़ न करिये, मैं समझ गई। शायद आप उस छोकरी, लियूबा को बिल्कुल अपना करके रखना चाहते हैं अथवा आप रूसी लोग जैसे कहते हैं, उसे बचाना, उसका उद्धार करना चाहते हैं। हाँ, हाँ, ऐसा अक्सर होता है। बाईस बरस से मैं चकले में रहती हूँ। अतएव मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि सबसे मूर्ख नौजवान ऐसी हरकतें किया करते हैं, मगर मैं आपको विश्वास दिला देना चाहती हूँ कि इसका नतीजा कुछ न होगा।’

‘नतीजा क्या होगा अथवा नहीं होगा—यह सोचना मेरा काम है’ लिखोनिन ने कहा और उसने घुटनों पर रखे अपने काँपते हुए हाथों की तरफ़ एक उदास दृष्टि डाली।

‘हाँ, बेशक वह सोचना आपका काम है’ यह कहते हुए अज्ञा

के गुदगुदे गाल और गम्भीर ठुड्डियाँ मन्द हँसी से हिलीं, 'मैं अपनी अन्तरात्मा से आपके लिए प्रेम और मित्रता की इच्छा करती हूँ, मगर कृपया उस नीच स्त्री से मेरी तरफ़ से केवल इतना कह देने की तकलीफ़ कीजियेगा कि जब उसे आप दूध की मक्खी की तरह अपने घर से निकालकर फिर सड़क में फेक दें तो कम से कम वह फिर यहाँ अपना मुँह दिखाने की हिम्मत न करे। चाहे वह सड़क पर भूखी मरे या किसी अठन्नीवाले चकले में दाखिल होकर सिपाहियों को खुश करे !'

'विश्वास रखिये, वह फिर लौटकर आपके पास न आवेगी, आप सिर्फ़ मुझे पौरन उसका टिकट दे देने की मेहरबानी करें।'

'टिकट ? जैसी आपकी इच्छा ! अभी लीजिये, क्षणभर में। मगर पहले आप कृपा करके उसका उधार खाता यहाँ का चुका दें। यह है उसका हिसाब, ज़रा इसे देख लीजिये। मैं इसे साथ ही लेती आई हूँ क्योंकि मैं जानती थी कि आप आखिर में मुझ से क्या कहेंगे।' यह कहते हुए उसने अपनी चोली से एक छोटी-सी हिसाब की किताब निकालकर दी और ऐसा करने में उसको अपनी बड़ी-बड़ी, मास की थैलियों की तरह पीली-पीली छ्वातियों के दर्शन भी करा दिये। उस किताब के ऊपर लिखा था—'मिस आईरीन वोशचेनकोवा, अन्ना मारकोवा के चकले में, कटरे में रहनेवाली का खाता।' लिखोनिन ने पहला पन्ना उलटकर उस पर छपे हुए तीन-चार नियम पढ़े, उनमें रूसी और सूक्ष्म भाषा में लिखा था कि हिसाब की दो किताबें रखी जानी चाहिये। एक चकले की मालकिन के पास और दूसरी वेश्या के पास। सागी आमदनी और खर्च दोनों किताबों में दर्ज़ होना चाहिये। इक्करारनामे के अनुसार वेश्या को रहने, खाने, आग, रोशनी, बिस्तर, स्नान इत्यादि की सुविधाएँ मिलनी चाहिये और उसके लिए वेश्या को अपनी कमाई का दो तिहाई से अधिक भाग किसी हालत में नहीं देना चाहिये। बाक़ी आमदनी से उसे अपने लिए अच्छे और साफ़ कपड़े

बनाने चाहिये और बाहर जाने के लिए कम से कम दो पोशाकें रखनी चाहिये। जब कभी मालकिन को रुपया दिया जाय तो उसके लिए मालकिन को बाक्कायदा स्टाम्प लगाकर वेश्या को रसीद देनी चाहिये और हर महीने के अन्त में हिसाब-किताब पूरा हो जाना चाहिये। अन्त में यह भी लिखा था कि वेश्या जब चाहे तब चकला छोड़कर, चाहे उस पर चकले की मालकिन का कर्जा भी चढ़ा हो, जा सकती है। मगर मालकिन उससे अपना कर्जा दूसरे कर्जों की तरह क्लानूनों के अनुसार वसूल कर सकती है।

लिखोनिन ने नियमों के इस वाक्य पर अपनी उङ्गली फिराई और किताब घुमाकर मालकिन को यह वाक्य दिखाते हुए कहा :

‘आहा देखो, इसमें भी साफ़ लिखा है कि उसको जब चाहे तब चकला छोड़कर चले जाने का हक़ है। अतएव वह जब चाहे तब यह तुम्हारा गन्दगी, नीचता, क्रूरता और बेहयाई से भरा हुआ घर छोड़कर जा सकती है...’

‘जी हाँ, मुझे उसमें ज़रा भी शक नहीं है। वह जा सकती है, मगर उसको सिर्फ़ यह रुपया अदा करना होगा।’

‘रुपया अदा करने के लिए वह तुम्हें हुण्डी या दस्तावेज़ लिख कर दे सकती है।’

‘हुण्डी या दस्तावेज़ ! पहले तो वह अपढ़ है और लिख नहीं सकती ; दूसरे लिख भी सके तो उसकी हुण्डी या दस्तावेज़ लेगा कौन ? उसकी कीमत ही क्या है ! हाँ, वह कोई अच्छा ज़ामिन ला सके तो मुझे कोई उज्र न होगा।’

‘नियमों में ज़ामिन का तो कहीं ज़िक्र नहीं है।’

‘नियमों में सब बातें लिखी नहीं होतीं ! नियमों में यह भी तो लिखा नहीं है कि आप बिना मालकिन को नोटिस दिये किसी छोकरी को निकाल कर ले जायें।’

‘खैर, उसका टिकट तो तुम्हें मुफ़्फ़ को दे देना ही पड़ेगा ।’

‘ऐसी बेवकूफी मैं हरगिज़ न करूँगी ! किसी भले आदमी को लेकर पुलिस के साथ यहाँ आइये और जब पुलिस इस बात का सर्टीफ़िकेट दे दे कि वह तुम्हारा दोस्त हैसियत का आदमी है और तुम्हारा दोस्त ज़ामिन होने की हामी भरे और पुलिस इस बात का सर्टीफ़िकेट भी दे कि तुम छोकरी को व्यापार के लिए अथवा किसी दूसरे चकले में बेचने के लिए नहीं ले जा रहे हो, तब मैं तुम्हें उसका टिकट दे सकती हूँ ! फिर तुम उससे जो चाहो सो कर सकते हो !’

‘शैतान की नानी !’ लिखोनिन ने चिल्लाकर कहा, ‘और मैं ही उसका ज़ामिन हो जाऊँ तो ! मैं ही हुण्डी या दस्तावेज़ लिखने पर राज़ी हो जाऊँ तो...’

‘भोले जवान ! न जाने तुम्हारी यूनीवर्सिटियों में तुम्हें क्या पढ़ाया जाता है ! मगर क्या तुम मुझे इतना काठ का उल्लू समझते हो ! भगवान ही जाने इस समय तुम जो पतलून पहिने हो उसके सिवाय तुम्हारे पास दूसरी कोई पतलून भी है या नहीं ! भगवान ही जाने कि परसों तुम नानबाई की दूकान से अपने लिए बासी रोटी भी खाने को खरोद सकोगे या नहीं ! और तुम मुझसे हुण्डी या दस्तावेज़ लिखने को कहते हो ! क्यों तुम मेरा व्यर्थ में सिर खपा रहे हो ?’

लिखोनिन के गुस्से का पार न रहा । उसने जेब में से अपना रुपयों का बटुआ निकालकर मेज़ पर पटककर कहा :

‘अच्छा तो मैं तुम्हें अभी सारा रुपया दिये देता हूँ !’

‘अच्छा, अच्छा यह बात ही दूसरी है,’ मीठे शब्दों में, मगर फिर भी अविश्वास से खाला ने कहा, ‘ज़रा हिसाब के पन्ने उलटकर यह तो देख लेने की तकलीफ़ कीजिये कि आपकी प्यारी को कितना कज़ा अदा करना है ।’

‘चुप, चुड़ैल कहीं की !’

‘मैं चुप हूँ, मूर्ख !’ शान्तिपूर्वक खाला ने उत्तर में कहा ।

हिसाब की किताब के बायें पृष्ठ पर आमदनी और दाहिने पर खर्च दर्ज था । लिखोनिन ने पढ़ना शुरू किया :

‘रसीद देकर वसूल पाया तारीख १५ अप्रैल को १०) रुपया ; ता० १६ को ४) ६० ; ता० १७ को १२) ६० ; ता० १८ को बीमार ; ता० १९ को बीमार ; ता० २० को ६) ६० ; ता० २१ को २४) ६० ।’

‘हे ईश्वर !’ घृणा और दुःख से लिखोनिन ने सोचा, ‘एक रात में बारह आदमी !’

महीने के अन्त में लिखा था—‘कुल मीज़ान ३३०) ६० ।’ ‘बाप रे ! कैसे जीवित रहती थी ? एक मास में एक सौ पैंसठ आदमियों से !’ लिखोनिन ने अन्ना के चकले की दो रुपये फी आदमी की फी बार की फाँस के हिसाब से जोड़ते हुए अपने मन में सोचा और आगे का हिसाब देखा फिर उसने दाहिने पृष्ठ पर खर्च का हिसाब देखना शुरू किया :

एक लाल रेशमी पोशाक दर्जिन एल्डोकी मोवा से बनवाई कीमत ८४) ६० । एक सुबह की पोशाक कीमत ३५) ६० । छः जोड़ी रेमशी मोजे कीमत ३६) । मोटर भाड़ा, मिठाइयाँ, इत्र इत्यादि । कुल मीज़ान २०५) इसके बाद ३३०) ६० की आमदनी में से २२०) ६० मालकिन का हिस्सा रहने, खाने-पीने इत्यादि का खर्चा घटा दिया गया था । इस तरह महीने के आखिर में ११०) बचा था ; अस्तु पोशाक इत्यादि दूसरी चीज़ों की कीमत अदा कर चुकने पर आइरीन वोश्चेन-कोवा के नाम ९५) ६० का कर्ज़ा निकलता था जिसमें पिछले साल का ४१८) ६० का कर्ज़ा मिला देने पर कुल कर्ज़ा ५१३) उसके नाम पर था ।

इस हिसाब को देखकर लिखोनिन के होश उड़ गये । उसने खरोदी जानेवाली चीज़ों की अधिक कीमत की शिकायत की । मगर खालाजान

ने बड़ी ठण्डी तबियत से उत्तर में कहा—‘इन सबसे मेरा कोई सरोकार नहीं है। हम तो अपनी छोकरियों से भले घर की छोकरियों की तरह अच्छे कपड़े पहिनने को कहते हैं। फिर वे चाहे बेशक्कीमती कपड़े पहिने या सस्ते, इससे हमें कोई सरोकार नहीं रहता। हमसे वे कर्ज चाहती हैं तो हम कर्ज उधार देते हैं।’

‘मगर यह तुम्हारी लोमड़ी दर्ज़िन कौन है?’ लिखोनिन ने ज़ोर से कहा, ‘यह मकड़ी भी तुम्हें खून चूसनेवाली जोंक से पूरी तरह साज़िश में है! आदमियों का खून चूसनेवाली डायन! तेरे आत्मा भी है या नहीं?’

जितना ही वह गरम होकर चिढ़ता था उतनी ही अन्ना ठण्डी होकर उसे चिढ़ाती थी।

‘मैं फिर कहती हूँ कि इन सबसे मेरा कोई सरोकार नहीं है और देखो नौजवान, तुम इस तरह मुझ से नहीं बोल सकते। वरना मैं अभी दरबान को बुलाकर तुम्हें द्वार के बाहर निकलवा दूंगी।’

लिखोनिन को मजबूर होकर उस फ़ूर औरत से बड़ी देर तक सौदा करना पड़ा। यहाँ तक कि उसका गला पड़ गया। आखिरकार अन्ना किसी तरह इस बात पर राज़ी हुई कि २५०) ५० तो उसको फ़ौरन नक़द दे दिये जायँ और सौ रुपये का लिखोनिन अपने नाम से कर्ज़ का दस्तावेज़ लिख दे। यह बात उसने तब मानी जब अपना सर्टीफ़िकेट दिखाकर लिखोनिन ने उसे यह विश्वास दिला दिया कि छः महीने में ही अपनी पढ़ाई ख़त्म करके वह वकील हो जानेवाला है।

ख़ालाजान टिकट लेने गई और लिखोनिन कमरे में इधर-उधर टहलने लगा। वह दीवार पर टँगी हुई सारी तस्वीरों को देख चुका था। एक तस्वीर में एक स्त्री एक हंस के पास समुद्र के तट पर नहा रही थी; दूसरी तस्वीर में हरम में एक बेगम बैठी थी; तीसरी तस्वीर में एक दैत्य एक नङ्गी परी को हाथों में उठाये लिये जा रहा था। एकाएक

उसकी निगाह एक छुपे हुए कागज पर पड़ी जो शीशे के चौखटे में जड़ा तस्वीरों के साथ दीवार पर लटका था और एक तस्वीर से आधा छिप रहा था। लिखोनिन की निगाह आज पहली ही बार इस कागज पर पड़ी थी और उसको पढ़कर घृणा और आश्चर्य से वह दङ्ग रह गया। निर्जीव सरकारी तथा पुलिस के थानों की निर्लज्ज भाषा में इस कागज पर वेश्याओं के लिए सब क्रिस्म की हिदायतें लिखी हुई थीं—उनको कौन-सी दवाओं का किस तरह इस्तेमाल करना चाहिये जिससे उनको और मेहमानों को गन्दी बीमारियाँ न हों, शरीर की सफ़ाई रखने के लिए क्या-क्या उपाय करने चाहिये और हर हफ्ते डाक्टरी मुआयना किस तरह करना चाहिये। उसमें यह भी लिखा था कि कोई चकला गिरजाघर, शिक्षालय, तथा न्यायालय के सौ कदम के भीतर नहीं हो सकता। स्त्रियों के अलावा न तो कोई और चकला रख सकता है और न चकला रखनेवाली स्त्री के नाते-रिश्ते की सात बरस से ऊपर की कोई स्त्री और मर्द उसके साथ चकले में रह सकते हैं। चकले की मालकिनों को और चकले में रहनेवाली छोकरियों को, एक दूसरे के साथ और आनेवाले मेहमानों के साथ नम्रता का व्यवहार करना चाहिये और शराब पीकर शोरोगुल, गाली-गलौज और मगड़ा-बखेड़ा नहीं करना चाहिये। वेश्या को खुद नशे में हो जाने पर या किसी नशे में हो जानेवाले मेहमान को चूमना या प्यार करना नहीं चाहिये। इसके अलावा दूसरे खास मौकों पर भी, जिनका जिक्र था, वेश्या को किसी हालत में भी गर्भगत नहीं करना चाहिये। ‘यहाँ भी धर्म की रक्षा की जाती है !’ लिखोनिन ने घृणा से अपने मन में विचारा।

आखिरकार अन्ना से काम पूरा हुआ। रुपया लेकर अन्ना ने रसीद लिखी और रसीद को टिकट के साथ उसने लिखोनिन की तरफ़ देने के लिए बढ़ाया। लिखोनिन ने अपना दस्तावेज उसकी तरफ़ बढ़ाया। दोनों एक दूसरे की आँखों और हाथों को बड़े गौर से देख रहे थे।

स्पष्ट था कि दोनों में से किसी को एक दूसरे की किसी भी हरकत का विश्वास नहीं था। लिखोनिन ने रसीद और टिकट अपनी जेब में रख लिये और उठकर चला। अन्ना उसको जीने के द्वार तक पहुँचाने उसके साथ गई और जब वह जीने से उतरकर सड़क पर पहुँच गया तो ऊपर से झुककर चिल्लाई :

‘विद्यार्थी, ओ विद्यार्थी !’

लिखोनिन रुक गया और मुड़कर उसकी तरफ देखने लगा।

‘क्या है ?’ उसने पूछा।

‘सुनो, एक बात रह गई है वह भी सुनते जाओ। तुम्हारी लियूबा बिल्कुल कूड़ा है ! वह चोर है और उसको आतशक की बीमारी है ! हमारे यहाँ आनेवाले अच्छे मेहमानों में से कोई भी उसे पसन्द नहीं करता था। अच्छा हुआ तुम उसे ले गये। वरना हमों उसे यहाँ से निकाल बाहर करनेवाले थे ! मैं तुम्हें यह भी बता देना चाहती हूँ कि वह दरबान, पुलिसवालों, चौकीदारों और गिरहकटों के साथ खूब सोती थी। तुम्हारे उससे विवाह करने पर तुम्हें मेरी हार्दिक बधाई !’

‘अरी कुतिया !’ लिखोनिन उस पर चिल्लाया।

‘उल्लू कहीं का !’ खाला बोली और उसने ज़ोर से द्वार बन्द कर लिया।

लिखोनिन किराये की एक मोटरगाड़ी में बैठकर थाने की तरफ चला। रास्ते में उसे ख्याल आया कि उसने उस मशहूर पीले टिकट को जिसके बारे में उसने इतना सुना था, अच्छी तरह देखा भी नहीं था कि उस पर क्या लिखा था ; अस्तु उसने उसे जेब से निकाला। टिकट डाकखाने में बिकनेवाले लिफाफों के बराबर एक छोटी-सी किताब की तरह था। उसके एक पृष्ठ पर लियूबा का नाम, उसके बाप का नाम और उसका पेशा ‘वेश्या’ दर्ज था। दूसरे पृष्ठ पर सूक्ष्म में वही वेशमी से भरे वेश्याओं की सफ़ाई और व्यवहार के कायदे और

नियम थे जिनको उसने दीवार पर टँगे हुए कागज़ पर कुछ देर पहले ही पढ़ा था। वह पढ़ने लगा—‘हर मेहमान को वेश्या से उसके पिछले डाकटरी मुआयने का सर्टीफिकेट माँगकर देखने का हक है।’ यह पढ़ते ही लिखोनिन का दिल फिर भर आया।

‘बेचारी स्त्रियों की’ उसने दुःख से सोचा, ‘क्या-क्या अधोगति की जाती है ? कौन-सा दुर्पयोग उनका नहीं किया जाता ! और वे बेचारी कोल्हू के बैल की तरह आँखें मीचे सब कुछ सह लेने की आदी हो जाती हैं !’

थाने में पहुँचने पर उसे हल्के का थानेदार बरकेश मिला। वह रातभर ड्यूटी पर गश्त लगाता रहा था जिससे काफ़ी न सो सकने के कारण चिढ़ा हुआ था। उसकी लम्बी, तथा पंखे की तरह चौड़ी लाल-लाल दाढ़ी उलझी और मुड़ी हुई थी। उसके चेहरे का दाहिना हिस्सा, तकिये पर एक तरफ़ पड़े रहने से अभी तक लाल था। मगर उसकी आश्चर्यजनक, साफ़, ठण्डी और नीली आँखें चीनी के बर्तन की तरह चमक रही थीं। रात में गिरफ्तार की हुई शराबियों की भीड़ से जो अब छोड़ी जा रही थी, गालियाँ देते और कोसते हुए, सवाल पूछ-पूछकर और उनके नाम दर्ज कर-करके, वह सिर के पीछे दोनों हाथ लगाकर, दीवान की पीठ पर टेक लगाकर, इतनी ज़ोर से अँगड़ाया कि उसके हाथ की उङ्गलियों और शरीर के सारे जोड़ चटख गये। उसने लिखोनिन की तरफ़ इस तरह देखा जैसे कि लिखोनिन कोई निर्जीव वस्तु हो और पूछा :

‘कहिये, आप क्या चाहते हैं ?’

लिखोनिन ने अपना काम सूक्ष्म में उसे बता दिया।

‘अस्तु मैं उसको,’ अन्त में लिखोनिन ने कहा, लेजाकर अपने पास रखना चाहता हूँ...उसके लिए क्या मुझे करना होगा !...उसको मेरी नौकरानी अथवा मेरी रिश्तदार मानकर मुझे बताइये कि इस मामले में क्या करना होगा ।...’

‘या कहिये कि उसको आपकी रखेल या स्त्री मानकर,’ बरकेश ने चाँदी का एक सिगरेट का बक्स जिस पर नक्काशी के चित्र बन रहे थे हाथ में उछालते हुए कहा, ‘मैं आपके लिए कुछ न कर सकूँगा... कम से कम इस वक़्त फौरन ही तो कुछ भी नहीं हो सकता। अगर आप उससे विवाह करना चाहते हैं तो आपको यूनीवर्सिटी के अधिकारियों की इजाज़त का पत्र दाखिल करना होगा। और अगर आप उसको सिर्फ रखेल बनाकर अपने खर्च पर रखना चाहते हैं तो ज़रा सोचिये तो कि यह कौन-सी अक्ल की बात है? आप एक छोकरी को वेश्या घर से निकालकर तो ले जाते हैं मगर रखते उसको अपनी वेश्या बनाकर ही हैं?’

‘नहीं, नौकरानी की तरह वह मेरे यहाँ रहेगी,’ लिखोनिन बोला।

‘नौकरानी की तरह ही सही। उस हालत में आपको अपने मकान मालिक का अपनी सफ़ाई मैं एक बयान हल्फ़ी दाखिल करना होगा, क्योंकि मैं समझता हूँ कि आप खुद ही मकान मालिक न होंगे और किसी किराये के मकान में रहते होंगे, कि आप की हैसियत नौकर रखने की है और उसके साथ ही आपको अपनी यूनीवर्सिटी या पैदाइश या रहने के ज़िले से अपनी शनाख़्त के कागज़ात भी दाखिल करने होंगे कि आप सचमुच वही शख्स हैं जो आप अपने आपको बतलाते हैं। मुझे उम्मेद है आपका नाम तो सरकारी कागज़ातों में होगा ही? या शायद आप भी...बेक्रायदा लोगों में हैं?’

‘नहीं, मेरा नाम कागज़ातों में है।’ लिखोनिन ने बेसब्री दिखाते हुए कहा।

‘यह बड़ा अच्छा है। मगर उन श्रीमतीजी का, जिनके लिए आप इतनी तकलीफ़ कर रहे हैं, उनका भी नाम कागज़ातों में दर्ज है?’

‘नहीं, उसका नाम अभी तक दर्ज नहीं है। मगर उसका पीला टिकट मैं ले आया हूँ जिसको लेकर मुझे उम्मीद है, आप, उसका

पासपोर्ट मुझे लौटा देंगे और उसको पाते ही फौरन में जाकर उसका नाम भी सरकारी कागजातों में दर्ज करा दूँगा ।’

बरकेश ने अपने दोनों हाथ फैलाये और चाँदी का सिगरेट का बक्स फिर हाथ से उछालने लगा ।

‘मुझे अफ़स है मिस्टर, मैं आपके लिए तब तक कुछ नहीं कर सकता जब तक आप तमाम कागजात नहीं ले आते । उम छोकरी का चकले के सिवाय और कहीं रहने का हक़ नहीं है इसलिए उसे आपको फौरन थाने में भेज देना होगा । हाँ, अगर वह चाहे तो फिर चकले में लौटकर जा सकती है । अच्छा, आदाबअर्ज़ ।’

लिखोनिन ने जल्दी से अपनी टोपी उठाकर सिर पर रख ली और दरवाजे की तरफ़ चला । मगर एकाएक उसके दिमाग़ में एक विचार आया जिससे उसे स्वयं बड़ी घृणा हुई । उसका जी ऊब उठा और उसके हाथ-पाँव ठण्डे होकर झनझना उठे । मगर वह इस विचार के आते ही लौटा और लौटकर बरकेश की मेज़ तक गया और उससे लापरवाही दिखाता हुआ, होशियारी से बोला :

‘माफ़ कीजिये, इस्पेक्टर साहब, मैं सबसे ज़रूरी काम तो भूल ही गया । आपके एक दोस्त ने आपसे कुछ कर्ज़ लिया था वह उन्होंने मुझे आपको लौटा देने के लिए दिया था ।’

‘हूँ ! मेरे दोस्त ने मुझ से कर्ज़ लिया था ?’ बरकेश ने अरनी नीली-नीली आँखें खोलकर पूछा, ‘कौन-से दोस्त ने ?’

‘बार... बारबारीसोव ने ।’

‘ओहो, बारबारीसोव ने ? अच्छा, अच्छा, मुझे याद आ गया, मुझे याद आ गया !’

‘यह लीजिये दस रुपये । यह उन्होंने मुझे आपको लौटाने को दिये थे ।’

बरकेश ने सिर हिलाते हुए रुपया लेने से इनकार करते हुए कहा :

‘यह आपका मित्र बारबारीसोब—मेरा और आपका दोनों ही का मित्र—बड़ा सूअर है। उसने मुझसे दस रुपये नहीं, पच्चीस रुपये लिए थे। बड़ा बदमाश है ! पच्चीस रुपये और उसके साथ कुछ रेजगारी भी उसने मुझसे ली थी। खैर, रेजगारी की फिक्र मुझे नहीं है। भगवान उसी का भला करें ! विलियर्ड खेलने में उसने यह रुपया मुझसे उधार लिया था। मगर वह है बड़ा धोखेबाज...खेलने में बड़ा बेईमानी करता है...खैर, मेरे नौजवान दोस्त, पन्द्रह रुपये मुझे और चाहिये।’

‘अच्छा, मगर आप भी बड़े छूटे हुए हैं, इन्सपेक्टर साहब !’ लिखोनिन ने रुपये निकालते हुए कहा।

‘अरे, मुझ पर रहम खाइये !’ बरकेश ने पिघलते हुए उत्तर में कहा, ‘मैं बाल-बच्चेदार और बड़ी गृहस्थीवाला आदमी हूँ...और जो तनख्वाह हमको मिलती है वह तो आप जानते ही हैं...यह लीजिये, अपनी छोकरी का पासपोर्ट। रसीद लिखिये। ईश्वर आपको सुखी करे।’

बड़ी विचित्र बात हुई ! लिखोनिन को यह ज्ञान होते ही कि आखिरकार पासपोर्ट मेरी जेब में आ ही गया, एकाएक बड़ा उत्साह और खुशी हुई।

‘अच्छा जी,’ उसने सड़क पर जल्दी-जल्दी चलते हुए विचारा, ‘अब सब ठीक हो जायगा। काम का सबसे कठिन हिस्सा पूरा हो, गया। बड़े चलो लिखोनिन, हिम्मत मत हारो ! जो कुछ भी तुम कर रहे हो बहुत अच्छा और ऊँचा है। इसका जो कुछ भी नतीजा हो भुगतने को तैयार रहो। कोई अच्छा काम करना और उसके एवज में फौरन ही इनाम की इच्छा करना बड़ी शर्म की बात है। मैं कोई छोटा-सा सिखा हुआ कुत्ता अथवा सरकस का ऊँट अथवा छोकरीयों के स्कूल का विद्यार्थी तो हूँ नहीं। मैंने कल उन शानी मित्रों से सलाह

करके बड़ी गलती की। मुझे इतनी जल्दी नहीं करनी चाहिये थी— बड़ी बेवकूफी हुई। खैर, जिन्दगी में ऐसी गलतियाँ भी हो जाती हैं और फिर सब ठीक हो जाता है। भारी से भारी नुकसान और बड़ी से बड़ी बेइज्जती भी आदमी को वक्त गुज़र जाने पर छोटी लगने लगती है...

उसको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि लियूबा ने पासपोर्ट वापिस मिल जाने पर खास खुशी नहीं दिखाई। हाँ, उसे लिखोनिन के वापिस लौट आने पर ज़रूर खुशी थी। शायद यह भोली-भाली पुरानी चाल की स्त्री अपने रक्त पर निर्भर हो उठी थी। वह दौड़कर उसके गले से चिपटने लगी परन्तु लिखोनिन से उसे रोककर धीरे से उसके कान में पूछा :

‘लियूबा, मुझे एक बात बताओ, निडर होकर बिल्कुल सच-सच बताना। मुझसे वहाँ उन लोगों ने अभी कहा कि तुम्हें एक बुरी बीमारी है...मेरा मतलब है आतशक की बीमारी है। यदि मुझ पर तुम्हें कुछ भी स्नेह है मेरी प्यारी, तो सब सच-सच बता दो ! क्यों है न तुम्हें यह बीमारी ?’

लियूबा का चेहरा लाल हो गया। उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढाक लिया और दीवान पर पड़कर रोने लगी।

‘मेरे प्यारे ! वसील वसीलिश ! मेरे वसीन्का ! ईश्वर की सौगन्ध ! ईश्वर की सौगन्ध खाकर मैं कहती हूँ कि मुझे कभी कोई ऐसी बीमारी नहीं थी। मैं हमेशा उससे बड़ी सचेत रहती थी। मुझे उसका सदा बड़ा भय रहता था। मैं तुम्हें इतना चाहती हूँ ! ऐसा होता तो मैं अपने आप ही तुमसे कह देती।’

यह कहते हुए उसने उसके दोनों हाथ पकड़कर अपने आँसुओं से भीगे हुए चेहरे से लगा लिये और उसको इस प्रकार अपनी सच्चाई का सिसक सिसककर विश्वास दिलाने लगी जिस प्रकार एक छोटा

बच्चा उस पर झूठा इलजाम लगाये जाने पर करता है ।

लिखोनिन ने उस पर अपनी आत्मा से विश्वास कर लिया ।

‘मैं तुम्हारी बात पर बिल्कुल विश्वास करता हूँ’, उसने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा, ‘तुम इतनी दुखी क्यों होतों हो ? इस तरह रोती क्यों हो ? खैर, अपनी कमजोरी का शिकार फिर हम लोगों को कभी न होना चाहिये । जो हो चुका सो हो चुका, आगे फिर वैसा ही कभी न होना चाहिये ।’

‘जैसी तुम्हारी खुशी,’ छोकरी उसके हाथ और उसके कोट का सिरा चूमती हुई बड़बड़ाई, ‘मैं तुम्हें खुश नहीं करती तो फिर जैसी तुम्हारी मर्जी है वैसा ही होगा ।’

मगर आज रात को भी फिर वही हुआ और रोज़-रोज़ उसी तरह होता रहा । यहाँ तक कि लिखोनिन को अपने गिरने पर शरम आना बन्द हो गई और वह उसकी आदत हो गई । दिल में खटक और पश्चात्ताप होना खत्म हो गया ।

सोलहवाँ अध्याय

मगर सच यह है कि लिखोनिन ने लियूबा का जीवन शान्तिपूर्ण, निश्चिन्त और स्थायी बनाने के लिए कोई कसर उठा न रखी। वह समझता था कि उसे यह मकान—यह छत पर का अपना घोंसला छोड़ देना होगा। इसलिए नहीं कि वहाँ रहने के लिए जगह कम थी या कोई तकलीफ़ थी—बल्कि इसलिए कि एलेक्जेंड्रा का व्यवहार उनके प्रति दिन पर दिन अधिक खराब, चिड़चिड़ा और भयंकर होता जाता था। अस्तु उसने शहर के छोर पर दो कमरे और एक रसोईघर का सस्ता-सा मकान अर्थात् आग के बिना नौ रुपये महीने पर ले लिया। यह ज़रूर है कि इस नये मकान से लिखोनिन को अपने विद्यार्थियों को जाकर पढ़ाना बहुत दूर पड़ता था, परन्तु उसे अपने स्वास्थ्य और अपने पैरों पर काफ़ी विश्वास था। अक्सर वह कहता, 'मेरी टाँगें तो मेरी ही हैं ! किसी से किराये पर या उधार ली हुई नहीं हैं। उनको मैं जितना चाहूँ हस्तेमाल कर सकता हूँ।'।

और सचमुच वह बहुत चल सकता था। एक बार उसने मज़ाक ही मज़ाक में अपनी दिन भर की चलाई का जोड़कर हिसाब लगाया

तो उसने पाया कि वह पन्चीस मील दिन भर में चला था। उसे काफी दौड़-धूप करनी होती थी क्योंकि लियूबा के पार्सपोर्ट लेने और अपने नये घर के लिए फर्नीचर और सामान खरीदने में उसकी ताशों से जीती हुई सारी कमाई खर्च हो चुकी थी। अतएव उसने थोड़े-थोड़े रुपये से फिर ताश खेलना शुरू किया, मगर उसे शीघ्र ही मालूम हो गया कि ताशों से फिर उसका भाग्य जगनेवाला नहीं था।

अब उसका लियूबा से जो सम्बन्ध था वह सब दोस्तों को मालूम हो चुका था, परन्तु फिर भी वह उनके सामने लियूबा से दोस्ताना और बिरादराना ताल्लुक का नाटक जारी रखता था। किसी वजह से वह न तो यह समझता था और न समझना चाहता ही था कि उसका लियूबा से जो ताल्लुक था उसको साफ़-साफ़ सबसे ज़ाहिर कर देना ही उसके लिए उचित, अच्छी और अक्लमन्दी की बात थी। शायद वह यह समझता हो, मगर एक बार जो सबके सामने कह चुका था उसे बदलना नहीं चाहता था। उसके और लियूबा के सम्बन्ध में प्रेम और चुम्बन की शुरुआत लियूबा की तरफ से ही हुआ करती थी— उसकी तरफ से नहीं। पार्सपोर्ट से उसका असली नाम आईरीन जान लेने पर भी वह उसे लियूबा ही कहता रहा।

वह, जो रोज अपना शरीर बड़े दिखावटी उत्साह से, रोज दसों आदमियों को और महीने में सैकड़ों को दिया करती थी, अब स्त्री के पूरे प्रेम और ईर्ष्या से लिखोनिन की हो गई थी और उसे अपने शरीर, भावों और विचारों से प्रेम करती थी। शाहज़ादा उसको विदूषक और मज़ाकिया लगता था। बड़ी-बड़ी बातें करनेवाले सोलोवीव से मिलकर उसकी तबियत खुश होती थी, मगर सिमानोवस्की की अधिकार-पूर्ण बातों से उसे बड़ा डर लगता था और लिखोनिन तो उसका सर्वस्व और देवता ही था, और जो सबसे खतरनाक और खराब बात है— उसकी जायदाद और शरीर का सुख था।

यह बहुत दिनों की मानी हुई बात है कि एक मर्द जो काफ़ी प्रेम कर चुकता है और विषय-भोग से थक चुकता है, फिर कभी किसी एक औरत से पवित्र, त्यागपूर्ण और अच्छा प्रेम नहीं कर सकता ; मगर स्त्रियों के बारे में यह सत्य लागू नहीं है । यह बात लियूबा के मामले में और भी साबित हो गई क्योंकि वह लिखोनिन की दासी और गुलाम बनकर रहने और उसके आगे रेंगने को तैयार थी ; मगर साथ ही वह यह भी चाहती थी कि वह बिल्कुल उसका होकर रहे—मेज़ की तरह, छोटे से कुत्ते की तरह, रात की पोशाक की तरह उसका होकर रहे । और वह इस मामले में हमेशा फिसड्डी रहता, इस अचानक प्रेम के आक्रमण को सँभाल न पाता, जो कि एक छोटे से चश्मे से इतनी जल्दी बढ़कर एक बड़ा दरिया हो गया था और किनारों को लाँघकर बह उठा था । अक्सर वह दुखी हृदय से अपने आपको लानत-मलामत करता हुआ सोचता था :

‘रोज शाम को मैं यूसुफ़ और जुलेखा के खेल में यूसुफ़ का पार्ट खेलता हूँ । मगर यूसुफ़ जुलेखा-से अपने आपको किसी तरह छुड़ाकर, उसके हाथ में अपना कपड़ा छोड़कर, भाग तो गया था ! मैं इस जुये से कब मुक्त होऊँगा ?’

इसके अतिरिक्त लिखोनिन अपने मित्रों और बन्धुओं के अपने और लियूबा के प्रति व्यवहार से भी बड़ा दुखी था । वे उसके गरीब मगर खातिरदार घर पर उसी तरह मड़राते रहते थे जैसे कि दीपक पर पतङ्गे ; मगर उसे उनके शब्दों, लहजों, और हाव-भावों में लियूबा के लिए उस सम्मान और शिष्टता के चिन्ह नहीं दीखते थे जो कि नौजवान मित्र अपने किसी साथी की पत्नी, प्रेमिका या बहिन के प्रति दिखाते हैं । अपने साथियों के लियूबा के प्रति ऊपरी अच्छे व्यवहार में वह उनके भीतरी विचार भी इस प्रकार देखता था :

‘तुम्हें चकले से सस्ते आनन्द के लिए यहाँ लाया गया है । वहाँ

तुम रुपये के लिए बीसियों और सैकड़ों आदमियों के साथ सोती थीं। यहाँ भी अभी तक तुम्हारा वही पेशा है। जो तुम वहाँ थी वही तुम यहाँ भी रहोगी। एक रात के लिए तुम्हें बुला लेना कोई मुश्किल काम नहीं है। तुम बिना सोचे-विचारे अपनी आदत के अनुसार बड़ी आसानी से चली आओगी।'।

यह सोचकर उसके मन में बड़ी आत्मरलानि होती क्योंकि उसे लगता कि इस प्रकार के विचार अपने मन में रखकर उसके मित्र लियूबा का ही नहीं बल्कि उसका भी अपमान करते थे। वे उसको भी लियूबा की तरह समझते थे।

अस्तु लियूबा के लिए उसके मन में एक प्रकार का द्वेष उत्पन्न होने लगता और उसके मन में उससे किसी तरह पीछा छुड़ा लेने के लिए तरह-तरह के विचार आने लगते। इन विचारों में से कुछ विचार तो ऐसी बेईमानी से भरे होते थे कि कुछ ही घण्टे बाद या दूसरे दिन लिखोनिन फिर जब उन्हें सोचता तो मन ही मन शर्म से सिर नीचा कर लेता।

‘मेरा पतन हो रहा है ! मेरा नैतिक और मानसिक पतन हो रहा है !’ वह कभी-कभी ध्वराकर सोचने लगता :

‘मैंने कहीं पढ़ा या सुना था कि ऊँचे दर्जे के मर्द का नीच स्त्री से सम्बन्ध हो जाने पर स्त्री ऊँची नहीं उठती बल्कि मर्द को ही नीचा कर लेती है।’ दो हफ्ते के बाद लिखोनिन का लियूबा में रस खत्म हो गया। वह उसके बोंसों और प्रार्थनाओं के कारण दया भाव से चुपचाप उसको जबरदस्ती चूमा-चाटी कर लेने देता था।

फिर भी लियूबा, जिसमें आराम करने से जान आने लगी थी, कुछ ही दिनों में उसी तरह खिल उठी जिस तरह मुर्दाई हुई कली बहुत-सा पानी मिलने पर खिल उठती है। उसके कोमल चेहरे से धब्बे और डरी हुई पिडुकी की-नी परेशानी और आँखों के चारों तरफ की कालिमा

गायब हो गई और उसका चेहरा चमकने लगा। उसके शरीर में ताकत आने लगी और वह भरने लगा। उसके होंठ लाल होने लगे। चूँ कि लिखोनिन उसको रोज देखता था, अतएव उसका ध्यान न तो स्वयं ही इन बातों की तरफ़ गया और न उसने लोगों की उस बधाई पर विश्वास किया जो वह लियूबा को उसकी इस शारीरिक उन्नति पर देते थे। वह अपने मन में सोचता, 'यह सब इन लोगों का मजाक है।'

घर गृहस्थी के काम में लियूबा साधारण से भी खराब निकली। वह थोड़ा बहुत खराब खाना पका लेती थी जिसका खाना मुश्किल होता था। लिखोनिन की मदद से उसने चाय बनाना सीख लिया, मगर इससे अधिक खाना बनाना वह न सीख पाई। हाँ, उसे मकान के फ़र्श धोना बड़ा अच्छा लगता था। यह काम उसने दिन में इतनी बार और इतने उत्साह से करना शुरू किया कि तमाम घर में शीघ्र ही सील हो गई और मच्छर भिनभिनाने लगे।

लिखोनिन ने अखबार में एक बुनाई की मशीन का इश्तहार पढ़ा। वह उसे बहुत पसन्द आया। अतएव उसने एक बुनाई की मशीन लियूबा के लिए किशतों पर खरीद ली। इस मशीन पर काम करना—जिस पर काम करके इश्तहार के मुताबिक़ तीन रुपया रोज़ पैदा किया जा सकता था—इतना सहल निकला कि उसको लिखोनिन, सोलोवीव और निजारज़े ने चन्द घण्टों में सीखकर एक जोड़ी मज़बूत परन्तु ऐसे बड़े-बड़े मोज़ों को बुन डाला जिसमें कुम्भकर्ण के पाँव भी आसानी से चले जा सकते थे; परन्तु लियूबा उस मशीन पर काम करना न सीख सकी! ज़रा-ज़रा-सी दिक्कत पर उसे इन मदों की मदद की ज़रूरत होती थी, मगर उसने कपड़े के नकली फूल बनाना बड़ी जल्दी सीख लिया और सिमानोवस्की की राय के विरुद्ध भी बड़े सुन्दर और अच्छे फूल बनाने लगी। यहाँ तक कि महीने भर में ही टोप बेचनेवाले

उसका माल खरीदने लगे। बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि उसने इस काम को जाननेवाले एक होशियार आदमी से इस काम के सिर्फ़ दो पाठ ही सीखे थे। बाक़ी उसने किताबों में बने फूल देख-देखकर अपने आप ही बनाना शुरू कर दिया था। एक सप्ताह में एक रुपये से अधिक के फूल वह नहीं बना पाती थी, मगर अपनी कमाई के इस एक रुपये पर उसे बड़ा अभिमान होता था। पहिले आठ आने जो उसने फूल बनाकर कमाये उनसे उसने लिखोनिन के लिए एक सिगरेट पीने की नली खरीदी।

कई वर्ष बाद लिखोनिन ने अपनी अन्तरात्मा से यह बात पश्चात्ताप और दुःख के साथ कबूल की कि उसकी ज़िन्दगी के ये दिन उसके विश्वविद्यालय और वकालत के सारे दिनों से अधिक शान्ति-पूर्ण और आराम के थे। भोड़ी-भाड़ी और सीधी-सादी परन्तु शायद मूर्ख लियूबा में कोई ऐसी बात थी जिससे वह घर में अपने चारों ओर आनन्द और आराम का वातावरण उत्पन्न करती थी। उसके लिखोनिन के यहाँ रहने के कारण लिखोनिन का घर लिखोनिन के दोस्तों, बन्धुओं और दूसरे तमाम विद्यार्थियों के लिए, जो बेचारे किसी तरह ज़िन्दगी से झगड़ते हुए अपने दिन काटते थे, आराम और शान्ति का केन्द्र बन गया जहाँ उनको आकर ऐसा लगता था मानों वे अपने घर में ही हों। लिखोनिन तब कृतज्ञता-पूर्ण दुःख के साथ लियूबा के उस शान्ति-पूर्ण और मौन चेहरे की याद करने लगा जो शाम को, दिन भर की बहस और झगड़ों के बाद, सेमोवार के पास बैठकर सब दोस्तों को चाय पिलाते हुए, उसका होता था। लियूबा से अलग हो जाने के कुछ ही दिन बाद लिखोनिन के उसके प्रति सारे खराब, द्वेष-पूर्ण और क्रूर विचार खत्म हो गये थे; मगर ऐसा अक्सर होता है।

लियूबा की शिक्षा का काम बड़ा कठिन हो गया, तमाम स्वयं-शिक्षक, जिन्होंने उसे शिक्षित बनाने का बीड़ा उठाया था, अलग-

अलग और एक साथ शिक्षा का उद्देश आन्तरिक विकास बताते थे ; मगर लियूबा को सिखाते समय वे उसके दिमाग में उन तमाम चीजों को ठूँसने की कोशिश करते थे जिनको सीखना वे स्वयं ज़रूरी समझते थे । इसलिए वे उन स्वाभाविक कठिनाइयों से अपना सिर मारने लगे जिनकी चिन्ता न करने से कोई हानि नहीं होती ।

मसलन लिखोनिन लियूबा का गिनती का तरीका भोड़ा और गलत समझता था क्योंकि वह इकड़ी, दुकड़ी, तिकड़ी और चौकड़ी में गिनती करती थी । मसलन बारह को लियूबा दो तिकड़ी की एक दुकड़ी अथवा उन्नीस को तीन पचकड़ी और दो दुकड़ी कहती थी ; मगर इस तरह वह सौ तक बड़ी जल्दी-जल्दी गिन सकती थी । उससे आगे न तो कभी उसे जाने की हिम्मत होती थी और न उसकी उसे कोई ज़रूरत ही पड़ती थी । लिखोनिन ने व्यर्थ में उसे बाकायदा गिनती सिखाने में अपना मराज खपाना शुरू किया, मगर उसका नतीजा कुछ न निकला । वह उस पर गुस्सा करता और चिल्लाता और वह आश्चर्य से मुँह बाकर और आँखों में आँसू भरकर उसकी तरफ़ चपचाप घूरती । जोड़ और गुणा न जाने क्योंकि उसे बहुत जल्द आ गया, मगर घटाना और भाग देना उसके लिए पहाड़ हो गया । फिर भी कठिन से कठिन जबानी पहेलियाँ वह बड़ी आसानी और शीघ्रता से सुलझा देती थी और उसे ऐसी बहुत-सी ग्रामीण पहेलियाँ स्वयं भी याद थीं । भूगोल में उसे कोई रस नहीं था । सड़क, बाग़ या घर के कमरे में वह चारों दिशाएँ ऐसी आसानी से बता देती थी जैसी कि लिखोनिन भी नहीं बता पाता था क्योंकि किसान का खून उसकी रगों में था . मगर पृथ्वी की गोलाई अथवा क्षितिज उसकी समझ में नहीं आये । जब उसको बताया गया कि पृथ्वी आकाश में घूमती है तो वह हँसने लगी । भूगोल के नक्शों के केवल रङ्ग ही उसकी समझ में आते थे, मगर नक्शों में बने हुए विभिन्न आकार उसने सही-सही और जल्दी याद कर लिये ।

‘इटली कहाँ है ?’ लिखोनिन उससे पूछता, यह है बूट सा’ लियूबा तुरन्त इटली पर उङ्गली रख देती। ‘और स्वीडन और नार्वे ?’ ‘यह कुत्ता जो छत से कूद रहा है।’ ‘और बाल्टिक सागर ?’ ‘अपने घुटनों पर खड़ी होनेवाली विधवा यह है।’ और ‘काला सागर ?’ ‘यह है जूता।’ ‘स्पेन ?’ ‘यह है मोटा टोपीवाला !’... इत्यादि-इत्यादि। इसी तरह इतिहास की शिक्षा का भी हाल रहा। लिखोनिन की समझ में यह नहीं आया कि लियूबा की बाल आत्मा को क्रिस्ते-कहानियाँ अधिक प्रिय होने से वह उसे इतिहास को रस-पूर्ण और वीरता की कहानियों में सिखाता तो वह आसानी से सीख सकती थी ; मगर उसे स्कूल के छोकरो को पढ़ा-पढ़ाकर इस्तहानों के जिए तैयार करने की आदत पड़ी हुई थी, इसलिए वह लियूबा का दिमाग इतिहास की तारीखों और नामों से भरने की कोशिश करने लगा। इसके अतिरिक्त लिखोनिन को पढ़ाने में म्ब्र और संयम भी कम था और बड़ी जल्दी गुस्सा आ जाता था। वह बहुत जल्द उससे थक जाता था और अस्पष्ट—जो कि दिन पर दिन बढ़ रही थी—घृणा, उस छोकरी के प्रति जो उसके जीवन पर एकाएक आच्छादित हो गई थी, पाठ पढ़ाते समय अक्सर बेजा तौर पर फूट पड़ती थी।

निजारज़े को सिखाने में सबसे अधिक सफलता मिली। उसका गिटार^१ और मैन्डोलीन^२ हमेशा खाने के कमरे में रेशमी फीतों से खूटियों पर लटकते रहते थे। मैन्डोलीन से लियूबा को गिटार अधिक पसन्द था। निजारज़े के इन लोगों के यहाँ आने पर—वह हफ्ते में तीन-चार बार आता था—लियूबा खुद उठकर खूँटी पर से गिटार उतारती और उसे रुमाल से झाड़-पोंछकर निजारज़े के हाथ में दे देती। वह कुछ देर तक गिटार के स्वर ठीक करता और फिर खाँसकर अपना गला साफ़ करता और एक पैर

१. २. सितार और सारङ्गी की तरह बाजों के नाम।

दूसरे पर रखकर, लापरवाही से कुरसी की पीठ पर टिककर, कुछ-कुछ भराई हुई परन्तु मीठी आवाज़ से गाना शुरू कर देता। गाते-गाते वह अपने गाने पर स्वयं मुग्ध होकर बेहोश हो जाने की नकल करता। आँखें मूँदकर सिर हिलाता और प्रेमपूर्ण गीत के वाक्यों या ऊँची-नीची तानों के समय दाहिना हाथ गिटार के तारों से एकाएक हटाकर पत्थर की तरह सुन्न हो जाता और एक क्षण तक लियूबा की आँखों से अपनी मीठी, गीली और नम्र आँखें मिलाकर घूरता। उसे बहुत से प्रेम के और पुरानी चाल के लोकगीत याद थे जो लियूबा को बहुत पसन्द आते थे। शाहज़ादे को बहुत से मज़ाकिया दोहे भी मालूम थे जो सब एक ही धुन में गाये जाते थे। लियूबा इन दोहों को सुनकर हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती थी—यहाँ तक कि हँसते-हँसते उमका पेट दुखने लगता था और आँखों में आँसू आ जाते थे और उमको अपनी हँसी बन्द करना असम्भव हो जाता था। जोश में भरकर वह भी निज़ारज़े के साथ स्वर मिलाकर गा उठती थी और उन दोनों का स्वर मिलकर बड़ा अच्छा हो जाता था। धीरे-धीरे जब शाहज़ादे से उमकी काफ़ी जान-पहिचान हो गई तब वह और शाहज़ादा, दोनों मिलकर, अक्सर साथ-साथ गाने लगे। ईश्वर की कृपा से लियूबा का गला बड़ा अच्छा था और उसके व्यभिचारी जीवन से भी उमकी आवाज़ अभी तक खराब नहीं हुई थी। धीरे-धीरे ऐसा होने लगा कि लियूबा शाहज़ादे से गाने के लिए प्रार्थना नहीं करती थी बल्कि शाहज़ादा उमसे कोई सुन्दर लोकगीत गाने का आग्रह करता जो कि उम बहुत से आते थे और वह अपनी कुहनियाँ मेज़ पर टेककर और उन पर अपना सिर उठाकर, किसान औरतों की तरह झिझकती और हिचकती हुई भीठे-भीठे गीत सुनाती।

गीत के आखिरी शब्द शाहज़ादा भी उसके साथ गाने लगता। शाहज़ादा बिछुड़े हुए प्रेमी की तरह, अपना सिर हिलाता हुआ एक

तरफ को गिरा लेता और वे दोनों अपनी तानें उठाकर गिटार की तानों से ऐसी मिला देते कि फिर गिरने में न तो दोनों की गूँज में कोई भेद रहता और न धीरे-धीरे उनके हवा में मिल जाने से यही पता चलता कि कब स्वर खत्म हुए और शान्ति शुरू हुई ।

मगर शाहजादे के प्रदेश के सबके प्रिय महाकवि रूस्तेवेली की कवितायें लियूबा को कभी पसन्द न आ सकीं, उन कविताओं का सौन्दर्य जार्जियन भाषा के चुने हुए शब्दों के स्वरों में था ; मगर उन शब्दों को बकरे की आवाज़ की तरह अपने गले से जैसे ही शाहजादा निकालना शुरू करता वैसे ही लियूबा दबी हुई हँसी से काँपने लगती और फिर कुछ ही क्षण में अपने आपको न रोक सकने के कारण ठट्टे लगाती हुई हँसी से लोटने लगती । निज़ारज़े क्रोध में भरकर रूस्तेवेली की कविताओं की किताब पटककर बन्द कर देता और लियूबा को खच्चर और जूँट कह कहकर कोसता हुआ कहता, 'भैसों के आगे बीन बजाने से कोई लाभ नहीं होता ।' मगर फिर उन दोनों की आपस में शीघ्र ही सुलह हो जाती ।

कभी-कभी निज़ारज़े शैतानी में भरकर नाटक भी करता । वह लियूबा को अपने सीने से लगा लेने का बहाना करता हुआ, अपनी आँखें स्नेह में डुबोकर उसकी तरफ़ लुढ़काता और हावभाव दिखाता हुआ, प्रेम से जलता हुआ, फुसकारता, 'मेरी रूह ! अल्लाह के बगीचे का सबसे बेहतरीन गुलाब ! तेरे होठों में शहद और दूध भरा है और तेरी सासों से शामी कबाब की खुशबू आती है । मुझे अपने होठों का एक प्याला अमृत दे दे ! ज़ालिम ! मुझे तबाह न कर !'

लियूबा उसके इस नाटक पर हँसती हुई गुस्सा दिखाती और उसके हाथों को पीटती हुई कहती, 'मैं लिखोनिन से तुम्हारी शिकायत करूँगी !'

'बाह ! खूब कहा !' निज़ारज़े अपने हाथ फैलाकर कहता, 'लिखोनिन से क्या शिकायत करोगी ! वह तो मेरा दोस्त, मेरा भाई, मेरा

दिली दोस्त है ! मगर उसने शायद 'लोफे' नहीं देखा है ! तुम उत्तरी-लोग 'लोफे' को क्या जानो ! हम जार्जियन ही उसे अच्छी तरह जानते हैं ! देखो लियूब्का, 'लोफे' ऐसा होता है।' यह कहकर वह घूँसे तानकर, आगे की तरफ़ शरीर झुकाकर, ऐसी भयङ्कर आँखें घुमाता और दाँत पीसता हुआ, दहाड़ता कि लियूब्का बच्चों की तरह डरने लगती और—यद्यपि वह जानती थी कि निजारज़े मज़ाक कर रहा है—डरकर वहाँ से दूसरे कमरे को भागने लगती ।

मगर इस छोकरे को, जो कि हर जगह और हर तरह की स्त्रियों से गली-कूचे प्रेम करता फिरता था, अपने माता-पिता से एक प्रकार की नैतिक शिक्षा मिली थी जिसके अनुसार मित्र की स्त्री उसके लिए पवित्र थी और शायद वह यह भी समझता था—पूर्वी देशों के लोगों को अपने भोलेपन के साथ-साथ ऐसी समझ पश्चिमी लोगों से अधिक होती है—कि एक बार भी लियूब्का से छिप कर प्रेम कर लेने के बाद उसको फिर इस घर में यह घरेलू आनन्द की संध्याएँ जिनका वह अब आदी सा हो चला था, गुज़ारना असम्भव हो जायगा । उसकी यूनीवर्सिटी भर में लगभग सभी से अच्छी जान पहिचान थी, मगर फिर भी वह इस शहर में और इस प्रदेश में, जिसको वह अभी तक अच्छी तरह नहीं समझता था, अपने आपको बड़ा अकेला पाता था ।

सोलोवीव को लियूब्का के पढ़ाने का काम सबसे अधिक भाया । यह विशाल, बलवान और लापरवाह आदमी, आप से आप, बेसमझे-बूझे, स्त्री-जादू के प्रभाव में आ रहा था—जो जादू अक्सर भद्दी, कठोर और चिड़चिड़ी स्त्रियाँ तक मदों पर डाला करती हैं । सोलोवीव पर इस जादू ने यहाँ तक असर किया कि विद्यार्थी हुक्म चलाने लगा और शिक्षक हुक्म बजाने लगा । लियूब्का की आत्मा भोड़ी परन्तु ताज़ी, गहरी और मौलिक होने के कारण वह दूसरों के कहे पर न चलकर खुद ही नये-नये रास्ते ढूँढ़कर उन पर चलना चाहती थी । मसलन,

जैसा बहुत से बच्चे करते हैं, उसने पढ़ना सीखने से पहले लिखना सीख लिया। वैसे तो वह स्वभाव से नम्र और आज्ञाकारिणी थी परन्तु एक बात के न सीखने में उसके स्वभाव ने बड़ा हठ दिखाया। वह पढ़ने में व्यंजन और स्वर को मिलाकर कभी न पढ़ पाती गोकि लिखने में वह दोनों को मिलाकर आसानी से लिख देती। उसे लिखने में बड़ा मज़ा आता था गोकि पढ़ना-लिखना शुरू करनेवाले विद्यार्थी आमतौर पर लिखना पसन्द नहीं करते हैं। वह कागज़ पर बिल्कुल झुककर, थककर हाँफती हुई, मानो वह कागज़ पर से फूँक-फूँककर अदृश्य खाक उड़ाती हो, अपने होंठ चाटती और कभी इस गाल को और कभी उसको, अपनी ज़बान से फुलाकर बाहर को निकालती। सोलोवीव उसको मना नहीं करता था। जिस तरह उसका जी चाहता उसे सीखने देता। डेढ़ महीने में ही इस विशाल, लम्बे-चौड़े शरीरवाले मनुष्य की आत्मा इस कमज़ोर और क्षणिक स्त्री के स्नेह-बन्धन में पड़ गई, मगर उसका स्नेह इस स्त्री के लिए समझदारी का, अजीब-सा, सहृदयता का, कुछ-कुछ आश्चर्यमिश्रित ऐसा था जैसा कि एक कृपालु हाथी का नदी में डूबती हुई चिड़िया पर होता है।

पढ़ना दोनों ही को अच्छा लगता था, मगर कौन-सी किताब पढ़ा जाय कौन-सी नहीं, इसका निश्चय लियून्का अपनी इच्छानुसार ही करती थी। सोलोवीव तो केवल पढ़ने के उतार-चढ़ाव में और लहरों और मौजों में उसका साथ देता था; मसलन लियून्का को डौनकि-कज़ोट का क्रिस्ता पसन्द नहीं आया। वह उसको सुनते-सुनते थककर ऊब उठती, मगर गैबिन्सनक्रूसो का क्रिस्ता उसे बड़ा अच्छा लगता और जब वह लौटकर अपने नाते रिश्तेदारों से मिलता तो उसका हाल पढ़ने हुए वह रोने लगती। उसे अंग्रेजी लेखक डिकेन्स के हास्यसंपूर्ण क्रिस्ते भी अच्छे लगते परन्तु अंग्रेजी तरीक़े और रिवाज उसकी समझ में न आते। रूस के प्रख्यात लेखक चेखोव

की कहानियाँ उसने कई बार पढ़ीं और उनका रचना-सौन्दर्य और दुःख उसने अच्छी तरह समझ लिया। बालकों की पुस्तकों की कहानियाँ उसको ऐसी अच्छी लगतीं, ऐसा प्रभावित करती कि उसका चेहरा देखते ही बनता था। एक बार सोलोवीव ने चेखोव की 'दौरा' नाम की कहानी उसे पढ़कर सुनाई जिसमें एक विद्यार्थी पहली बार चकले में जाता है और दूसरे दिन ऐसा पश्चात्ताप से दुःखी होता है कि उसे अपने पाप पर आत्मग्लानि और अपार दुःख का एक दौरा-सा हो जाता है। सोलोवीव को इस कहानी से लियूबका पर जो असर हुआ उसकी स्वप्न में भी आशा नहीं थी। वह रो-रोकर, हाथ मलती हुई, बार-बार चिल्लाकर पूछती थी, हे भगवान् ! इस लेखक को इन बातों का पता कहाँ से चला होगा ! सचमुच बिल्कुल ऐसा ही होता है !'

एक बार वह 'मेनौन लेकाट और वीर ग्रेन्स का इतिहास' नाम की पुस्तक लाया जो फ्रान्सीसी लेखक पादरी प्रेवोस्ट की लिखी हुई थी। इस सुन्दर पुस्तक को सोलोवीव स्वयं भी पहली ही बार पढ़ने बैठा था, परन्तु फिर भी लियूबका ने इस पुस्तक को सोलोवीव से कहीं अधिक अच्छी तरह समझा और पसन्द किया। इस पुस्तक में आमतौर पर उपन्यासों की तरह कोई झूट नहीं था। इस उपन्यास के भोले वर्णन, प्रेम की अधिकता और पुरानी चाल की लेखन शैली इत्यादि सोलोवीव को कोई खास पसन्द न आई, मगर लियूबा ने इस विचित्र अमर उपन्यास के रोचक, दुखी, हृदय विदारक और संसार की माननीय वस्तुओं के प्रति निरादरपूर्ण वर्णन अपने कानों, आँखों और भोले दिल से सुना।

'सैण्ट डैनिस के गिरजे में जाकर अपनी शादी करने का इरादा हम लोग बिल्कुल भूल गये, सोलोवीव अपना सुनहरे बालों-वाला सिर, जो लैम्प की रोशनी पड़ने से चमक रहा था, किताब पर

मुकाये हुए पढ़ रहा था, 'धार्मिक कानूनों को हमने भङ्ग कर डाला और विवाह का बिना विचार किये ही हम दोनों दम्पति भी बन गये।'।

'अरे, ये लोग क्या कर रहे हैं ? आप ही आप दम्पति भी बन गये ? बिना गिरजे में विवाह किये ?' लियूब्का ने परेशानी से, अपने नकली फूल बनाना बन्द करते हुए पूछा ।

'हाँ, हाँ ! क्या हुआ ? उन दोनों में प्रेम था—जैसा तुममें और लिखोनिन में है ।'

'मेरी बात छोड़ो, मेरी बात दूसरी है ! तुम जानते ही हो लिखोनिन मुझे कहाँ से लाया है, परन्तु यह लड़की तो एक भले घर की जवान और भोली लड़की है ! इसके साथ ऐसा करना इस आदमी के लिए बड़ा नीच काम है ! मैं सच कहती हूँ सोलीवीव, यह आदमी बाद में इस छोकरी को अवश्य छोड़ देगा ! बेचारी छोकरी ! अच्छा, अच्छा, आगे पढ़ो ।'

मगर कुछ ही पृष्ठ और पढ़ने के बाद लियूब्का उस वीर का पन्ना लेने लगी जिसको उसकी प्रेमिका ने धोखा दिया और उसके प्रति सच्ची साबित नहीं हुई ।

'मगर उस आदमी के छिप-छिपकर मेरे यहाँ आने से मैं बड़ा परेशान रहने लगा । मुझे मेनौन की छोटी छोटी खरीदारियों का भी खयाल आता जोकि हमारी हैसियत से बिल्कुल बाहर थी और किस नये प्रेमी की कृपा का फल लगती थीं । मगर मैं अपने मन में कहता, 'नहीं, नहीं, नहीं । ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता ! मेनौन मुझे कभी धोखा न देगी ! वह अच्छी तरह जानती है कि मैं उसी के लिए जीता हूँ ! वह अच्छी तरह जानती है कि मैं उस पर जी-जान से निछावर हूँ ।'

'अरे भोले मूर्ख ! अरे मूर्ख !' लियूब्का चिल्लाई, 'तुझे दीखता क्यों नहीं कि वह उस अमीर आदमी के चङ्गल में है ! कैसी नीच छोकरी थी !'

और जैसे-जैसे इस उपन्यास का किस्सा आगे बढ़ा लियूबा का उसमें रस अधिकाधिक होता गया। उसे इस बात की कोई शिकायत नहीं थी कि मेनोन अपने प्रियतम और भाई की मदद से अपने ऊपर कृपा करनेवालों की जेबें काटा करती थी, अथवा ग्रेक्स क्लब में बैठकर लोगों को ठगा करता था। मगर जब मेनोन छिपकर और ग्रेक्स को धोखा देकर, किसी दूसरे से प्रेम करती तब वह क्रोध में भर जाती और वीर ग्रेक्स की मुसीबतों पर दुःख के आँसू बहाने लगती। एक बार उसने पूछा :

‘प्यारे सोलोवीव, यह लेखक कौन था ?’

‘एक फ्रान्सीसी पादरी था।’

‘तो वह रूसी नहीं था ?’

‘नहीं, मैंने कहा न फ्रान्सीसी था। देखो न उसके वर्णन में भी शहरों और आदिमियों के तमाम नाम फ्रान्सीसी हैं।’

‘वह पादरी था, तुमने कहा ? तो उसको ऐसी तमाम बातों का पता कहाँ से लगा ?’

‘जानता था ! वह भी तो खुद एक दुनियादार आदमी, खुद पहले एक ज़मींदार था। पीछे से पादरी हो गया था। उसने अपनी ज़िन्दगी में काफी दुनिया देखी थी। बाद में उसने फिर पादरी का बाना छोड़ दिया था। देखो, उसके बारे में किताब के अग्रपृष्ठ पर सब कुछ लिखा है।’

यह कहकर उसने पादरी प्रीवोस्ट की जीवनी का हाल पढ़कर लियूबा को सुनाया। लियूबा ने उसका सारा हाल, मिर हिलाते हुए, बड़े गौर से सुना और जहाँ-जहाँ कोई बात उसकी समझ में ठीक-ठीक न आई सोलोवीव से पूछती गई। अन्त में जब उसने पढ़ना खत्म किया तब वह कहने लगी :

‘अच्छा तो यह पादरी था। बड़ा अच्छा किस्सा ! इसने लिखा है।

न जाने यह छोकरी इतनी नीच क्यों थी ! वह तो उसे जी जान से चाहता था, मगर वह न जाने क्यों उसे हमेशा धोखा ही देती रहती थी !'

‘खैर लियूबा, क्या किया जा सकता है ? वह भी उसे प्यार करती थी, परन्तु वह चंचल स्वभाव की थोथली स्त्री थी—उसे अपने चीथड़ों, बोड़े और हीरे जवाहरातों की ही अधिक फिक्र रहती थी ।’

लियूबा ने क्रोध में भरकर अपने एक हाथ पर दूसरा हाथ मारा और कहने लगी :

‘मैं होती तो उसको भुरकुस बना डालती ! नीच कहीं की ! किसी मर्द पर स्नेह होता है तो उसकी हर एक चीज़ पर स्नेह होता है । वह जेल जाय तो उसके साथ स्त्री को भी जेल जाना चाहिये । वह चोरी करे तो उसकी उसमें मदद करनी चाहिये । वह भिखारी बनकर भीख माँगे तो उसके साथ झोली डालकर भीख माँगनी चाहिये । प्रेमी को कौन-सी बात असम्भव है—प्रेम और रोटी का एक टुकड़ा जीवन के लिए काफी है । बड़ी नीच स्त्री थी ! मैं इस आदमी की जगह पर होती तो उसे अवश्य छोड़ देती ; या रोने के बजाय उस छिनाल को पकड़कर ऐसा ठोंकती कि वह फिर कभी न भूलती !’

उपन्यास का अन्त उसे पूरी तरह सुनना कठिन हो गया । सुनते-सुनते वह बीच में ऐसा फूट-फूटकर रोने लगती कि सोलोवीव को उपन्यास पढ़ना ही कुछ देर के लिए बन्द कर देना पड़ता, अतएव उपन्यास का आखिरी अध्याय चार बार में पढ़ा जा सका ।

प्रेमियों के दुःखों की कहानी, उनके जेल में पड़ने, मेनौन के ज़बर-दस्ती अमरीका भेजे जाने, ग्रेक्स के उसके पीछे-पीछे जाने के आत्म-त्याग की कहानी सुनकर वह ऐसी भौंचक्की-सी हो गई कि उसके मुँह से शब्द निकलने तक बन्द हो गये । अन्त में मरुभूमि में मेनौन की शान्ति और बुन्दर मृत्यु का हाल सुनकर वह स्तब्ध, सीने पर हाथ रखे, रोशनी

की तरफ़ एकटक देखने लगी और उसकी घूरती हुई आँखों से आँसुओं की झड़ी, मेज पर टपटप-टपटप गिरने लगी। मगर फिर वीर ग्रेक्स ने दो दिन तक, मेनैन की लाश के पास पड़े रहने के बाद, जब अपनी तलवार से उसकी कब्र खोदना शुरू किया, तब लियूबा इस तरह सिसकियाँ भरने लगी कि सोलोवीव को घबराकर उसके लिए पानी लेने के लिए दौड़ना पड़ा, मगर कुछ-कुछ शान्ति होने पर भी बड़ी देर तक वह सिसकती ही रही और फूले हुए होठों को लटकाये बड़-बड़ाती रही, 'बेचारों की ज़िन्दगी बड़ी मुसीबत की रही ! कैसे अभाग्य थे ! प्यारे सोलोवीव, हमेशा ऐसा ही होता है कि जब कभी एक मनुष्य और स्त्री सचमुच एक दूसरे को स्नेह करने लगते हैं, जैसा कि इन दोनों का हुआ, तभी ईश्वर उनके सिर पर कोई आफत का पहाड़ गिराता है ! क्यों ? ऐसा क्यों होता है, बताओ ।'

सत्रहवाँ अध्याय

मगर लियूबा की आत्मा और बुद्धि को विचित्र ढङ्ग से शिक्षित बनाने के लिए उस पर जो बुद्धिमत्ता की सुइयाँ गड़ाई जा रही थीं उनसे उसे जार्जियन और सोलोवीव के वर्ताव से कुछ चैन मिलता था त लिखोनिन उसे शिक्षा देने में जो सख्ती करता था उसको वह उसके प्रति अपने सच्चे और अथाह प्रेम के कारण उसी प्रकार क्षमा कर देती थी जिम प्रकार मार-गालियों अथवा उसके और किसी जुर्म को वह क्षमा कर देने के लिए तैयार थी, मगर सिमानोवस्की का पढ़ाना उसे असह्य और अपने ऊपर बिल्कुल जुल्म और भारी बोझ की तरह लगता था। वह बड़ी सख्ती से उसे बिना नागा रोज़ इस तरह पढ़ाने आता था मानो वह उससे किसी पिछले जन्म का बदला निकाल रहा हो।

वह अपने अटल विचारों, अपने लहजे में भरे हुए आत्मविश्वास और विद्वत्तापूर्ण कहने के ढंग से बेचारी लियूबा का उसी तरह दिल बैठाने लगता था जिस तरह वह यूनीवर्सिटी के विद्यार्थियों की आम-समाओं में व्याख्यान देकर नये आनेवाले विद्यार्थियों पर अपना

रोब गाँठ लिया करता था। सभाओं में ज़बरदस्त व्याख्यानदाता, विद्यार्थियों के खाने-पीने के प्रबन्धों में सबसे आगे, अध्यापकों के व्याख्यानों को लिखने इत्यादि और छपाने के प्रबन्ध में आगे, अपनी कक्षा का मॉनीटर और अन्त में विद्यार्थियों के फण्ड का संचालक और प्रबन्धक था। वह उन लोगों में से था जो अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद राजनैतिक दलों के नेता होते हैं और भोले-भाले लोगों के भाग्य-विधाता बनकर, शोरोगुल मचाकर देशभर के लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचते हैं फिर अपने त्याग की दुहाई दे देकर अपनी वकालत बढ़ा लेते हैं, फिर बुद्धिमान बनकर आराम से ज़िन्दगी गुज़ारने लगते हैं जिससे उनके पेट बड़ जाते हैं और वे ज़िगर और पेट की बीमारियों से परेशान रहते हैं और दुनिया भर से असन्तोष प्रगट करते हुए कहा करते हैं 'लोग हमें नहीं समझते !' लोगों में अब आदर्शों की कमी और खुदशरज़ी बढ़ती जाती है ! अपने घरवालों से ऐसे लोग बड़ा स्वेच्छाचारी बर्ताव करते हैं और अक्सर सूदखोरी भी करने लगते हैं।

सिमानोवस्की के दिमाग में लियूबा को शिक्षित करने का तरीका स्पष्ट था। जो कुछ भी उसके दिमाग में आता था वह हमेशा स्पष्ट ही हुआ करता था ! वह पहले लियूबा के लिए रसायन और विज्ञान में रस उत्पन्न कराना चाहता था।

'स्त्री का भोला-भोला दिमाग' उसने सोचा 'रसायन और विज्ञान के करिश्मे देखकर दंग हो जायगा, जिससे उसके दिमाग पर मेरा प्रभाव जम जायगा और मैं उसके दिमाग को विश्वज्ञान के उन मुख्य तत्वों की तरफ़ ले जा सकूँगा जिनको जानकर और समझकर उसके दिमाग से ग़लतफहमियाँ निकल जायँगी और वह दुनिया को समझने लगेगी।'।

अतएव उसने लियूबा को ऐसी चीज़ें दिखानी शुरू कीं जिन्हें देखकर उसे आश्चर्य हो और उसका दिमाग प्रभावित हो। एक बार वह

उसके लिए कागज़ के षट्टे का एक बड़ा-सा साँप बनाकर लाया जिसके अन्दर बारूद भरी थी और ऊपर मज़बूत डोरियाँ लपटी थीं। उसने इस साँप में दियासलाई लगाई और वह शोर मचाता हुआ, चटपटाता हुआ, धुँआ और दुर्गन्ध छोड़ता हुआ, देर तक, कमरे में उछलता फिरा। लियूबा को उसे देखकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ। वह बोली, 'अरे, यह तो आतिशबाज़ी का साँप है। मैंने इसे पहले भी देखा है। इससे मैं नहीं डर सकती!' मगर यह कहने के बाद उसने सिमानोवस्की से कमरे की खिड़की खोल देने की इजाज़त माँगी जिससे कमरे में भर जानेवाली बदबू और धुआँ बाहर निकल जाय।

इसके बाद सिमानोवस्की एक 'लीडन जार' बनाकर ले आया और उसमें विद्युत शक्ति को जमाया। लियूबा की उझली में धक्का लगा और वह धबकाकर चिल्लाई, 'अरे तुम्हपर शैतान की मार हो! कम्बख्त !'

फिर उसने रेत में मिले हुए परऑक्साइड ऑव मैंगनीज़ को गरम करके उसमें से एक जार भरकर ऑक्सीज़न निकाला। इसमें उसने गरम कार्क, कोयला और फासफ़ोरस डाला जो इतनी तेज़ी से चमकने लगे कि उसकी आखें चौंधियाकर बन्द हो गईं और दुखने लगीं, मगर वह खुशी से तालियाँ पीटती हुई चिल्लाई :

'मिस्टर प्रोफेसर, और ! मिहरबानी करके और कीजिये !' मगर फिर उसने एक खाली बोतल में हाइड्रोजन और ऑक्सीजन मिलाकर, बोतल को सावधानी के लिहाज से तौलिया से ढककर, जब लियूबा को पकड़ाकर, बोतल का मुँह आग के पास ले जाने को कहा तो उसके बैसा करने पर बोतल में से ऐसा धड़ाका हुआ मानो चार तोपें एक साथ दग गई हों—जिस धड़ाके से छत और दीवारों का पलस्तर तक निकलकर गिर पड़ा—तब लियूबा काँप उठी और बड़ी मुश्किल से फिर सँभलकर काँपते हुए होठों से गम्भीरतापूर्वक बोली :

‘माफ़ कीजिये ! अब मैं भली स्त्रियों की तरह घर-गृहस्थी में रहती हूँ, चकले में नहीं। अतएव मैं आप से प्रार्थना करूँगी कि आप मेरे घर में ठीक-ठीक व्यवहार करें। मैं समझती थी कि आप शिक्षित और शरीर आदमियों की तरह यहाँ आकर अच्छा व्यवहार करेंगे, मगर आप तो यहाँ ऐसी बेहूदा बातें करते हैं जिनके लिए जेल तक हो सकता है !’

बाद में लियूबा ने बहुत दिनों बाद बतलाया कि उसके एक विद्यार्थी दोस्त ने उसे एक बार एक बम बनाकर दिखलाया था।

शायद मिमानोवस्की, जो कि नौजवानों में बड़ा गम्भीर और प्रभावशाली आदमी समझा जाता था क्योंकि वहाँ उसे बातें ही बातें करनी होती थीं और जो कि एक जीवित आत्मा से व्यवहार के क्रियात्मक प्रयोग का मौका आते ही ऐसा मूर्खतापूर्ण व्यवहार करने लगा था, सचमुच में ही मूर्ख था, परन्तु वह अपने इस अद्वितीय गुण को छिपाने में बड़ा होशियार था !

विज्ञान के अध्ययन में असफल होने पर उसने दर्शनशास्त्र का अध्ययन शुरू कर दिया था। एक बार उसने ऐसी दृढ़ता से लियूबा से कहा कि परमात्मा नहीं है मानो उसका कहना बिल्कुल अखण्डनीय था। वह जोर देकर लियूबा से बोला, ‘पाँच मिनट में मैं अभी साबित कर सकता हूँ कि परमात्मा नहीं है।’ उसकी इस बात को सुनते ही लियूबा अपनी जगह से उछल पड़ी और दृढ़ता से बोली, ‘देखिये, मैं अधम वेश्या तो जरूर हूँ, मगर मैं परमात्मा के अस्तित्व में विश्वास रखती हूँ और इस बात को हरगिज पसन्द नहीं करूँगी कि आप परमात्मा के विरुद्ध मेरे सामने कुछ कहें। आप नहीं मानेंगे और अपनी वितण्डा मुझे सुनाने का हठ करेंगे तो मैं वसीलवसीलिश से आपकी शिकायत कर दूँगी।’

‘और मैं उससे यह भी कहूँगी’ उसने रुआसी आवाज से कहा, ‘कि आप मुझे सिखाते-पढ़ाते तो कुछ भी नहीं हैं, ऐसी ही खराब-खराब

और गन्दी बातें मुफ्तसे करते रहते हैं। मेरे घुटने पकड़ते हैं और बदतमीजी करते हैं।' यह कहकर लियूबा, जो कि आज तक सिमानोवस्की से शर्मा कर और दबकर बोला करती थी, उसके पास से हटकर दूर जा बैठी।

इस प्रकार की असफलताएँ होने पर भी वह लियूबा के दिल व दिमाग पर अपना असर डालने का प्रयत्न करता ही रहा। उसने लियूबा को डारविन का विकासवाद का सिद्धान्त समझाना शुरू किया। लियूबा उसको ध्यान से सुनती, मगर उसकी आँखों से एक प्रकार की बेसब्री-सी टपकती मानो वह उससे कहती, 'अरे, इसे कब खत्म करोगे?' वह मुँह पर रूमाल रखकर जमुहाई लेने लगती, मगर फिर दोषी की भाँति समझाने लगती, 'माफ़ कीजिये, मेरी तबियत कुछ ठीक नहीं है।' मार्क्स के सिद्धान्त उसे समझाने में भी सिमानोवस्की को सफलता नहीं मिली। वह ऊब-सी बैठी सिमानोवस्की से बड़े-बड़े आर्थिक शब्दों की व्याख्या सुनती जो उसे निरी खोखली और निरर्थक लगती थी, अतएव जब चुकन्दर का शोरवा उफनकर पतीली में से चूल्हे में गिरने लगता अथवा कोई द्वार खटखटाता तो वह बड़े उत्साह और खुशी से उठकर दौड़ती हुई जाती।

यह नहीं कहा जा सकता कि सिमानोवस्की स्त्रियों के साथ सफल नहीं होता था। उसका दृढ़ता और आत्मविश्वास से बोलने का ढङ्ग नौजवान, भोली-भाली, कुवाँरी छोकरियों के दिमाग पर हमेशा असर करता था। लम्बे सम्बन्धों से वह हमेशा बड़ी आसानी से अपना पीछा छुड़ा लेता था—या तो वह किसी बड़े ज़रूरी काम का बहाना बना देता था जिसके सामने घर-गृहस्थी का प्रेम हेय होता था; अथवा वह एक ऐसा असाधारण व्यक्ति बन जाता था जिसको जो चाहे सो करने का अधिकार होता है। लियूबा की मौन, अस्पष्ट, परन्तु दृढ़ इनकार से उसे चिढ़ और उत्तेजना होती थी। सब से अधिक उसे इस बात से

क्रोध होता था कि यह स्त्री, जोकि कलतक हर एक के लिए खुली थी, एक-एक दिन में कई-कई आदमियों से केवल दो रुपये के लिए प्रेम करने को तैयार थी, अब एकाएक इतनी पतिव्रता बनने लगी है ! आत्मा से बेहयाई की कालिमा और दिमाग से व्यभिचार की याद मुश्किल से जाया करती हैं ।

‘अजी नहीं !’ वह मनमें सोचता, ‘ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता ! बनती है ! अथवा मैं ठीक तरह से उसके दिल तक पहुँचने की कोशिश नहीं करता हूँ ।’

अतएव वह दिन पर दिन कड़ा, नुक़ताचीनी का, और सख़्ती का व्यवहार लियूबा से करने लगा । उसे अपने स्वभाव के अनुसार, बे-समझे-बूझे, अपने प्रभाव से दूसरों के दिलों और दिमागों पर अपना असर डालने की शक्ति पर विश्वास था, जो कि ज़ाहिर नहीं मालूम होता था ।

एक बार लियूबा ने लिखोनिन से उसकी इस प्रकार शिकायत की, ‘वह मुझसे बड़ा सख़्त व्यवहार करता है, वसील-वसीलीविश । मेरी समझ में जो कुछ भी वह सिखाता है बिल्कुल नहीं आता । मैं उससे कुछ भी सीखना नहीं चाहती ।’ किसी तरह लिखोनिन ने लियूबा को समझा-बुझाकर शान्त किया, मगर उसने सिमानोवस्की से उसके लियूबा के प्रति ऐसे व्यवहार का कारण पूछा । सिमानोवस्की ने ठण्डी तबियत से उसे उत्तर दिया, ‘जैसी आपकी इच्छा, जनाब ! अगर आपको या लियूबा को मेरा सिखाने का ढंग पसन्द नहीं है तो मैं इस काम से इस्तीफ़ा देने को तैयार हूँ । मेरी सारी कठिनाई यह है कि मैं लियूबा की शिक्षा को ठीक और नियमबद्ध करने की कोशिश करता हूँ । उसकी समझ में कोई चीज़ नहीं आती है तो मैं उसे उस चीज़ को कंठस्थ करने के लिए बाध्य करता हूँ । धीरे-धीरे यह बन्द हो जायगा, परन्तु यह अनिवार्य है । लिखोनिन याद करो हमको और तुमको

हिसाब के बाद बीजगणित सीखना कैसा कठिन लगता था। हम लोगों की समझ में यह आना कठिन हो गया था कि संख्याओं की जगह अक्षरों का प्रयोग क्योंकर हो सकता है ; उसी तरह हम लोगों की समझ में यह भी नहीं आता था कि व्याकरण सीखने की क्या ज़रूरत है—सीधी कहानियाँ और कविताएँ ही हमें लिखनी-पढ़नी क्यों नहीं सिखाई जाती ?

इसके बाद दूसरे दिन ही, लैम्प के पास बैठी हुई लियूबा के ऊपर मुका हुआ और उसकी छातियों और बगलों पर फुसकारता हुआ, सिमानोवस्की उससे कह रहा था, 'एक त्रिकोण बनाओ...हाँ, हाँ, इस तरह। इसके ऊपर लिखो 'प्रेम'। केवल 'प' अक्षर लिखो, और नीचे लिखो 'म' और 'स' अर्थात् मनुष्य और स्त्री। अतएव मनुष्य और स्त्री के प्रेम का यह त्रिकोण बना, समझीं।'।

इसके बाद देववाणी की तरह, अतर्क्य और गम्भीर, उसने उसे बहुत-सी प्रेम की बातें सुनाते हुए, एकाएक कहा, 'अतएव लियूबा, देखो। प्रेम की इच्छा भी मनुष्य को उसी प्रकार होती है जिस तरह खाने, पीने और श्वास लेने की ज़रूरत होती है।' यह कहकर उसने उसकी जाँघ घुटनों से बहुत ऊपर पकड़ कर जोर से दबाई। लियूबा ने घबराकर मगर उसे नाराज़ न करने के डर से धीरे-धीरे अपनी जाँघ उसके हाथों के नीचे से हटा ली।

'कहो, क्या तुम्हारी बहिन, मा या पति को यह बात बुरी लगेगी कि किसी कारण से तुमने अपने घर पर एक दिन खाना न खाकर किसी होटल में खा लिया ? यही प्रेम का भी हाल है। बिल्कुल वैसा ही ! प्रेम एक प्रकार की मानसिक भूख होती है जो कि शायद दूसरी भूखों से अधिक ज़बरदस्त होती है। मसलन इस समय मेरी इच्छा तुम्हारे लिए हो रही है। मैं तुम्हें अपनी स्त्री की तरह चाहता हूँ और तुम...'

‘बन्द करिये इस बकवास को, मिस्टर’ लियूबा ने उसकी बात काटते हुए कहा, ‘आप एक ही बात की धुन क्यों पूरे हुए हैं ? कोई दूसरी बात करिये । आप से मैं कितनी बार ‘न, न, न’ कर चुकी हूँ ! मुझे दीखता नहीं है आप क्या चाहते हैं ? मगर वसील वसीलिश के प्रति, जो मुझे उस नर्क से छुड़ाकर लाया है और मुझसे इतना प्रेम करता है, मैं कभी विश्वासघात न करूँगी...आपकी बेवकूफी की बातों से मुझे आप से बड़ी घृणा होने लगी है ।’

एक बार उसने, अपने मौखिक सिद्धान्तों के कारण, लियूबा को बड़ा कष्ट पहुँचाया । यूनीवर्सिटी में इस बात की काफी चर्चा हो रही थी कि लिखोनिन चकले से एक छोकरी को बचाकर ले आया है और आजकल उसकी नैतिक उन्नति करने में लगा हुआ है । यह खबर यूनीवर्सिटी में पढ़नेवाली विद्यार्थिनियों तक भी पहुँची जो दूसरे विद्यार्थियों से खूब मिला-जुला करती थीं । एक दिन सिमानोवस्की दो यूनीवर्सिटी की विद्यार्थिनियों को, जिनमें से एक इतिहास की विद्यार्थिनी और दूसरी साहित्य की और स्वयं कुछ-कुछ कवि और समालोचक भी थीं, लेकर, उन्हें लियूबा से मिलाने के लिए आया और उनका लियूबा से बड़ी गंभीरतापूर्वक, मूर्ख की तरह परिचय कराता हुआ, कभी उन दोनों की तरफ़ और कभी लियूबा की तरफ़ हाथ फैलाकर कहने लगा :

‘लीजिये कामरेड, यही हैं लियूबा ! करिये इनसे परिचय और तुमको लियूबा, ये साधु, विद्वान् और त्यागी रूसी युवतियाँ तुम्हारे नये जीवन में, हर तरह की सहायता पहुँचा सकेंगी ; और तुम कामरेडों इनको, जो उस अन्धकारपूर्ण नर्क से मुक्ति पाकर आई हैं, जिनमें हमारा समाज स्त्रियों को डालता है, अपनी छोटी बहिन समझकर हर तरह से, मुझे आशा है, सहायता पहुँचाने का प्रयत्न करोगी ।’

बिल्कुल यही शब्द तों उसने नहीं कहे, मगर लगभग इसी प्रकार की बातें उसने कहीं । लियूबा ने लज्जा से लाल होकर, भोंड़ी तरह से

हाथों की उँगलियाँ मोड़े-मोड़े उन दोनो, रङ्गीन पोशाकों पर पेटियाँ लगाई हुई, स्त्रियों से हाथ मिलाये ; उनकी चाय और मुरब्बों से खातिर की और उनके सिगरेट जल्दी से दियासलाई से सुलगाये ; परन्तु बार-बार उनके कहने पर भी वह उनके बराबर पर न बैठी। वह उनसे 'हाँ, न. अच्छा, जैसी आपकी मर्जी' ही कहती रही और उनमें से एक श्रीमतीजी का रूमाल जमीन पर गिरा तो वह उसे उठाने के लिए फौरन दौड़ पड़ी।

आगन्तुक स्त्रियों में से एक तगड़ी, लाल और मोटी आवाज की थी जिसका चेहरा सिर्फ़ दो बड़े-बड़े गालों का बना लगता था, जिनके बीच से ऊपर को उठी हुई, एक ऐसी नाक निकली हुई थी, जिसे देखकर हँसी आती थी। उसकी आँखें दो छोटे-छोटे सूखे हुए अंगूरों की तरह थीं जिनसे वह लियूबा को बार-बार सिर से पैर तक चुपचाप इस तरह घूर रही थी मानो वह उसे घृणा करती हो। 'क्या बात है ? मैंने इससे किसी आदमी को तो नहीं छीना है ?' लियूबा ने दोषी की तरह सोचा। दूसरी आगन्तुक स्त्री ऐसी विचारहीन थी कि उसने लियूबा से पहले-पहल—गोकि लियूबा के लिए शायद वह सौर्वी बार था—यही पूछना शुरू कर दिया कि वह वेश्या कैसे बनी। इस जोशीली, जवान, पीली, बड़ी सुन्दर और धूँधरवाले बालों की स्त्री ने, जो कि एक ऐसे लाड़ले बिल्ली के बच्चे की तरह दीखती थी जिसकी गर्दन पर बिल्ली का पँजा लग चुका हो, लियूबा से पूछा, 'कहो तो वह बदमाश...वह आदमी जिसने पहले पहल.. तुम मेरा मतलब समझ गई होगी...वह कौन था ?'

लियूबा के दिमाग में अपनी पूर्व सङ्गिनियों, जेनेका, टमारा इत्यादि की तस्वीरें चमक उठीं, जो कि आत्मभिमानी, वीर, चतुर और इन आगन्तुक छोरियों से कहीं बुद्धिमान थीं। लियूबा के मुँह से अचानक, जिसकी उसको भी स्वयं आशा न थी, निकला :

'बहुत-से थे। और सब ने एक साथ ही किया। मुझे याद नहीं

आता । कोल्का, मिटका, वोलोदका, सरेज्का, ट्रेश्का, पेटका, कुज्का, और गुश्का इत्यादि बहुत से एक गुट्ट में थे । मगर आपको यह जानने की क्यों चिन्ता हुई ?’

‘मैं...मैं...मैंने तुमसे इसलिए पूछा कि मेरे हृदय में तुम्हारे लिए सहानुभूति है ।’

‘मगर क्या तुम्हारा भी कोई प्रेमी है ?’

‘माफ़ कीजिये, मैं आपका मतलब नहीं समझी ! आप क्या कह रही हैं ? चलो यहाँ से चलें, हम लोगो को देर हो रही है ।’

‘आप क्या नहीं समझीं ! मैंने आपसे यह पूछा कि आप कभी किसी मर्द के साथ सोई हैं ?’

‘बन्धु सिमानोवस्की’, बिल्ली की बच्ची ने सख्ती से कहा, ‘मैं नहीं जानती थी कि आप मुझे ऐसे व्यक्ति के पास ला रहे हैं ! धन्यवाद ! आपने हमारे साथ अच्छा व्यवहार किया !’

लियूबा के लिए पहला कदम कठिन होता था । वह उस स्वभाव के लोगों में से थी जो बहुत कुछ बर्दाश्त करना जानते हैं, मगर जब वे फटते हैं तो एकदम फटते हैं । वह आम तौर पर शर्मीली और चुप रहने-वाली थी, परन्तु इस समय उसको पहिचानना मुश्किल हो गया था ।

‘लेकिन मैं जानती हूँ !’ वह क्रोध से चिल्लाकर बोली, ‘कि तुम भी वैसी ही हो जैसी मैं ! मगर तुम्हारे बाप हैं, मा है ; तुम्हारी रक्षा करने-वाले हैं ; ज़रूरत होती है तो तुम गर्भपात तक कराती हो—बहुत-सी कराती हैं । मगर तुम भी मेरी ही-सी परिस्थिति में होतीं, खाने के लिए कुछ न होता, नासमझ छोकरी होतीं, पढ़ना लिखना भी न आता होता, और कुत्तों की तरह मर्द तुम्हारे चारों तरफ़ लगे होते तो तुम्हारा भी वही हाल होता जो मेरा हुआ—तुम भी चकले की शरण लेतीं । एक गरीब छोकरी के सामने आकर इस तरह बनना तुम्हें शोभा नहीं देता—इतना इतराना अच्छा नहीं है; समझीं !’

सिमानोवस्की बड़ी परेशानी में पड़ गया और हास्यरस के पुराने नाटकों की तरह अपनी साथी छोकरियों को दिलासा देता और समझाता हुआ उन्हें लेकर वहाँ से चला गया ।

मगर अभी सिमानोवस्की को लियूबा के जीवन-नाटक में अपना आखिरी और सबसे शर्मनाक पार्ट खेलना बाकी रह गया था ।

लियूबा बहुत दिनों से लिखोनिन से कहती थी कि सिमानोवस्की का वहाँ आना अच्छा नहीं लगता है, मगर लिखोनिन उसकी बातों को स्त्रियों की व्यर्थ की बातें समझ कर कोई परवाह नहीं करता था क्योंकि सिमानोवस्की की खोखली, कल्पित, हवाई बातों का उसके हृदय पर बड़ा प्रभाव था । कुछ प्रभाव ऐसे होते हैं जिनसे निकलना आदमी को कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव हो जाता है । दूसरे लियूबा से विषय-भोग करना भी उसे बड़ा अखरता और एक बोझ की तरह लगने लगा था । अक्सर वह अपने मन में सोचता, 'यह मेरी ज़िंदगी बर्बाद किए डाल रही है । मैं एक साधारण आदमी की तरह मूर्ख होता जाता हूँ ! मैं कड़वे-मीठे और मूर्खतापूर्ण परमार्थ में धुला जा रहा हूँ । अन्त में इससे शायद शादी कर लूँगा और किसी दफ्तर में क्लर्क अथवा कहीं शिक्षक का काम करने लगूँगा और लोगों से घूस लेने लगूँगा और बैठ-बैठ गप्प लगाया करूँगा ! मेरे विचारों की शक्ति, जीवन के सौन्दर्य और मानवता के लिए प्रेम और उसके उत्थान के सारे स्वप्न हवा में ही रह जायेंगे ?' कभी-कभी वह अपने मन की बातें जोर-जोर से भी कह उठता और अपने सिर के बाल पकड़ कर खींचने लगता । अतएव लियूबा जब उससे शिकायतें करती तो वह उसकी शिकायतों की छान-बीन करके उन्हें समझने का प्रयत्न करने के बजाय नागाज़ होकर चिल्लाने और पैर पटकने लगता । बेचारी नम्र लियूबा सब से झुपचाप रसोई में चली जाती और वहाँ दिल भर रोती ।

अब वह बार-बार जब उससे और लियूबा से कोई झगडा होता

तो लियूबा से यह कहने लगा, 'मेरी प्यारी लियूबा, हम दोनों की एक दूसरे से निभ नहीं सकती। देखो, हम दोनों का स्वभाव भिन्न है। यह लो सौ रुपये। इन्हें लेकर तुम अपने गाँव लौट जाओ। तुम्हारे सगे-सम्बन्धी तुम्हारे लौटने पर खुश होंगे। वहाँ कुछ दिन रहकर देखो। मैं भी छः महीने बाद वहाँ तुमसे मिलने आऊँगा। तब तक तुम्हें वहाँ रहने से काफी आराम मिल जायगा और शहर में रहने से जो तुम में बुराईयाँ आ गई हैं वे भी जाती रहेंगी। तुम अपना नया जीवन अपने आप, बिना किसी की सहायता के, आत्माभिमान से शुरू कर सकोगी।'।

मगर उस स्त्री को, जो अपने जीवन में पहली बार प्रेम में पड़ी हो, और जो यह भी अपने मन में समझती हो कि यही उसका आखिरी प्रेम भी है, ऐसी बात समझाना मुश्किल है ! उसको अपने प्रेमी से अलग होने की ज़रूरत समझाना असम्भव है ! वह अक्लमन्दी की बातें पसन्द नहीं करती !

सिमानोवस्की की दृढ़ बातों और निश्चयों के आगे सदा सम्मान से सिर झुकानेवाले लिखोनिन की समझ में भी उसका लियूबा के प्रति सच्चा इरादा अच्छी तरह आ गया ; और अपने ऊपर से लियूबा का बोझ, जो उसे असह्य हो उठा था, उतार फेंकने की इच्छा से उसके मन में एक गन्दा विचार आता, 'सिमानोवस्की को यह पसन्द है और इसके लिए मैं सिमानोवस्की या और कोई तीसरा हो एक ही-सा है ! मैं सिमानोवस्की से सारी बातें खुलकर करूँगा और बन्धु की तरह उसके मार्ग से हट जाऊँगा। मगर यह मूर्ख नहीं मानेगी। शोरोगुल मचायेगी !'

अथवा वह सोचता, 'दोनों को एक साथ पाकर मैं दृढ़ता से शोर मचा दूँगा...और शरीफ बनकर...थोड़ा-सा रुपया फेंककर, छोड़कर चलता बनूँगा।'।

अक्सर वह अब कई-कई दिन तक बाहर रहता और घर नहीं लौटता। मगर फिर जब वह घर वापिस आता तो उससे लियूबा सैकड़ों प्रश्न पूछती, रोती, सिसकती और बेहोश होने लगती और वह उससे माफ़ी माँगता, उसे प्यार करता और अपने इरादे भूलकर फिर गिरता। और गिरने के बाद फिर उसे दुःख और पश्चात्ताप होता और वह उससे कहता, 'मैं कसम खाकर कहता हूँ कि फिर कभी यह कमज़ोरी न दिखाऊँगा। यह आखिरी बार है।'

लियूबा छिप-छिपकर देखती कि वह कहाँ जाता है। उसके पीछे-पीछे, छिपी-छिपी, उस घर के द्वार तक जाती जहाँ वह जाता और बाहर खड़ी, घण्टों तक, उसके निकलने की बाट देखती कि निकलने पर उसे फिड़केगी और सड़क पर ही रोवेगी। वह उसके खत चुराकर खोल लेती। मगर उसे खुद पढ़ना आता नहीं; और शाहज़ादे अथवा सोलोवीव से उन्हें पढ़ाकर सुनने की उसकी हिम्मत नहीं होती थी। अतएव वह अपनी अलमारी में उन्हें शक्कर, चाय और नीबू इत्यादि के साथ छिपाकर चुपचाप रख लेती थी। वह कभी-कभी क्रोध में भरकर लिखोनिन को आत्महत्या कर लेने की धमकियाँ भी देने लगी थी।

'भाड़ में जाय कम्बख्त!' लिखोनिन अपने नीच विचार सोचता हुआ मनमें कहता, 'चाहे इन दोनों में मित्रता के अतिरिक्त और कोई सम्बन्ध न भी हो! परन्तु मैं ऐसा नाटक रचूँगा...ऐसा दृश्य करूँगा।'

और वह मन ही मन सोचने लगता; मैं कहेँगा, 'अच्छा!... अच्छा! मैंने तुम्हें अपने घर की शरण दी और तुमने यह किया? ऐसी कृतघ्नता दिखाई!...और तुमने मेरे मित्र होते हुए भी मेरी सारी खुशी को मुझसे ही ले लेने का प्रयत्न किया!...अच्छा तो लो तुम दोनों साथ-साथ रहो! मैं अपना टूटा हुआ दिल लेकर यहाँ से जाता हूँ। मेरी ज़रूरत यहाँ नहीं है! मैं तुम लोगों के मार्ग में काटा नहीं होना चाहता इत्यादि, इत्यादि।'

और उसके ठीक यही स्वप्न, उसके यह छिपे हुए इरादे, उसके ऐसे क्षणिक, परन्तु वास्तव में नीच विचार जिनको लोग बाद में अपना पसन्द नहीं करते, अचानक पूरे हो गये। सोलोवीव लियूबा को पढ़ाने की बारी थी। उसको यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि लियूबा, बिना रुके या फिम्कके, अपने आप पूरा पाठ पढ़ गई, 'मिखी के पास एक अच्छा हल है। सिसोई के पास भी एक अच्छा सा हल है... एक चिड़िया.. एक भूला.. बच्चे ईश्वर को प्रेम करते हैं...' और इसके इनाम में सोलोवीव ने उसे एक सुन्दर वीरता की कहानी पढ़कर सुनाई जिसको सुनकर लियूबा उछलने लगी। मगर वह सोलोवीव को अपने विचार इस कहानी के सौन्दर्य के विषय में अच्छी तरह न बता पाई क्योंकि उसे एक ज़रूरी काम से जल्दी ही चला जाना पड़ा। द्वार में जाते हुए उसे सिमानोवस्की आता हुआ मिला। दोनों ने एक दूसरे को नमस्कार किया। मगर सिमानोवस्की को देखते ही लियूबा का मुँह टक आया। इस कठोर शिक्षक और भोड़े आदमी से लियूबा को असह्य घृणा होने लगी थी।

आज उसने इस विषय पर व्याख्यान झाड़ना शुरू किया कि 'मनुष्य के लिए कोई क़ायदे, क़ानून या नियम नहीं हैं; न उसके कोई अधिकार हैं, न कर्तव्य और न उसके लिए कोई अच्छाई या बुराई है। मनुष्य स्वयंभू और सर्वस्व है। वह किसी दूसरे पर अथवा किसी चीज़ पर निर्भर नहीं है। मनुष्य ईश्वर का अंश है और चाहे तो स्वयं ईश्वर हो सकता है।'।

इसके बाद वह, प्रेम क्या चीज़ है इस पर व्याख्यान देना चाहता था, परन्तु अफसोस है कि उसने बेसब्री से ज़रा जल्दी कर दी और लियूबा को अपने सीने से लगाकर उसे दबाने लगा। 'वह मेरे चुम्बन और आलिङ्गन से प्रेम में डूब जायगी और मेरी बात मान लेगी!' सिमानोवस्की ने अपने मन में सोचा था। अतएव उसने अपना मुँह

उसके होठों को चूमने के लिए मुकाया, परन्तु लियूवा ने एक चीख मारकर उसके मुँह पर थूक दिया। उसका सारा ऊपरी भला व्यवहार एकाएक ग़ायब हो गया।

‘निकल यहाँ से, बाजारू कुत्ता कहीं का ! सूअर, पाती, लुंगाडा ! नहीं तो अभी मैं तेरी थूथड़ी तोड़ दूँगी !’

चकले का सारा शब्दकोष उसे याद हो आया और वह उसे उसके ऊपर उगलने लगी। सिमानोवस्की का चश्मा नाक से उछलकर कहीं जा पड़ा और वह मुँह बनाये, आँखें मिचकाता हुआ, बड़बड़ाया, ‘मेरी-प्यारी ! तुम्हारा क्या बिगड़ जायगा... एक क्षण का आनन्द !... हम दोनो क्षण भर आनन्द में डूब जायेंगे !... किसी को कोई पता न चलेगा !... मेरी हो जाओ !’...

इसी वक़्त लिखोनिन कमरे में दाखिल हुआ।

उसकी अन्तरात्मा ने उससे यह तो अवश्य नहीं कहा कि वह नीचता करने पर उतारू हो जाय, परन्तु उसके मन में यह विचार आया कि उसका चेहरा गीला हो गया है और वह ऐसे शब्द कहने जा रहा है जो बड़े भयङ्कर होंगे।

उसने उदास मुख करके नाटक के अन्तिम दृश्य में ऐक्टर की तरह, दोनो हाथ गिराकर, और मुँह नीचा करके, काँपते हुए कहा : ‘मुझे कम से कम इसकी आशा नहीं थी ! लियूवा, तुमसे तो मैं क्या कहूँ ? तू तो जङ्गली है ही ! सिमानोवस्की, तुम्हारे लिए मेरे दिल में बड़ी इज्जत थी ! खैर, मैं अभी तक समझता हूँ कि तुम भले आदमी हो। कामदेव बड़ा ज़बर्दस्त होता है, आदमी की बुद्धि भ्रष्ट कर देता है। यह लो पचास रुपये मैं लियूवा के लिए छोड़ता हूँ। तुम मुझे यह रुपये बाद में लौटा दोगे इसमें मुझे ज़रा-सा भी सन्देह नहीं है। अब तुम इसके भाग्य-विधाता हो !... तुम बुद्धिमान्, दयावान और ईमानदार आदमी हो ! मैं--और मैं (“नीच और अधम हूँ” किमी

की आवाज़ उसके कानों में आई) — मैं अब यहाँ से जाता हूँ क्योंकि मेरे लिए यह दुःख असह्य है ।’

उसने रुपयों का बटुआ अपनी जेब में से निकाल कर जोर से मेज़ पर पटक दिया और मिर के बाल हाथों में पकड़कर कमरे में से निकल भागा । मगर द्वार पर पहुँचकर वह चिल्लाया, ‘तुम्हारा पासपोर्ट मेरे डेस्क में रखा है !’

अपना गिण्ड छुड़ाने के लिए यही रास्ता उसे ठीक जँचा । जैसा वह सोचता था ठीक वैसा ही नाटक का अन्त हो गया ।
